

जीव के चार भेद-१ नारकी, २ तिर्यञ्च, ३ मनुष्य, ४ देव, अथवा १ चक्षु दर्शनी, २ अचक्षु दर्शनी, ३ अवधि दर्शनी, ४ केवल दर्शनी ।

जीव के पांच भेद-१ एकेन्द्रिय, २ द्वेन्द्रिय, ३ त्रेन्द्रिय, ४ चारिन्द्रिय, ५ पंचेन्द्रिय, अथवा १ संयोगी, २ मन योगी, ३ वचन योगी, ४ काय योगी, ५ अयोगी ।

जीव के छः भेद-१ पृथ्वी काय, २ अपकाय, ३ तेजस्ककाय, ४ वायु काय, ५ वनस्पतिकाय, ६ त्रस काय, अथवा १ सकपायी, २ क्रोध कपायी, ३ मान कपायी, ४ माया कपायी, ५ लोभ कपायी, ६ अकपायी ।

जीव के सात भेद-१ नारकी, २ तिर्यञ्च, ३ तिर्यञ्चायी, ४ मनुष्य, ५ मनुष्यायी, ६ देव, ७ देवांगना ।

जीव के आठ भेद-१ मलेरयी, २ कृष्ण लेरयी, ३ नील लेरयी, ४ कापोत लेरयी, ५ तेजो लेरयी, ६ पद्म लेरयी, ७ शुक्र लेरयी, ८ अलेरयी ।

जीव के नव भेद-१ पृथ्वी काय, २ अप काय, ३ तेजस्ककाय, ४ वायु काय, ५ वनस्पति काय, ६ ऐन्द्रिय, ७ त्रेन्द्रिय, ८ चारिन्द्रिय, ९ पञ्चेन्द्रिय ।

जीव के दश भेद-१ एकेन्द्रिय, २ द्वेन्द्रिय, ३ त्रेन्द्रिय, ४ चारिन्द्रिय, ५ पञ्चेन्द्रिय, ६ षष्ठेन्द्रिय, ७ सप्तन्द्रिय, ८ अष्टन्द्रिय, ९ नवन्द्रिय, १० दशन्द्रिय ।

जीव के अज्ञेय भेद-१ एकेन्द्रिय, २ द्वेन्द्रिय, ३ त्रेन्द्रिय, ४ चारिन्द्रिय, ५ पञ्चेन्द्रिय, ६ षष्ठेन्द्रिय, ७ सप्तन्द्रिय, ८ अष्टन्द्रिय, ९ नवन्द्रिय, १० दशन्द्रिय, ११ अज्ञेय ।

रूपी अजीव के ५३० भेद-५ वर्ण, २ गन्ध, ५ रस, ५ संस्थान, ८ स्पर्श, इन २५ में में त्रिममें त्रिने पोल पाये जाते हैं वे सब भिन्ना कर कुल ५३० भेद होते हैं।

विस्तार ५ वर्ण-१ वाता, २ नीला, ३ लाल, ४ पीला, ५ सफेद, इन पाँचों वर्णों में २ गन्ध, ५ रस, ५ संस्थान, और ८ स्पर्श, ये २० बोल पाये जाते हैं इस प्रकार $५ \times २० = १००$ बोल वर्णोन्निवृत्त हुए।

२ गन्ध-१ सुरभि गंध २ दुरभि गंध इन दोनों में ५ वर्ण, ५ रस, ५ संस्थान और ८ स्पर्श ये २३ बोल पाये जाते हैं इस प्रकार $२ \times २३ = ४६$ बोल गंधोन्निवृत्त हुए।

५ रस-१ मिष्ट, २ कटु, ३ तीक्ष्ण, ४ गदु, ५ कषायित इन ५ रसों में ५ वर्ण, २ गंध, ८ स्पर्श, और ५ संस्थान ये २० बोल पाये जाते हैं इस तरह $५ \times २० = १००$ बोल रसोन्निवृत्त हुए।

५ संस्थान-१ परिमंडल संस्थान-नुदी के आकार, २ वर्तुल संस्थान-लहडू समान, ३ श्रेण संस्थान-सिपाही समान, ४ चतुर्गुण संस्थान-चौकी समान, ५ आयत संस्थान-लम्बी लक्ष्मी समान, इन संस्थानों में ५ वर्ण, २ गंध, ५ रस, ८ स्पर्श ये २० बोल पाये जाते हैं इस तरह $५ \times २० = १००$ बोल संस्थानोन्निवृत्त हुए।

८ स्पर्श-१ कर्कश, (कठोर) २ कोमल, ३ मृदु, ४ शीत, ५ उष्ण, ६ भिन्ना, ७ रुच, ८ एक

स्पर्शों में ५ घण्टे, २ गन्ध, ५ रस, ६ स्पर्श और ५ संस्पर्श इन प्रकार २३-२३ बोल पाये जाते हैं । अर्थात् द्वाष्ट स्पर्शों में से दो स्पर्श कम कहना कर्कश का पृच्छा होवे तो कर्कश और घोमल, ये दो छोड़ना । इसी प्रकार लघु का पृच्छा होवे तो लघु व गुरु छोड़ना, शीत का पृच्छा होवे तो शीत व दृण्य छोड़ना, स्निग्ध का पृच्छा होवे तो स्निग्ध व रुक्ष छोड़ना, ऐसे हरेक स्पर्श का समझ लेना । एक-एक स्पर्श के २३-२३ के हिसाब से $23 \times 2 = 46$ बोल स्पर्श आश्रित हुये ।

१०० वर्ण के, ४६ गन्ध के १०० रसकें, १०० संस्पर्श के और १०४ स्पर्श के इस प्रकार सब मिलाकर ५३० भेद रही अजीव के हुये । इनमें अरुसी अजीव के ३० भेद मिलाने से कुल ५६० भेद अजीव के जानना । इस प्रकार अजीव के स्वरूप को समझ कर इन पर से जो मोह उतारेगा वो इस भव में व पर भव में निरुबाध परम सुख पावेगा ।

॥ इति अजीव तत्त्व ॥



(३) पुण्य तत्त्व के लक्षण तथा भेद.

पुण्य तत्त्व—जो शुभ क्रांती के व शुभ कर्म के उदय में शुभ उज्ज्वल पुटल का बन्ध पड़े व जिसके फल भोगने समय आत्मा को मंटे लगे उस पुण्य तत्त्व कहते हैं ।

इस नव में व पर भव में निराबाध सुखों की प्राप्ति होवेगी ।

॥ इति पुन्य तत्त्व ॥



(४) पाप तत्त्व के लक्षण तथा भेद.

पाप तत्त्व:- जो अशुभ कार्यों से, अशुभ कर्म के उदय से, अशुभ, मेलो पुद्गल का बंध पड़े व जिसके फल भोगों से समय आत्मा को कड़वे लगे उसे पाप तत्त्व कहते हैं ।

पाप के १२ भेद:- १ प्राणातिशय २ मृदावाद ३ अदवादान ४ मैथुन ५ परिग्रह ६ क्रोध ७ मान ८ माया ९ लोभ १० राग ११ द्वेष १२ व्रतेषा १३ अन्धा-ख्यान १४ वैशुन्य १५ परस्परिवाद १६ राति अराति १७ नाया मृता १८ मिथ्या दर्शन शून्य इन १२ भेद प्रकार से जीव पाप उत्पन्न करता है वह २२ प्रकार से भोग्य है ।

२२ प्रकार से भोगे जाने हैं- १ मति ज्ञानावर-
णीय २ ध्रुव ज्ञानावरणीय ३ अवधि ज्ञानावरणीय ४ मनः-
पर्यव ज्ञानावरणीय ५ केवल ज्ञानावरणीय ६ निद्रा ७ निद्रा-
निद्रा ८ प्रवृत्ता ९ प्रवृत्ता प्रवृत्ता १० धियादि निद्रा
११ चक्षु दर्शनावरणीय १२ अचक्षु दर्शनावरणीय १३
अवधि दर्शनावरणीय १४ केवल दर्शनावरणीय १५
अप्राप्त वेदनी १६ निमग्नता भोग्यता १७ अवेकता-

बंधी क्रीड १८ मान १९ माया २० मोम २१ अय्या-
 रुशनी काय २२ अय्याग्यानी मान २३ अय्या-
 माया २४ अय्या० लोम २५ अय्याग्यानी क्रीड २६
 अय्या० मान २७ अय्या० माया २८ अय्या० लोम २९
 संज्वल का क्रीड ३० संज्वल का मान ३१ संज्वल का
 माया ३२ संज्वल का लोम ३३ दाम्प ३४ शनि ३५
 अरति ३६ मय ३७ लोक ३८ दुर्गन्ध ३९ मो' वेद ४०
 पुरुष वेद ४१ नपुंसक वेद ४२ नारु आयुष्य ४३ नरक
 गाँव ४४ विविध गति ४५ एकेन्द्रिय पना ४६ बह्विन्द्रिय
 पना ४७ त्रीन्द्रिय पना ४८ चैतसिन्द्रिय पना ४९ अरुण
 नाराच संपदन ५० नाराच संपदन ५१ अर्ध नाराच संप-
 दन ५२ कीलिका संपदन ५३ मेकाँत संपदन ५४ न्यधे प
 परिमंडल संस्थान ५५ सादिक संस्थान ५६ वामन संस्थान
 ५७ कुन्त संस्थान ५८ दुष्टाङ्ग संस्थान ५९ अशुभ वर्य
 ६० अशुभ गन्ध ६१ अशुभ रस ६२ अशुभ स्पर्श ६३
 नरकानुपूर्वी ६४ त्रिविकानुपूर्वी ६५ अशुभ गति ६६ उर-
 घात नाम ६७ स्थावर नाम ६८ सूक्ष्म नाम ६९ अरुण
 पना ७० साधारण पना ७१ अन्धिर नाम ७२ अशुभ
 नाम ७३ दुर्गन्ध नाम ७४ दुःख नाम ७५ अनोदय
 नाम ७६ अयशो कीर्ति नाम ७७ नीच मोत्र ७८ दानान्त-
 राय ७९ सामान्तराय ८० भोगान्तराय ८१ उपभोगान्त-
 राय ८२ वीर्यान्तराय एवं ८२ प्रकार से पाप के फल भोग

जाते हैं । ये पाप जान कर जो पाप के कारण को छोड़ेंगे
वे इस भव में तथा पर भव में निराश्रय परम सुख पावेंगे ।

॥ इति पाप तत्त्व ॥

(५) आश्रय तत्त्व के लक्षण तथा भेद.

आश्रय तत्त्व-जीव रूपी तालाब के अन्दर अग्रत
तथा अप्रत्याख्यान द्वारा, विषय कषाय का सेवन करने से
इन्द्रियादिक नालों के अन्दर से जो कर्म लरी जल का प्रवाह
आता है उसे आश्रय कहते हैं ।

यह आश्रय जघन्य २० प्रकार से और उत्कृष्ट ४२ प्रकार
से होता है ।

जघन्य २० प्रकार-१ श्रोतेन्द्रिय असंवर २ चक्षु
इन्द्रिय असंवर ३ घ्राणेन्द्रिय असंवर ४ रसेन्द्रिय असंवर
५ स्पर्शेन्द्रिय असंवर ६ मन असंवर ७ वचन असंवर
८ काय असंवर ९ वस्त्र वर्तनादि भण्डोपकरण अयत्ना से
लेवे तथा रक्ते १० सुखी कुशाग्र मात्र भी अयत्ना से
काम में लेवे ११ प्राणानिपात १२ मृषावाद १३ अदत्तादान
१४ मैथुन १५ परिग्रह १६ मिथ्यात्व १७ अत्रन १८ प्रमाद
१९ अपय २० अशुभ योग ।

विशेष गति से आश्रय के ४२ भेद.

५ आश्रय, ५ इन्द्रिय विषय ४ कषाय ३ अशुभ योग.

५ उच्चार पासवय खेल जल संपादय परिठावगिया समिति ।

तीन गुप्ति:-६ मन गुप्ति ७ वचन गुप्ति ८ काय गुप्ति ।

२२ परिपह:-६ चुवा परिपह १० वृथा परिपह ११ शीत १२ ताप १३ डंस-मत्सर १४ अन्त १५ अराति १६ स्त्री १७ चरिया १८ निमिडिया १९ शय्या २० आक्रोरी २१ वध २२ याचना २३ अज्ञात २४ रोग २५ वृथ स्पर्श २६ मेल २७ सत्कार पुरस्कार २८ प्रज्ञा २९ अज्ञान ३० दर्शन (इन २२ परिपह का जय)

१० यति धर्म:-३१ शान्ति ३२ निर्लोभता ३३ सरलता ३४ कोमलता ३५ अन्वेषधि ३६ सत्य ३७ संयम ३८ तप ३९ ज्ञान दान ४० मलवर्ष (इन १० यति धर्म का पालन करना)

१२ भावना:-४१ अनित्य भावना:-संसार के सब पदार्थ धन, यावन, शरीर, कुटुम्बादिक अनित्य, अस्थिर हैं व नाशवान हैं इस प्रकार विचार करना ।

४२ अशरण भावना:-जीव को जय रोग पीडादिक उत्पन्न होवे तब कोई शरण देने वाला नहीं. लक्ष्मी, कुटुम्ब परिवार आदि कोई साथ में नहीं आता ऐसा विचार करना ।

४३ संसार भावना:-जीव कने कने नगर में चलाती लाख जीव यो ने के पन्द्र नव नव समान नष्ट के पित्त मर

बनेक लब्धिये भी प्राप्त होती है। ऐसा समझ कर तपस्या करने का विचार करे ।

५० लोक भावनाः—चौदह राज प्रमाणे जो लोक है उसका विचार करे ।

५१ बोध भावनाः—राज्य देव, पदवी, श्रद्धा कलशद्रुमादि ये सर्व सुलभ हैं, अनंती बार मिले पर बोध बीज समवित का मिलना दुर्लभ है ऐसा सोचे ।

५२ धर्म भावनाः—सर्वज्ञ ने जो धर्म प्ररूपा है वह संसार सहृद्र से पार उतारने वाला है । पृथ्वी निरावलम्ब निराधार है । चन्द्रमा और सूर्य समय पर उदय होते हैं । मेष समय पर क्षीष्ट करते हैं । इस प्रकार जगत् में जो अच्छा होता है, वह सब सत्य धर्म के प्रभाव से, ऐसा विचार करे । पंच चारित्र ५३ सामायिक चारित्र ५४ ह्येदोऽन्यानि चारित्र ५५ परिहार विशुद्ध चारित्र ५६ सूक्ष्म संपराय चारित्र ५७ यथाख्यात चारित्र इस प्रकार ५७ भेद संवर के जान कर आचार्य करने से निरादाय (पीड़ा रहित) परम सुख की प्राप्ति हांगी ।

॥ इति संवर तत्त्व ॥

इसके १२ भेद—१ अनशन २ उनोदरि ३ वृत्ति संक्षेप (भिक्षाचारि) ४ रस परित्याग ५ कायवल्लभ ६ प्रति संलीनता । (यह छः बाह्य तप) ७ प्रायश्चित्त ८ विनय ९ वैषाण्य १० स्वाध्याय ११ ध्यान १२ कायोत्सर्ग । (यह छः अभ्यन्तर तप)

इन बारह प्रकार के तप को जान कर जो हर्ष आदरेता वह इस सब में व परमव में निरापेक्ष परम सुख पायेगा ।

॥ इति निर्गिरा तत्त्व ॥



८ वन्ध तपः के लक्षण तथा भेद ॥

धीर भीर, घातु मूर्च्छा, पुष्प-मत्सर, विल-तेज इत्यादि की तरह आत्मा के प्रदेश तथा कर्मों के पुद्गल का परस्पर सम्बन्ध होने को वन्ध तत्त्व कहते हैं ।

वन्ध के बारह भेद—१ प्रकृति बन्ध—आठ कर्मों का स्वभाव २ स्थिति बन्ध—आठों कर्मों के रहने के समय का मान ३ कर्मों के भीष भेदादिक समय से अनुमास वन्ध ४ वन्ध के पुद्गल के दल जो आत्मा के प्रदेश के साथ ॥ ११ ॥ १ तपः २ वन्ध ३ यद्विचार प्रकार का वन्ध का भेद

प्रकृति वात पितादि की घातक होती है। तैसे ही आठों कर्म जिस जिस गुण के घातक हो वो १ प्रकृति बन्ध । जैसे वह मोदक पच, मास, दो मास तक रह सक्ता है सो २ स्थिति बन्ध । जैसे वह मोदक बहुत तीक्ष्ण रस वाला होता है तैसे कर्म रस देते हैं सो ३ अनु भाग बन्ध । जैसे वह मोदक न्युनाधिक परिमाण वाला होता है तैसे कर्म पुद्गल के दल भी छोटे बड़े होते हैं सो ४ प्रदेश बन्ध । इस प्रकार बन्ध का ज्ञान होने पर जो यह बन्ध तोड़ेगा वह निरापाध परम सुख पावेगा ।

॥ इति बन्ध तत्त्व ॥



६ मोक्ष तत्त्व के लक्षण तथा भेद

बन्ध तत्त्व का उलटा मोक्ष तत्त्व है अर्थात् सकल आत्मा के प्रदेश से सर्व कर्मों का छूटना, सर्व बन्धों से मुक्त होना, सकल कार्य की सिद्धि होना तथा मोक्ष गति को प्राप्त होना सो मोक्ष तत्त्व ।

मोक्ष प्राप्ति के चार साधन:- १ ज्ञान २ दर्शन ३ चाग्नि ४ तप ।

सिद्ध पन्द्रह तरह के होते हैं:- १ तीर्थ सिद्धा २ अतीर्थ सिद्धा ३ तीर्थकर सिद्धा ४ अतीर्थकर सिद्धा ५ स्वयं बोध सिद्धा ६ प्रत्येक बोध सिद्धा ७ बुद्ध बंधि,

(अर्थात् ३३३ धनुष्य ३२ अंगुल प्रमाणे क्षेत्र में सिद्ध भगवान रहते हैं)

४ स्पर्शना द्वारः—सिद्ध क्षेत्र से कुछ अधिक सिद्ध की स्पर्शना है।

५ जाल द्वार:-एक सिद्ध आशी इनकी आदि है परन्तु जन्त नहीं, सर्व सिद्ध आशी आदि भी नहीं व अन्त भी नहीं ।

६ भाग द्वारः—सर्व जीवों से सिद्ध के जीव अनन्त
वै भाग हैं व सर्व लोक के असंख्यात्वे भाग हैं ।

७ भाव द्वार:-सिद्धों में धार्मिक भाव तो केवल ज्ञान, केवल दर्शन और धार्मिक समकित्व है और पारि-
 यानिक भाव-यह सिद्ध पना है ।

८ अन्तरभावः—सिद्धों को फिर लौटकर संसार में नहीं आना पड़ता है, जहाँ एक सिद्ध तहाँ अनन्त और जहाँ अनन्त वहाँ एक सिद्ध इसलिये सिद्धों में अन्तर नहीं ।

६ अल्प पदार्थ द्वारा:-मन से कम नष्टक सिद्ध,
उत्तमे स्त्री संख्यात भुली सिद्ध और उत्तमे पुरुष संख्यात
गुण । एक मनस में नष्टक १० सिद्ध होते हैं, स्त्री २०
वर्ग । पुरुष १०० सिद्ध होते हैं ।

भा.ल. में ध्यान लाये हैं—१. मन्द शिक्षक २
बदलते बदन ३ संतो ४ पदार्थी ५ वज्र शब्द का नाचकंप-

(अर्थात् ३३३ धनुष्य ३२ अंगुल प्रमाणे चित्र में सिद्ध भगवान् रहते हैं)

४ स्पर्शना द्वारः—सिद्ध चित्र से कुछ अधिक सिद्ध की स्पर्शना है ।

५ काल द्वारः—एक सिद्ध आश्री इनकी आदि है परन्तु अन्त नहीं, सर्व सिद्ध आश्री आदि भी नहीं व अन्त भी नहीं ।

६ भाग द्वारः—सर्व जीवों से सिद्ध के जीव अनन्त वे भाग हैं व सर्व लोक के असंख्यात्मे भाग हैं ।

७ भाव द्वारः—सिद्धों में द्वायिक भाव तो केवल ज्ञान, केवल दर्शन और द्वायिक समकित्व है और पारि-
णामिक भाव—यह सिद्ध पना है ।

८ अन्तरभावः—सिद्धों को फिर लौटकर संसार में नहीं आना पड़ता है, जहां एक सिद्ध तहां अनन्त और जहां अनन्त वहां एक सिद्ध इसलिये सिद्धों में अन्तर नहीं ।

९ अल्प बहुत्व द्वारः—सब से कम नपुसंक सिद्ध, उससे स्त्री संख्यात गुणी सिद्ध और उससे पुरुष संख्यात गुण । एक समय में नपुसंक १० सिद्ध होते हैं, स्त्री २० और पुरुष १० = सिद्ध होते हैं ।

मोक्ष में कौन जाते हैंः—१ भव्य सिद्धक २ बदर ३ त्रस ४ संज्ञा ५ पर्याप्ती ६ वज्र ऋषभ नाराच संघ-

मिदा = श्री तिह मिदा १० नर
 मंदा मिदा ११ नर मिह मिदा १२ अन्य मि
 वेदा १३ गुरम मिह मिदा १४ एक मिदा १५ नर
 भेदा ।

मोक्ष के नव द्वार

१ सद् २ द्रव्य ३ क्षेत्र ४ स्वरूपा ५ काल ६ म
 ७ माव ८ अंतरा ९ अन्तर ब्रह्म ।

१ सद् पद प्ररूपणद्वारः-मोक्ष गति पूर्व सम
 धी, वर्तमान समय में है व आगामी काल में होगी उ
 अस्तित्व है, आकाश कुमुदवत उमकी नास्ति नहीं ।

२ द्रव्य द्वारः-मिद अनन्त है, अमय्य जीव
 अनन्त गुरु अधिक हैं एक स्वरूपि काय के प्रीति
 छोड़ कर दूसरे २३ दंदक के जीवों में मिद अनन्त

३ क्षेत्र द्वारः-मिद शिवा प्रमाय (विष्णु
 है यह मिद शिवा ४५ लाख योजन लम्बी व प
 मध्य में अठ योजन की बारी है । किनारों के प
 मदिता के पंथ में भी पदना है । गृह योना के
 गुरु, बगु, दगुला, गुरु, पौरी का पद, मोती
 व स १ म ११ के इन में अथक उत्पन्न है । उमकी
 १, २०, ३०, ४० योजन, १ म. २ १३६६ घ
 पने उ अगुन न होगी है मिद के बहने का स्थ
 शिवा के उम योजन के क्षेत्र गाऊ क छुं न

(अर्थात् ३३३ धनुष्य ३२ अंगुल प्रमाणे क्षेत्र में सिद्ध भगवान रहते हैं)

४ स्पर्शना द्वारः—सिद्ध क्षेत्र से कुछ अधिक सिद्ध की स्पर्शना है ।

५ काल द्वारः—एक सिद्ध आश्री इनकी आदि है परन्तु अन्त नहीं, सर्व सिद्ध आश्री आदि भी नहीं व अन्त भी नहीं ।

६ भाग द्वारः—सर्व जीवों से सिद्ध के जीव अनन्त वे भाग हैं व सर्व लोक के असंख्यात्वे भाग हैं ।

७ भाव द्वारः—सिद्धों में चायिक भाव तो केवल ज्ञान, केवल दर्शन और चायिक समकित्व है और पारि-
रामिक भाव—यह सिद्ध पना है ।

८ अन्तरभावः—सिद्धों को फिर लौटकर संसार में नहीं आना पड़ता है, जहां एक सिद्ध तहां अनन्त और जहां अनन्त वहां एक सिद्ध इसलिये सिद्धों में अन्तर नहीं ।

९ अल्प बहुल्य द्वारः—नव से कम नपुंसक सिद्ध, उनमे स्त्री संख्यात गुरी सिद्ध और उनसे पुरुष संख्यात गुरी । एक नमय में नपुंसक १० सिद्ध होते हैं. स्त्री २० और पुरुष १० = सिद्ध होते हैं ।

भोज में कौन जाने हैं.—१ भव्य सिद्धक २ वादर ३ वन ४ मंजो ५ पर्यामी ६ वज्र अष्टपम नाराच संघ-

सिद्धा = स्रो लिङ्ग सिद्धा ६ पुरुष लिङ्ग सिद्धा १० नपु-
 मक लिङ्ग सिद्धा ११ स्वयं लिङ्ग सिद्धा १२ अन्य लिङ्ग
 सिद्धा १३ गुरुत्व लिङ्ग सिद्धा १४ एक सिद्धा १५ अनेक
 सिद्धा ।

मोक्ष के नव द्वार

१ मनु २ द्रव्य ३ क्षेत्र ४ स्पर्शना ५ काल ६ माग
 ७ मात्र = अंतर ८ अल्प बहुत्व ।

१ सद् पद प्ररूपणाद्वारः-मोक्ष गति पूर्व समय में
 भी, वर्तमान समय में है व आगामी काल में रहेगी उत्तरा
 अनिष्ट है, आकाश कुमुदवन उमकी नास्ति नहीं ।

२ द्रव्य द्वारः-मिद्ध अनन्त है, अमर्य जीव
 अनन्त गुण अधिक है एक वनस्पति काय के जीवों के
 छोड़ कर दूसरे २२ दंडक के जीवों में सिद्ध अनन्त है ।

३ क्षेत्र द्वारः-मिद्ध शिला प्रमाण (विस्तार में)
 है यह मिद्ध शिला ४५ लाख योजन लम्बी व चौड़ी है
 मध्य में आठ योजन की खाई है । किनारों के पान
 मविष्टा के पान में भी पनली है । नृद्ध मोना के सम
 जंगल, पट्ट, बगुला, गन्ना, पौधा का पट्ट, मोनी का हा
 व र्थ । ग ११ व ३३ व अर्धक उज्ज्वल है । उमकी पान

पचीस क्रिया ।

१ काईया क्रियाः—के दो भेद १ अणुवरय काईया
२ दुपउत्त काईया ।

१ अणुवरय काईया—जब तक यह शरीर पाप से
निवर्ते नहीं, वहां तक उसकी क्रिया लगे ।

२ दुपउत्त काईया—दुष्ट प्रयोग में शरीर प्रवर्ते तो
उसकी क्रिया लगे ।

२ आदिगरणियाः—क्रिया के दो भेद १ संज्ञोजना
हिगरणिया २ निव्वत्तणहिगरणिया ।

१ खद्दग्ग मुशल शस्त्रादिक प्रवर्त्तावे तो संज्ञोजना
दिगरणिया क्रिया लगे ।

२ नये अद्विक्खण शस्त्रादिक संग्रह करे तो
निव्वत्तणहिगरणिया क्रिया लगे ।

३ पाउसिया क्रियाः—के दो भेद १ जीव पाउसिया
२ अजीव पाउसिया ।

१ जीव पर ड्रेप करे तो जीव पाउमिया क्रिया लगे ।

२ अजीव पर ड्रेप करे तो अजीव पाउमिया क्रिया
लगे ।

४ पारिजवणियाः क्रिया के दो भेद १ नद्वय पारिजवणिया
२ पद्वय पारिजवणिया ।

पचीस क्रिया ।

१ काईया क्रियाः—के दो भेद १ अणुवरय काईया
२ दुपउत्त काईया ।

१ अणुवरय काईया—जब तक यह शरीर पाप से
निवर्ते नहीं, वहां तक उसकी क्रिया लगे ।

२ दुपउत्त काईया—दुष्ट प्रयोग में शरीर प्रवर्ते तो
उसकी क्रिया लगे ।

२ आदिगरणियाः—क्रिया के दो भेद १ संजोजना
दिगरणिया २ निव्वत्तणादिगरणिया ।

१ खड्ग मुशल शस्त्रादिक प्रवर्तवे तो संजोजना
दिगरणिया क्रिया लगे ।

२ नये अद्विक्कण शस्त्रादिक संग्रह करे तो
निव्वत्तणादिगरणिया क्रिया लगे ।

३ पाउसिया क्रियाः—के दो भेद १ जीव पाउसिया
२ अजीव पाउमिया ।

१ जीव पर ट्रेप करे तो जीव पाउमिया क्रिया लगे ।

२ अजीव पर ट्रेप करे तो अजीव पाउमिया क्रिया
लगे ।

४ पानिनाउणियाः—के दो भेद १ मत्तपानिया २
॥ यथा ॥ पानिनाउणिया २ मत्तपानिया ॥

१ मयं (खुद) अपने आपको तथा दूसरों
को परिनापना उपजावे तो महत्त्व पारितावणिया क्रिया लगे ।

२ दूसरों के द्वारा अपने आपको तथा अन्य किसी
को परिनापना उपजावे तो परहत्त्व पारिताव-
णिया क्रिया लगे ।

५ पाण्डुर्याईया क्रियाः—के दो भेद १ सहत्त्व पाण्डुर्या
आईया २ परहत्त्व पाण्डुर्याआईया

१ अपने हाथों ने अपने तथा अन्य दूसरों के
प्राण हरन कर तो महत्त्व पाण्डुर्याआईया क्रिया
लगे ।

२ किसी अन्य द्वारा अपने तथा दूसरों के प्रा-
ण तो परहत्त्व पाण्डुर्याआईया क्रिया लगे ।

६ अश्वत्थान क्रिया—के दो भेद १ जीव अश्वत्थान
क्रिया २ अजीव अश्वत्थान क्रिया

१ जीव का अन्य प्राण नहीं को तो जीव अश्वत्थान
क्रिया लगे ।

२ अजीव (कीदमदिह) का अन्य प्राण नहीं
तो अजीव अश्वत्थान क्रिया लगे ।

३ अश्वत्थान क्रिया के दो भेद १ जीव अश्वत्थान

२ अजीव का आरम्भ करे तो अजीव आरंभिया क्रिया लगे ।

८ पारिग्गहिया क्रिया-के दो भेद-१ जीव पारिग्गहिया २ अजीव पारिग्गहिया ।

१ जीव का परिग्रह रखे तो जीव पारिग्गहिया क्रिया लगे ।

२ अजीव का परिग्रह रखे तो अजीव पारिग्गहिया क्रिया लगे ।

९ मायावत्तिया क्रिया-के दो भेद १ आयभाव वंक्षया २ परभाव वंक्षया ।

१ स्वयं अभ्यन्तर बांकां (कुटिल) आचरण आचरे तो आयभाव वंक्षया क्रिया लगे ।

२ दूसरों को ठगने के लिये बांकां (कुटिल) आचरण आचरे तो पर भाव वंक्षया क्रिया लगे ।

१० मिच्छादंसण वत्तिया क्रिया-के दो भेद १ उणा-
इरित मिच्छादंसण
वत्तियार तवाइरित
मिच्छा दंसण व-
त्तिया ।

१ कम जादा भट्टान कर तथा प्ररूपे तो उणाइरित मिच्छा दंसण वत्तिय क्रिया लगे ।

२ बिपरीत भट्टान कर तथा प्ररूपे तो तवाइरित मिच्छादंसण वत्तिया क्रिया लगे ।

११ दिष्टिया क्रिया—के दो भेद १ जीव दिष्टिया २ अजीव दिष्टिया ।

१ यद्य गज्रादिक-को देखने के लिये जानें से जीव दिष्टिया क्रिया लगे ।

२ विशयमणादि-को देखने के लिये जाने से अजीव दिष्टिया क्रिया लगे ।

१२ पुष्टिया क्रिया—के दो भेद १ जीव पुष्टिया २ अजीव पुष्टिया ।

१ जीव का स्पर्श करे तो जीव पुष्टिया क्रिया लगे ।

२ अजीव ने स्पर्श तो अजीव पुष्टिया क्रिया लगे ।

१३ पादुक्षिपया क्रिया—के दो भेद १ जीव पादुक्षिपया २ अजीव पादुक्षिपया ।

१ जीव का घुस भित्तवे तथा उस पर ईर्ष्या करे तो जीव पादुक्षिपया क्रिया लगे ।

२ अजीव का घुस भित्तवे तथा उस पर ईर्ष्या करे तो अजीव पादुक्षिपया क्रिया लगे ।

१४ मामंतो वणिगार्हया क्रिया—के दो भेद १ जीव मामंतो वणिगार्हया २ अजीव मामंतो वणिगार्हया ।

१ जीव का समुदाय गमने तो जीव मामंतो वणिगार्हया क्रिया लगे ।

२ अजीव का समुदाय गमने तो अजीव मामंतो वणिगार्हया क्रिया लगे ।

१५ साहधिया-के दो भेद १ जीव साहधिया २ अजीव साहधिया ।

१ जीव का अपने हाथों के द्वारा हनन करे तो जीव साहधिया क्रिया लगे ।

२ खट्वादि के द्वारा जीव को मारे तो अजीव साहधिया क्रिया लगे ।

१६ नेसाधिया क्रिया-के दो भेद १ जीव नेसाधिया २ अजीव नेसाधिया ।

१ जीव को डाल देवे तो जीव नेसाधिया क्रिया लगे ।

२ अजीव को डाल देवे तो अजीव नेसाधिया क्रिया लगे ।

१७ आणवणिया क्रिया-के दो भेद १ जीव आणव-
णिया २ अजीव आणवणिया ।

१ जीव को मंगावे तो जीव आणवणिया क्रिया लगे ।

२ अजीव को मंगावे तो अजीव आणवणिया क्रिया लगे ।

१८ वेदारणिया क्रिया-के दो भेद १ जीव वेदारणिया २ अजीव वेदारणिया ।

१ जीव को वेदारे तो जीव वेदारणिया क्रिया लगे ।

२ अजीव को वेदारे तो अजीव वेदारणिया क्रिया लगे ।

१९ अणभोग वस्तिया क्रिया-के दो भेद १ अणउत्त
आणुता २ अणउत्त

१ असावधानता से वस्त्रादिक का ग्रहण करने से अशाुच आसक्तता क्रिया लगे ।

२ उपयोग बिना पात्रादि को पूंजने से बचावत
पत्रमजसुता क्रिया लगे ।

२० अणवकंश्च यत्तिया क्रिया-के दो भेद १ आन्तरिक अणवकंश्च यत्तिया २ पराशरीर अणवकंश्च यत्तिया।

१ अपने शरीर के द्वारा पाए जाने से आवश्यक वस्तु वशिया क्रिया लगे ।

२ अन्य के शरीर द्वारा पाप कर्म करने से परशरीर अव्यक्त बन गया होगा ।

२१. पञ्च वस्तुव्याप्तियाः—के दो वेद १ माया वस्तुव्याप्ति
२ श्रोत्र वस्तुव्याप्ति ।

१ माया में (कण्ठ पूर्वक) राग धारण करे सो
माया बभिया क्रिया सगे ।

३ सोम में गम पाण्य करे तौ सोम पशिया
क्रिया नगे ।

२२ द्वांस वसिया क्रिया—के दो पेद १ कोड़े २ माते ।

५ छोटे क्रिया सगे ।

४५ 'माला' टिका जमे ।

॥ ३ ॥ वाङ्मय ॥ २४ ॥ ६ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ८९ ॥ ९० ॥ ९१ ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ ९७ ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ १०० ॥

• ११४३११ ३ ६ १४३३१

छः काय के बोल

छ काय के नाम—१ इन्द्र (इन्दी) स्थावर, २ प्रद्य (बंभी) स्थावर, ३ शिष्य (सप्पी) स्थावर, ४ सुमति (समिति) स्थावर, ५ प्रजापति (पयावज्य) स्थावर, ६ जंगम स्थावर ।

छ काय के गोत्र—१ 'पृथ्वी काय, २ 'अपकाय, ३ 'विजय काय, ४ 'वायु काय, ५ 'वनस्पति काय, ६ 'ग्रम काय ।



पृथ्वी काय

पृथ्वी काय के दो भेद—१ सूक्ष्म २ सादर (स्थूल) ।

सूक्ष्म पृथ्वी कायः—मर सोक में मरे हुवे हैं जो इनने में इनाय नहीं, मानने में मरे नहीं, अग्नि में जले नहीं, जल में डूबे नहीं, आँगों में हीने नहीं व जिसके दो डुकड़े होवे नहीं ठमे सूक्ष्म पृथ्वी काय कहने हैं ।

सादर / स्थूल । पृथ्वी कायः—सोक के देगु माग में जो हुवे हैं जो इनने में इनाय, मानने में मरे, अग्नि में जले, जल में डूबे, आँगों में हीने व जिसके दो डुकड़े हो जावे

.....

६ इन्द्र नील रत्न १० चन्द्र नील रत्न ११ मेरुही (गरुड)
 रत्न १२ हंस गर्भ रत्न १३ पोलाक रत्न १४ सौमन्धिक
 रत्न १५ अन्द्र प्रभा रत्न १६ वैरुही रत्न १७ जल कान्त
 रत्न १८ सूर्य कान्त रत्न एवं सर्व ४७ प्रकार की पृथ्वी
 काय ।

इसके सिवाय पृथ्वी काय के और भी बहुत से भेद
 हैं । पृथ्वी काय के एक कंकर में असंख्यात जीव मगधंत
 ने सिद्धान्त में फरमाया है । एक पर्याप्ता की नेभा से
 असंख्यात अपर्याप्त है । जो इन जीवों को दया पालेगा
 वह इस मय में व पर मय में निराबाध परम सुख पावेगा ।

पृथ्वी काय का आयुष्य जपन्य अन्तर्मुहूर्त का
 उत्कृष्ट नीचे लिखे अनुमारः—

कोमल मिट्टी का आयुष्य एक हजार वर्ष का ।
 शुद्ध मिट्टी का आयुष्य बारह हजार वर्ष का ।
 पालु रेत का आयुष्य चौदह हजार वर्ष का ।
 मंन सिल का आयुष्य सोलह हजार वर्ष का ।
 कंकरों का आयुष्य अठारह हजार वर्ष का ।
 बज्र हीरा तथा धातु का आयुष्य शबीश हजार वर्ष का ।
 पृथ्वी काय का संस्थान मसुर की दाल के समान है ।
 पृथ्वी काय का " कुल " बारह लाख केगड़ जानना ।

बादर वायु काय के १७ भेदः—१ पूर्व दिशा की वायु २ पश्चिम दिशा की वायु ३ उत्तर दिशा की वायु ४ दक्षिण दिशा की वायु ५ ऊर्ध्व दिशा की वायु ६ अधो दिशा की वायु ७ तिर्यक् दिशा की वायु ८ विदिशा की वायु ९ चक्र पदे सो मंवर वायु १० चारों कोनों में किये सो मंडल वायु ११ उर्द्ध चढ़े सो गुंडल वायु १२ वाजिन्त्र जैसे आवाज किये सो गुंज वायु १३ वृषों को उलाड़ डाले सो भंज (प्रभंजन) वायु १४ सर्वत्रक वायु १५ घन वायु १६ तनु वायु १७ शुद्ध वायु ।

इसके सिवाय वायु काय के अनेक भेद हैं । वायु के एक फटके में भगवान ने असंख्यात जीव फरमाये हैं । एक पर्याप्त की नेधा में असंख्यात अपर्याप्त है । सुले सुंद सोलने से, चिमटी बजाने से, अहुलि आदि का फटिका करने से, पंछा चलाने से, रोटिया कातने से, नली में फूटने से, मूष (सुपदा) भाटकने से, मूमल के खांडने से, पंटी बजाने से, ढोल बजाने से, पीपी आदि बजाने से इत्यादि अनेक प्रकार में वायु के असंख्यात जीवों की घात होती है । ऐसा जान कर वायु काय के जीवों की दया पालन में जीव उन सब में ३ पर सब में निराश्रय

(३८)

५ मीलामां ६ आसापालव ७ आम ८ महुए ९ भयन
१० जामन ११ बेर १२ निम्बोली (री) इत्यादि ।

बहु अट्टी-१ जामफल २ सीताफल ३ अनार ४
बील फल ५ फौठा (कबीठ) ६ कैर ७ निम्बू ८ टीमरु
९ बद के फल १० पीपल के फल इत्यादि बहु अट्टी के
बहुत से भेद हैं ।

२ गुच्छ-नीचा व गोल वृष हो उमे गुच्छ माने हैं
जैसे १ रिंगनी २ मोरिंगनी ३ जवामा ४ तुलसी ५ भाव-
ची भावची इत्यादि गुच्छ के अनेक भेद हैं ।

३ गुल्म-फूलों के वृष को गुल्म कहते हैं । १ जाई
२ जुई ३ डमरा ४ मरवा ५ केतकी ६ केवड़ा इत्यादि
गुल्म के अनेक भेद हैं ।

४ लता-१ नाग लता २ अशोक लता ३ पंचक
लता ४ मोड़ लता ५ पद्म लता इत्यादि लता के अनेक
भेद हैं ।

३ शीघ्र ४ जलोक ५ कीड़े ६ पोरे ७ लट्ट = अलसिये
 ८ कुमी ९ चरमी ११ कातर (जलजन्तु) १२ चुहेल १३
 मेर १४ एल १५ वांतर (वारा) १६ लालि आदि वे-
 इन्द्रिय के अनेक भेद हैं। वेइन्द्रिय का आयुष्य जघन्य अन्त-
 र्मूर्हत का, उत्कृष्ट धारद वर्ष का। इनका " कुल " साठ लक्ष
 करोड़ जानना।

श्री-इन्द्रिय-जिसके १ काय २ मुख ३ नासिका ये
 तीन इन्द्रिय होवे उसे श्री-इन्द्रिय कहते हैं। जैसे-१ जूँ २
 लीख ३ खटमल (मांकड़) ४ चाँचड़ ५ कंधवे ६ घनेरे
 ७ उदई (दीमक) = इल्ली (भिमेल) ८ भुंड ९ कीड़ी
 ११ मकोड़े १२ जीपोड़े १३ जुँघा १४ गर्घये १५ कान
 खजुरे १६ सवा १७ ममोले आदि श्री-इन्द्रिय के अनेक
 भेद हैं। इनका आयुष्य जघन्य अन्तर्मूर्हत, उत्कृष्ट ४६ दिन
 का। इनका " कुल " आठ लक्ष करोड़ जानना।

चौरिन्द्रिय-जिसके १ काय २ मुख ३ नासिका ४
 घण्टु (आँख) ये चार इन्द्रिय होवे उसे चौरिन्द्रिय कहते
 हैं। जैसे-१ भँवरे २ भँवरी ३ बिच्छु ४ मक्खी ५ तीड़ा
 (टीढ़) ६ पठङ्ग ७ मच्छर ८ मसेल ९ डांस १० मम
 ११ तमरा १२ करोलिया १३ केमारी १४ तीढ़ गोडा १५
 कुंदी १६ केवडे १७ बग १८ कपेली आदि चौरिन्द्रिय के
 अनेक भेद हैं। इनका आयुष्य जघन्य अन्तर्मूर्हत, उत्कृष्ट
 ४६ दिन का। इनका " कुल " नव लक्ष करोड़ जानना।

नरक का विवेचन ।

१ पहली रत्न प्रभा नरक:-का पिंड एक लाख अस्सी हजार योजन का है । जिसमें से एक हजार का दल नीचे व एक हजार का दल ऊपर छोड़ बीच में एक लाख ७८ हजार योजन की पोलार है । जिसमें १३ पाथड़ा व १२ आंतरा है इन में ३० लाख नरकावास है जिनमें असंख्यात नेरिये और उनके रहने के लिये असंख्यात कुम्भिये हैं । इस के नीचे चार पोल है । १ बीस हजार योजन का घनोदधि है । २ असंख्यात योजन का घनवाय है ३ असंख्यात योजन का अनुवाय है ४ असंख्यात योजन का आकाशास्तिकाय है ।

२ शर्करा प्रभा नरक:-का पिंड एक लाख बत्तीस हजार योजन का है । जिनमें से एक हजार योजन का दल नीचे व एक हजार योजन का दल ऊपर छोड़ कर बीच में एक लाख और तीस हजार का पोलार है इन में ११ पाथड़ा व १० आंतरा है जिनमें असंख्यात नेरियों के रहने के लिये २५ लाख नरकावास और असंख्यात कुम्भिये हैं । इस के नीचे चार पोल १ बीस हजार योजन का घनोदधि है २ असंख्यात योजन का घनवाय है ३ असंख्यात योजन का अनुवाय है ४ असंख्यात योजन का आकाशास्तिकाय है ।

३ पालु प्रभा नरक:-का पिंड एक लाख और २० हजार योजन का है । जिनमें से एक हजार योजन का

त नीचे व एक हजार योजन का दल ऊपर छोड़ कर बीचमें एक लाख और २६ हजार योजन का पोलार है । इनमें ६ पाधड़ा = आंतरा है जिनमें असंख्यात नेरियों के रहने के लिये १५ लाख नरकावास व असंख्यात कुम्भिये हैं । इस के नीचे चार बोल—१ बीस हजार योजन का घनोदधि है २ असंख्यात योजन का घनवाय है ३ असंख्यात योजन का तनुवाय है ४ असंख्यात योजन का आकाशास्ति काय है ।

४ पंक प्रभा नरकः—का पिंड एक लाख और बीस हजार योजन का है । जिसमें से एक हजार योजन का दल नीचे व एक हजार योजन का दल ऊपर छोड़ कर बीचमें एक लाख और अष्टाद्व हजार योजन का पोलार है । जिनमें ७ पाधड़ा व ६ आंतरा है । इनमें असंख्यात नेरियों के रहने के लिये दश लाख नरकावास व असंख्यात कुम्भिये हैं । इस के नीचे चार बोल १ बीस हजार योजन का घनोदधि है, २ असंख्यात योजन का घनवाय है, ३ असंख्यात योजन का तनुवाय है, ४ असंख्यात योजन का आकाशास्ति काय है ।

५ वृक्ष प्रभा नरकः का पिंड एक लाख अष्टाद्व हजार योजन का है । जिसमें से एक हजार योजन का दल नीचे व एक हजार योजन का ऊपर छोड़ कर बीचमें एक लाख सोलह हजार का पोलार है जिनमें ४ पाधड़ा व ७ आंतरा

असंख्यात योजन का घनवाय है ३ असंख्यात योजन का तनुवाय है ४ असंख्यात योजन का आकाशास्ति काय है इस के बारह योजन नीचे जाने पर अलोक आता है ।

नरक की स्थिति अधन्य दश हजार वर्ष की, उत्कृष्ट ३३ सागरोपम की । इनका " कुल " पच्चीस लाख करोड़ जानना ।



२ तिर्यच का विस्तार

तिर्यच के पांच भेद १ जलचर २ स्थलचर ३ उपर ४ भुज्ज ५ खेचर इन में से प्रत्येक के दो भेद १ संमूर्द्धिम २ गर्भज ।

१ जलचर-जल में चले मो जलचर तिर्यच जैसे—
१ मच्छ २ कच्छ ३ मृगामच्छ ४ कलुषा ५ ग्राह ६ भेदक ७ सुसुमाल इत्यादिक जलचर के अनेक भेद हैं । इनका कुल १२॥ लाख करोड़ जानना ।

२ स्थलचर-जमीन पर चले मो स्थलचर तिर्यच इन के विशेष नामः—

१ एक गुरघाले—घोड़े, गधे, खच्चर इत्यादि

२ दो गुरघाले— बटे हुए गुरघाले गाय

भैरव देव, बकरे हिमन राज मन्त्रिण्य आदि ।

३ गंड़ीपद—(सोनार के एख असे गो पांव वाले) छंट, गेंडे, आदि ।

४ श्वानपद-(पंजे वाले जानवर) बाघ, सिंह, चीता, दीवहे (घम्वे वाले चीते) कुत्ते, बिट्टी, लाली, गीदड़, जराख, रोंछ, मन्दार इत्यादि। स्थलचर का ' कुत्त ' इस लाख करोड़ जानना ।

३ उरपर-(सर्प) के भेद:-हृदय मल से जर्मिन पर चलने वाले मो उरपर । इनके चार भेद १ अहि २ अजगर ३ असालिया ४ मधुरग ।

१ अहि-वांछो ही रंग के होते हैं-१.
२ नीला ३ लाल, ४ पीला ५ सफेद ।

२ मनुष्यादि को निगल जाये सो भजगर ।

३ अमालिका-यह दो पक्षों में १२ (४८ कोम) लम्बा हो जाता है चक्रवर्ती (पल्लविकादि) की राजधानी के नीचे उत्पन्न होता है । इसे मरुम नामक दाह होता है जिसमें आम पाम की ४८ कोम की २ गल्ल जाती है जिसमें आम पाम के श्रम, नगर, भेना, सब दब कर मर जाते हैं । इसे अमालिका कहते हैं ।

४ उक्त पक्ष के अनुसार नम्बर शरीर
वाला मनुष्य मरने के बाद अर्थात् द्वीप के
बाद १०१ ई

‘ ‘ इ न र स ए ज्ञानना ।

४ भुजपर—(सर्प)—जो भुजाओं (हाथों) के बल चले सो भुजपर कहलाते हैं । इनके विशेष नाम—१ कोल २ नकुल (नोलिया) ३ चूडा ४ विस्मगा ५ ब्राह्मणी ६ मिलहरी ७ काकीड़ा = चंदन गोह (ग्राह) ८ पाटला गोह (ग्राह विशेष) इत्यादि अनेक नाम हैं । इनका “कुल” नव लाख करोड़ जानना ।

५ खेचर—प्राकाश में उड़ने वाले जीव खेचर (पक्षी) कहलाते हैं । इनके चार भेदः—१ चर्म पंखी २ रोम पंखी ३ समुद्रग पंखी ४ वीतव (विस्तृत) पंखी ।

१ चर्म पंखी—मृगुला, चामचिंड़ी कान-कटिया, चमगीदड़ इत्यादि चमड़े की पांख वाले सो चर्म पंखी ।

२ मयुर (मोर), कयूर, चक्रते (चिड़ी), कौवे, कमेडी, मैना, पोपट, चील, युगले, कायल, डेल, शकर, हौल, तोते, तीतर, बाज इत्यादि रोम (बाल) की पांख वाले सो रोम पंखी ये दो प्रकार के पक्षी अढ़ाई द्वीप के बाहर भी मिलते हैं और अन्दर भी ।

३ समुद्रग पंखी—डुब्बे जैसे मीढ़ी हुई गोल पांख वाले सो समुद्रग पक्षी ।

४ विचित्र प्रकार की लम्बी व पान पांख वाले सो विचित्र पक्षी य देन प्रकार के पक्षी अ १ २ ३

के बाहर ही मिलते हैं । खेचर (पदों) का " कुल " चारह लाख करोड़ जानना ।

गर्भज तिर्यच की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की उत्कृष्ट तीन दण्डोपम की, समृद्धिज तिर्यच की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की उत्कृष्ट पूर्व करोड़ की (विस्तार दण्डक से जानना)

३ मनुष्य के भेद

मनुष्य के दो भेद १ गर्भज २ समृद्धिज ।

गर्भज के तीन भेद १ पन्द्रह कर्मेभूमि के मनुष्य २ सीम अकर्म भूमि के मनुष्य ३ छप्पस अन्तर द्वीप के मनुष्य ।

१ पन्द्रह कर्म भूमि मनुष्य के १५ क्षेत्र

१ मरुत २ ऐरावत ३ महाविदेह ये तीन क्षेत्र एक लाख योजन वाले जम्बू द्वीप के अन्दर हैं । इसके (चारों ओर) बाहर (शुकी के आकार) दो लाख योजन का जलग्न समुद्र है । इसके बाहर चार लाख योजन का घा-
गी गण्ट त्रिमये २ मान २ ऐरावत २ महाविदेह एवं
६ क्षेत्र हैं । इसके बाहर ५८ लाख योजन का कालोदधि
समुद्र है । इसके बाहर १०८ लाख योजन का अत्र पृथ्वी
६ क्षेत्र हैं । इसके बाहर १०८ लाख योजन का अत्र पृथ्वी

(۲۲)

योजना कुंवा २५ योजना पृथ्वी में उडा (गडरा) १०५२
 १२ [१२ कना] योजना चौडा, २४६३२ योजना आर ३
 ११

कला कलादा पोने सोने का 'गुट्टेदेमान्त' पर्यंत है। इनकी
बाद २३४० योजना और १५ कला की है, धनुष्य पीटी
२५०३० योजना और ४ कला की है, इन पर्यंत के पू
वर्तमान में मे भोगयोगी, भोगयोगी योजना आजेरी लम्बे
दा दूरे [गान्धा] निराजी दूरे है। एक २ शाखा प
मान मान माना डीए है जगती [नलेटी] में ऊपर दादा क

[illegible]

4 1 2 3 4 5 6 7 8 9

■ ■ ■ ■ ■

११ रिगव जीव कनेरे हुरा-मनुष्य के शरीर
शरीर में ।

१२ इन्द्रि प्रभित मज्जेमे सुता-रुी पुरुष के
मेषेन मे ।

१३ नगर निधमनिष्ठा गुण-नगर की गटर आदि में।

૧૭ તરુન અગ્રદે દાળે ગુણ-સર્વ મનુષ્ય સમગ્રથી
અમુખી જવાનરૂ મેં ।

मनुष्य की स्थिति जगत्त अन्तर्गत की, उद्दृष्ट नीच वर्गों की। संपूर्ण मनुष्य की स्थिति जगत्त अन्तर्गत की, उद्दृष्ट भी अन्तर्गत की। मनुष्य का "कूट" काट काट करे जातना।

५ अथ किं भवति ।

[illegible]

१ स्वयंभवादि क. २) भद्रः १ दग सगु/ हमार
३ १.२२ १.२ ३ ३. ३. ३. ३.

सो योजन का दल ऊपर छोड़ कर, बीच में आठ सो योजन का पोलार है । जिसमें सोलह जाति के व्यन्तर के नगर हैं । ये नगर कुछ तो भरत क्षेत्र के समान हैं । कुछ इन से बड़े महाविदेह क्षेत्र समान हैं । और कुछ जंजु द्वीप समान बड़े हैं ।

पृथ्वी का सो योजन का दल जो ऊपर है, उसमें से दश योजन का दल नीचे व दश योजन का दल ऊपर छोड़ कर, बीच में भरती योजन का पोलार है । इन में दश जाति के जृम्भिका देव रहते हैं जो संप्रदाय समय, मध्य रात्रि को, सुबह व दोपहर को ' अस्तु ' ' अस्तु ' करते हुए फिरते रहते हैं (जो हंसता हो वो हंसते रहना, रोता हो वो रोते रहना, इस प्रकार कहते फिरते हैं) अतएव हम समय ऐसा बना नहीं बोलना चाहिये । पडाङ्ग, पर्युत व वृष ऊपर तथा वृष नीचे व मन को जो जगह अच्छी लागे वही ये देव आकर बैठते हैं तथा रहते हैं ।

उपनिषद् विषयः—इनके दश भेद १ चन्द्रमा २ सूर्य ३ वायु ४ नक्षत्र ५ तारे । ये पाँच उपनिषद् देव अर्द्ध द्वीप में भर हैं व अर्द्ध द्वीप के बाहर ये पाँच अणु (स्थिर) हैं । इन देवों की गाथाः—

उत्पन्न हुए हैं । वो कैसे ? तोषैदा, केतली, माधु, साधो के अथवाद बोलने से ये किन्तिपी देव हुए हैं ।

वारह देवलोक—१ सुपर्मा देवलोक २ इशान देवलोक ३ सनेत कुमार देवलोक ४ महेन्द्र देवलोक ५ ब्रह्म देवलोक ६ लांतक देवलोक ७ महाशुक देवलोक ८ सहपार देवलोक ९ आणत देवलोक १० प्राणा देवलोक ११ आरण्य देवलोक १२ अच्यून देवलोक ।

वारह देवलोक कितने ऊँचे, किस आकार के, व इन के कितने कितने विमान हैं, इसका विवेचन उद्योतिपी चरु के ऊपर असंख्यात योजन की करोड़ा करोड़ प्रमाणे ऊँचा जाने पर पहेला सुपर्मा व दूसरा इशान ये दो देवलोक आते हैं जो लगड़ाकार हैं । व एक एक अर्ध चन्द्रमा के आकार (समान) हैं और दोनों मिल कर पूर्ण चन्द्रमा के आकार (समान) हैं । पहले में ३२ लाख और दूसरे में २८ लाख विमान हैं । यहाँ से असंख्यात योजन की करोड़ा करोड़ प्रमाणे ऊँचे जाने पर तीसरा सनेत कुमार व चौथा महेन्द्र ये दो देवलोक आते हैं । जो लगड़ा (टाँचा) के आकार हैं । एक एक अर्ध चन्द्रमा के आकार का है । दोनों मिल कर पूर्ण चन्द्रमा के आकार (समान) हैं । तीसरे में पाण्ड लाख व चौथे में आठ लाख विमान हैं । यहाँ से असंख्यात योजन का करोड़ा करोड़ प्रमाणे ऊँचा जाने पर पाँचवा ब्रह्म देवलोक आता है । जो पूर्ण चन्द्रमा के

श्रीक आती है । ये देवलोक गागर देवदे के समान है ।
इनके नाम:-१ भद्र २ सुभद्र ३ गुजान, इस पड़ती श्रीक
में १११ विमान हैं । यहां से असंख्यात योजन के करोड़ा
करोट प्रमाणे ऊंचा जाने पर दूसरी श्रीक आती है । यह
भी गागर देवदे के (आकार) समान है । इनके नाम ४
सुमानम ५ प्रिय दर्शन ६ सुदर्शन इस श्रीक में १०७
विमान हैं । यहां से असंख्यात योजन के करोड़ा करोड़
प्रमाणे ऊंचा जाने पर तीसरी श्रीक आती है, जो गागर
देवदे के समान है । इनके नाम ७ समोष ८ सुप्रतिपुद्ध
९ यशोधर इस श्रीक में १०० विमान हैं ।

पांच अनुत्तर विमान

नववीं श्रेणिक के ऊपर असंख्यात योजन की करोड़ा
करोट प्रमाणे ऊंचा जाने पर पांच अनुत्तर विमान आते
हैं । इनके नाम:-१ विजय २ विजयंत ३ जयंत ४ अपराजित
५ सर्वार्थ सिद्ध । ये सर्व मिल कर ८४, ६७, ०२३ विमान
हुवे । देव की स्थिति जघन्य दश हजार वर्ष की, उत्कृष्ट
३३ सागरोपम की । देव का "कुल" २६ लाख करोड़ जानना ।

सिद्ध शिला का वर्णन ।

सर्वार्थ सिद्ध विमान की ध्वजा पताका से १२ योजन
ऊंचा जाने पर सिद्ध शिला आती है । यह ४५ लाख योजन
की लम्बी चौड़ी व गोल और मध्य में ८ योजन की
जाड़ी, और चारों तरफ से क्रम से घटती २ किनारे पर

मयखी के पंख से भी अधिक पतली है । शुद्ध सुवर्ण से भी अधिक उज्ज्वल, गोचीर समान, शंख, चन्द्र, वंश (इगुला) रत्न, चांदी, मोती का हार, व चीर सागर के जल से भी अत्यन्त उज्ज्वल है । इस सिद्ध शिला के चारह नाम-१ इषत् २ इषत् प्रभार ३ तनु ४ तनु तनु ५ सिद्धि ६ सिद्धान्त ७ मुक्ति = सुवर्ण ८ लोकाग्र ९ लोकस्तुभिका ११ लोक प्रति बोधिका १२ सर्व प्राणी भूत जीव सत्त्व सौख्य वादिका । इसकी परिधि (घेराव) १, ४२, ३०, २४६ योजन, एक कोस १७६६ धनुष पोने छे आहुल जायेगी है । इस शिला के एक योजन ऊपर जाने पर-एक योजन के चार हजार कोस में से ३६६६ कोस नीचे छोड़ कर शेष एक कोस के छे भाग में से पाँच भाग नीचे छोड़ कर शेष एक भाग में सिद्ध भगवान विराज मान हैं । यदि ५०० धनुष की अवगाहन पाले सिद्ध हुये हो तो ३३३ धनुष और ३२ आहुल की (क्षेत्र) अवगाहना होती है । सात हाथ के सिद्ध हुये हो तो चार हाथ और सोलह आहुल की (क्षेत्र) अवगाहना होती है । व दो हाथ के सिद्ध हुये हो तो एक हाथ और आठ आहुल की (क्षेत्र) अवगाहना होती है । ये सिद्ध भगवान कैसे हैं ? अवर्णा, अगन्धी अरमा, अस्पृशी, जन्म मरण रजित और आन्धिक गुण रहित हैं । ऐसे सिद्ध भगवान का भोग मनन मन्त्र पर उदना नमस्कार होवे

(६७)

नाम	कुल करोडा	आयुष्य	वर्ष	संस्थान	मृत्यु में उ. जन्म मरण
१. १. १. १	५ करोड	६ मास	"	"	४०
१. १. १. १	६ लाख	{ ज. १०००० व. (उ. ३३ सागर	"	"	१
१. १. १. १	२५ लाख	३ वन्योपम	"	"	१
१. १. १. १	३३॥ लाख	३ वन्योपम	"	"	१
१. १. १. १	१२ लाख	{ ज. १०००० व. (उ. ३३ मागरो	"	"	१
१. १. १. १	२६ लाख	पम	"	"	१

१. १. १. १ ३३ ३३ उपम्य ३ भव ।

॥ इति छः काय का बोल सम्पूर्ण ॥

२५ बोल ।

१ पहले बोले 'गति चार-१ नरक गति २ तिर्यक् गति ३ मनुष्य गति ४ देव गति ।

२ दूसरे बोले 'जाति पांच-१ एकेन्द्रिय २ द्वेन्द्रिय ३ त्रीन्द्रिय ४ चारिन्द्रिय ५ पंचेन्द्रिय ।

३ तीसरे बोले 'काय छः-१ पृथ्वी काय २ अप काय ३ तेजस् काय ४ वायु काय ५ वनस्पति काय ६ व्रस काय ।

४ चौथे बोले 'इन्द्रिय पांच-१ श्रोत्रेन्द्रिय २ चक्षु इन्द्रिय ३ घ्राणेन्द्रिय ४ रसेन्द्रिय ५ स्पर्शेन्द्रिय ।

५ पांचवे बोले 'पर्याप्ति छः-१ आधार पर्याप्ति २ शरीर पर्याप्ति ३ इन्द्रिय पर्याप्ति ४ आसोश्वास पर्याप्ति ५ भाषा पर्याप्ति ६ मनः पर्याप्ति ।

६ छठे बोले 'प्राण दश-१ श्रोत्रेन्द्रिय प्रल प्राण २

१ जहा पर जीवों का आयागमन (जाना जाना) होवे वह गति है ।

२ एक ही होना-एकाकार होना जाति है ।

३ समूह तथा बहुत प्रदेशी वस्तु को काय कहते हैं ।

४ शब्द, रूप, रस, गन्ध, स्पर्श आदि धर्मों का जिसके द्वारा ग्रहण होता है उसे इन्द्रिय कहते हैं । ये पांच हैं-१ कान २ आँख ३ नाक ४ जीभ ५ त्वरि (गले में पैर तक घट)

५ हाहागदि रूप पुत्रल ही परिशुभन करने की कविता (यन्त्र) का प्रसिद्धि कहते हैं ।

६ पर्याप्ति धर्म यन्त्र के मदद करने वाले वस्तु (यन्त्र) का प्रसिद्धि करने हैं ।

चक्षु इन्द्रिय बल प्राण ३ घ्राणेन्द्रिय बल प्राण ४ रसेन्द्रिय बल प्राण ५ स्पर्शेन्द्रिय बल प्राण ६ मनः बल प्राण ७ वचन बल प्राण ८ काय बल प्राण ९ श्वासेश्वास बल प्राण १० आगूष्य बल प्राण ।

७ सामर्थ्ये चोले 'शरीर पांच-१ औदारिक २ वैक्रिय ३ आहारिक ४ तैजस ५ कार्मण ।

८ आठवें चोले 'योग पन्द्रह-१ मत्स्य मन योग २ अमत्स्य मन योग ३ मिथ्य मन योग ४ व्यवहार मन योग ५ मत्स्य वचन योग ६ अमत्स्य वचन योग ७ मिथ्य वचन योग ८ व्यवहार वचन योग ९ औदारिक शरीर काय योग १० औदारिक मिथ्य शरीर काय योग ११ वैक्रिय शरीर काय योग १२ वैक्रिय मिथ्य शरीर काय योग १३ आहारिक शरीर काय योग १४ आहारिक मिथ्य शरीर काय योग १५ कार्मण काय योग । चार मनका, चार वचन का ३ मान काय का चरं प-द्रह योग ।

९ नवमं चोले 'उपयोग बारह ।

पांच ज्ञान का-१ मनि ज्ञान २ धून ज्ञान ३ अरवि ज्ञान ४ मनः पदर ज्ञान ५ वेचन ज्ञान ।

१० आठवें चोले 'उपयोग बारह-१ मनि ज्ञान २ धून ज्ञान ३ अरवि ज्ञान ४ मनः पदर ज्ञान ५ वेचन ज्ञान ६ मनि ज्ञान ७ धून ज्ञान ८ अरवि ज्ञान ९ मनः पदर ज्ञान १० वेचन ज्ञान ।

११ आठवें चोले 'उपयोग बारह-१ मनि ज्ञान २ धून ज्ञान ३ अरवि ज्ञान ४ मनः पदर ज्ञान ५ वेचन ज्ञान ६ मनि ज्ञान ७ धून ज्ञान ८ अरवि ज्ञान ९ मनः पदर ज्ञान १० वेचन ज्ञान ।

१२ आठवें चोले 'उपयोग बारह-१ मनि ज्ञान २ धून ज्ञान ३ अरवि ज्ञान ४ मनः पदर ज्ञान ५ वेचन ज्ञान ६ मनि ज्ञान ७ धून ज्ञान ८ अरवि ज्ञान ९ मनः पदर ज्ञान १० वेचन ज्ञान ।

ત્રીન અજ્ઞાન કા-૧ મતિ અજ્ઞાન ૨ શ્રુત અજ્ઞાન
૩ વિભેગ અજ્ઞાન ।

चार दर्शन के-१ चक्षु दर्शन २ श्रवण दर्शन
३ श्रवण दर्शन ४ केवल दर्शन एवं चारह उपयोग ।

१० दशर्वे घोले 'कर्म' आठ-१ ज्ञानावरणीय
२ दर्शना वरणीय ३ वेदनीय ४ मोहनीय ५ आयुष्य ६ नाम
७ गोत्र और = अन्तराय ।

११ इत्याहवै घोले गुण "स्यानक चौदह ।

१ मिथ्यात्व गुणस्थानक २ सास्त्रादान गुणस्थानक
३ मिथ्र गुणस्थानक ४ अग्रती समष्टि गुणस्थानक ५ देश
ग्रती गुणस्थानक ६ प्रमत्त संयति गुणस्थानक ७ अग्रमत्त
संयति गुण स्थानक = (निमट्टी) निवर्तीबादर गुण स्थानक
८ (अनियट्ट) अनिवर्ती बादर गुण स्थानक १० सुद्धम
संपराय गुण स्थानक ११ उपशान्त मोहनीय गुण स्थानक
१२ क्षीण मोहनीय गुणस्थानक १३ सयोगी केवली गुण
स्थानक १४ अयोगी केवली गुण स्थानक ।

१२ पारह्ये पोले पांच इन्द्रिय के २३ "विषय

१० जल को दा बाव में घुमावे, बिभाव दरा में दरावे व अन्य वन में दिवाव को बम है ।

[illegible]

1950年1月1日

१ श्रोत्रेन्द्रिय के तीन विषय-१ जीव शब्द

२ अजीव शब्द ३ मित्र शब्द ।

२ चक्षु इन्द्रिय के पांच विषय-१ कृष्ण वर्ण

२ नील वर्ण ३ रक्त वर्ण ४ पीत (पीला) वर्ण ५ श्वेत (सफेद) वर्ण ।

३ घ्राणेन्द्रिय के दो विषय-१ सुरभि गन्ध

२ दुरभि गन्ध ।

४ रसेन्द्रिय के पांच विषय-१ तीक्ष्ण (तीखा

२ षडुक्क (फड़वा) ३ कषायित (कषायला) ४ खट्ट (खट्टा) ५ मधुर (मीठा) ।

५ स्पर्शेन्द्रिय के आठ विषय-१ कर्कश २ मृदु

३ गुरु ४ लघु ५ शीत ६ उष्ण ७ स्निग्ध (चिकना) ८ रुक्ष (लुगा) एवं २३ विषय ।

१३ तेरहवें बोले "मिथ्यात्व दश-१ जीव

अजीव समझे तो मिथ्यात्व २ अजीव को जीव समझे

मिथ्यात्व ३ धर्म को अधर्म समझे तो मिथ्यात्व ४ अधर्म को धर्म समझे तो मिथ्यात्व ५ साधु को असाधु सम

झे तो मिथ्यात्व ६ असाधु को साधु समझे तो मिथ्यात्व

७ सुमार्ग (शुद्ध मार्ग) को कुमार्ग समझे तो मिथ्यात्व

८ कुमार्ग को सुमार्ग समझे तो मिथ्यात्व ९ मर्त्य दुःख

१० अमर्त्य सुख ११ मर्त्य सुख १२ अमर्त्य दुःख १३ मर्त्य दुःख १४ अमर्त्य सुख १५ मर्त्य सुख १६ अमर्त्य दुःख १७ मर्त्य दुःख १८ अमर्त्य सुख १९ मर्त्य सुख २० अमर्त्य दुःख २१ मर्त्य दुःख २२ अमर्त्य सुख २३ मर्त्य दुःख

नेत्रियों का एक दण्डक १, दश भवनपति देव क दण्डक, ११, पृथ्वी काय का एक, १२, अप काय का एक, १३, तेजस् काय का एक, १४, वायु काय का एक, १५, धनरपति काय का एक, १६ वेदन्द्रिय का एक, १७ श्रीन्द्रिय का एक, १८, चैरिन्द्रिय का एक, १९, त्रिन्द्रिय का एक, २०, मनुष्य का एक, २१, बाणव्यन्तर का एक, २२, ज्योतिर्गो का एक, २३, वैमानिक का एक, २४

१७ सत्तरवें बोलें = उरया छः-१ कृष्ण लेरया नील लेरया ३ काषोण लेरया ४ तेजो लेरया ५ प लेरया ६ शुभ्र लेरया ।

१८ अठारवें बोलें दृष्टि तान-१ सम्यक् (सुस्पष्ट) दृष्टि २ मिथ्या दृष्टि ३ सिद्ध दृष्टि ।

१९ उर्ध्व, सवें बोलें ४ ध्यान चार-१ आर्त ध्यान २ गीत ध्यान ३ धर्म ध्यान ४ शुक्ल ध्यान ।

२० बीसवें बोलें पद (छ) अद्वय के ३० भेद ।
१ नर्माग्नि काय के पाँच भेद-१ द्रव्य में एक

कालवत्ता काय के नव प्रकाश के गुणागुण मात्र के भेद करत हैं । काय वत्ता कालवत्ता वत्ता में कदा का वत्ता ही रहता है ।
" अग्निमा अग्निमा को दृष्टी को नष्ट नष्टता भवन को
अग्निमा ॥ १५५ ॥

करुं नहीं, कराऊं नहीं, अनुमोदूं नहीं, वचन से । ३ करुं नहीं, कराऊं नहीं, अनुमोदूं नहीं, काया से ।

आंक एक यत्तीस का-तीन करण व दो योग से, त्याग करे । मांगा तीन—

१ करुं नहीं, कराऊं नहीं, अनुमोदूं नहीं, मन से, वचन से । २ करुं नहीं, कराऊं नहीं, अनुमोदूं नहीं, मन से काया से । ३ करुं नहीं, कराऊं नहीं, अनुमोदूं नहीं, वचन से, काया से ।

आंक एक नेंतीस का-तीन करण व तीन योग से त्याग लेवे । मांगा एक—

१ करुं नहीं, कराऊं नहीं, अनुमोदूं नहीं, मन से वचन से, काया से । एवं ४६ मांगा सम्पूर्ण ।

२५ पच्चीशवं बोले 'चारित्र्य पांच-१ सामाधिक चारित्र्य २ छेदोपस्थानिक चारित्र्य ३ रिहार विशुद्ध चारित्र्य ४ वृत्तम संपराय चारित्र्य ५ यथारुणाव चारित्र्य ।

॥ इति पच्चीस बोले सम्पूर्ण ॥



१ आत्मनः कं वरं भावे मे न २ न ता आरं स्वयं व मे रक्षणं करणं

३ धर्मिक ४

५

सिद्ध द्वार

१ पहिली नरक के निकले हुवे एक समय में जघन्य एक सिद्ध होवे, उत्कृष्ट दश सिद्ध होते हैं ।

२ दूसरी नरक के निकले हुवे एक समय में जघन्य एक सिद्ध, उत्कृष्ट दश सिद्ध होते हैं ।

३ तीसरी नरक के निकले हुवे एक समय में जघन्य एक सिद्ध, उत्कृष्ट दश सिद्ध होते हैं ।

४ चौथी नरक के निकले हुवे एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट चार सिद्ध होते हैं ।

५ भवन पति के निकले हुवे एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट दश सिद्ध होते हैं ।

६ भवन पति की देवियों में से निकले हुवे एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट पांच सिद्ध होते हैं ।

७ पृथ्वी काय के निकले हुवे एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट चार सिद्ध होते हैं ।

८ अपकाय के निकले हुवे एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट चार सिद्ध होते हैं ।

९ वनस्पति काय के निकले हुवे एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट छः सिद्ध होते हैं ।

१० निर्धन रमज के निकले हुवे एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट दश सिद्ध होते हैं ।

११ निर्घञ्जनी में से निकले हुये एक समय में जपन्य एक, उत्कृष्ट दश मिद्ध होते हैं ।

१२ मनुष्य गर्भ में से निकले हुये एक समय में जपन्य एक, उत्कृष्ट दश मिद्ध होते हैं ।

१३ मनुष्य की में से निकले हुये एक समय में जपन्य एक, उत्कृष्ट बीस मिद्ध होते हैं ।

१४ बाण व्यन्तर में से निकले हुये एक समय में जपन्य एक, उत्कृष्ट दश मिद्ध होते हैं ।

१५ बाण व्यन्तर की देवियों में से निकले हुये एक समय में जपन्य एक, उत्कृष्ट पाँच मिद्ध होते हैं ।

१६ उषे निषी के निकले हुये एक समय में जपन्य एक मिद्ध, उत्कृष्ट दश मिद्ध होते हैं ।

१७ अर्वाणि की देवियों में से निकले हुये एक समय में जपन्य एक, उत्कृष्ट बीस मिद्ध होते हैं ।

१८ वैशानिक के निकले हुये एक समय में जपन्य एक मिद्ध, उत्कृष्ट १०८ मिद्ध होते हैं ।

१९ वैशानिक की देवियों में से निकले हुये एक समय में जपन्य एक, उत्कृष्ट बीस मिद्ध होते हैं ।

२० अर्वाणि एक समय में जपन्य एक, उत्कृष्ट १०८ मिद्ध होते हैं ।

२१ अन्य मिद्ध एक समय में जपन्य एक, उत्कृष्ट दश मिद्ध होते हैं ।

३३ नदी प्रसृत जल के अन्दर एक समान में जघन्य एक, उत्कृष्ट तीन सिद्ध होते हैं ।

३४ तीर्थ सिद्ध होने तो एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते हैं ।

३५ अतीर्थ सिद्ध होने तो एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट दस सिद्ध होते हैं ।

३६ तीर्थकर भिन्न होने तो, एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट बीस सिद्ध होते हैं ।

३७ अतीर्थकर सिद्ध होने तो एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते हैं ।

३८ स्वयं बोध (बुद्ध) सिद्ध होने तो एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट चार सिद्ध होते हैं ।

३९ प्रति बोध सिद्ध होने तो, एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट दश सिद्ध होते हैं ।

४० पुष्प बोधी सिद्ध होने तो, एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते हैं ।

४१ एक भिन्न होने तो, एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट एक सिद्ध होते हैं ।

४२ अनन्त सिद्ध होने तो, एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते हैं ।

४३ १११ १-२ ११ एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते हैं ।

५५ छोटे आरे में एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट दस सिद्ध होते हैं।

५६ अग्रमणिणी में एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते हैं।

५७ उत्तमणिणी में एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते हैं।

५८ नोत्रमणिणी नो अग्रमणिणी में एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते हैं।

य ५८ बोन अन्तर मदिन एक समय में जघन्य, उत्कृष्ट त्रौ सिद्ध होते हैं मो नदे हैं। अब अन्तर रदिन आठ समय तक यदि सिद्ध होये तो कितने होते हैं ? मो नदने हैं।

१ बदने समय में जघन्य एक उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते हैं।

२ दुगरे " " " " " १०२ " "

३ त्रीमो " " " " " ६६ " "

४ चारो " " " " " ८४ " "

५ पांचो " " " " " ९२ " "

६ छठे " " " " " ६ " "

७ सातवें " " " " " " " "

८ आठवें " " " " " " " "

२ वैक्रिय शरीर ३ आहारिक शरीर ४ तेजसू शरीर ५ कार्माण शरीर ।

इनके लक्षणः-औदारिक शरीर-जो मड़ जाय, पड़ जाय, गल जाय, नष्ट होजाय, बिगड़ जाय व मरने बाद कलेवर पड़ा रहे। उसे औदारिक शरीर कहते हैं।

२ (औदारिक का उलटा) जो सड़े नहीं, पड़े नहीं गले नहीं, नष्ट होवे नहीं व मरने बाद बिखर जावे उसे वैक्रिय शरीर कहते हैं।

३ चौदह पूर्व घागी सुनिषों को जब शङ्खा उतरा म होती है, तब एक हाथ की काया का पुनर्जा बना कर महाविदेह क्षेत्र में श्री भीमंदर स्वामी ने प्रश्न पूछने को भेजे । प्रश्न पूछ कर पीछे आने बाद यदि आलोचना करे तो आराधक व आनांषना नहीं करे तो आराधक कहलाते हैं। इसे आहारिक शरीर कहते हैं।

४ तेजसू शरीर:-जो आहार करते उसे पचाने को तेजसू शरीर ।

५ कार्माण शरीर:- ईश्वर के प्रदेश व रूप के पुद्गल जो मिले हुए हैं ।

अतः प्रत्येक शरीर का एक विशेष लक्षण है । इन लक्षणों के अनुसार ही हमें अपने शरीर का प्रकार जानना पड़ेगा ।

के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट हजार योजन जाजेरी—(वनस्पति-
आश्री) ।

वैक्रिय शरीर की—मव धारणिक वैक्रिय की जघन्य
अहुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट ५०० घनुप्य की ।

उत्तर वैक्रिय की जघन्य हुल के असंख्यातवें
भाग उत्कृष्ट लक्ष योजन की ।

आहारिक शरीर की जघन्य मूढा हाथ की उत्कृष्ट
एक हाथ का ।

तेजम् शरीर व कार्माण् शरीर की अवगाहन जघन्य
अहुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट चौदह राज लोक प्रमाणे
तथा अपने अपने शरीर अनुसार ।

(३)संघयन द्वारः—संघयन छः-१ वज्र ऋषभ नाराच
संघयन २ ऋषभ नाराच संघयन ३ नाराच संघयन ४ अर्ध
नाराच संघयन ५ कीलिका संघयन ६ सेवार्च संघयन ।

१ वज्र ऋषभ नाराच संघयन—वज्र अर्थात् किल्ली,
ऋषभ याने लपेटने का पाटा अर्थात् ऊपर का घेष्टन,
नाराच याने दोनों ओर का मर्कट बंध अर्थात् सन्धि-और
संघयन याने हाइको का मंचय- अर्थात् जिस शरीर में हाइके
दो पृष्ठ में, मर्कट बंध में बंधे हुवे हों, पाटे के नमान हाइके
बीटे हुवे हो व तीन हाइको के अन्दर वज्र की किल्ली लगी
हुई हो वो वज्र ऋषभ नाराच संघयन (अर्थात् जिस शरीर

की दृष्टियां, दृष्टी की संधियां व ऊपर का बैठन वज्र का होवे व किसी भी वज्र की होवे) ।

२ अधोम नाराच संधयन—ऊपर लिखे अनुसार अंतर केवल इतना कि इसमें वज्र अर्थात् किसी नहीं होती है ।

३ नाराच संधयन—जिसमें केवल दोनों तरफ मर्कट बंध होते हैं ।

४ अर्ध नाराच संधयन—जिसके एक तरफ मर्कट बंध व दूसरी (पड़दे) तरफ किसी होती है ।

५ फीलिका संधयन—जिसके दो दृष्टियों की संधि पर किसी लगी हुई होवे ।

६ सेवार्च संधयन—जिसकी एक दृष्टी दूमरी दृष्टी पर चढ़ी हुई हो (अथवा जिसके दाढ़ अलग अलग हो, परंतु चमड़े से बंधे हुवे हो) ।

(४) संस्थान द्वार—संस्थान छः—१ ममचतुरस्र संस्थान २ त्रिप्रोथ परिमण्डल संस्थान ३ गार्दिक संस्थान ४ वामन संस्थान ५ कुब्ज संस्थान ६ हृण्डक संस्थान ।

१ पाँच में लगा कर ममक तक माग शरीर मुन्दगाकार अथवा गोमायनान होवे तो ममचतुरस्र संस्थान ।

२ तिस शरीर का नाभि से ऊपर तक का हिस्सा मुन्दगाकार हो (वट्टाकार हो) अथवा गोमायनान हो (वट्टाकार हो) तब त्रिप्रोथ परिमण्डल संस्थान हो ।

३ जो केवल पाँव में लगा कर नाभि (या कटि) तक सुन्दर होवे सो सादिक संस्थान ।

४ जो ठेगना (५२ अङ्गुल का) हो सो वामन संस्थान ।

५ जिस शरीर के पाँव, हाथ, मस्तक, ग्रीवा न्यूनाधिक हो व कुबड़ निकली होवे और शेष अवयव सुंदर होवे सो कुम्भ संस्थान ।

६ हृण्डक संस्थान—लंड, मूँढ, मृगा पुत्र, रोहवा के शरीर के समान अर्थात् सारा शरीर बेडौल होवे सो हृण्डक संस्थान ।

(५) कषाय द्वार—कषाय चार—१ क्रोध २ मान ३ माया ४ लोभ ।

(६) संज्ञा द्वारः—संज्ञा चार—१ आहार संज्ञा २ भय संज्ञा ३ मैथुन संज्ञा ४ परिग्रह संज्ञा ।

(७) लेश्या द्वारः—लेश्या छः—१ कृष्ण लेश्या २ नील लेश्या ३ कापोत लेश्या ४ तेजो लेश्या ५ पेंश लेश्या ६ शुक्र लेश्या ।

(८) इन्द्रिय द्वारः—इन्द्रिय पाँच—१ ध्रुतेन्द्रिय २ चक्षु इन्द्रिय ३ घ्राणेन्द्रिय ४ रसेन्द्रिय ५ स्पर्शेन्द्रिय ।

(९) समुद्घात द्वारः—समुद्घात सात—१ वेदनीय समुद्घात २ कषाय समुद्घात ३ मारणांतिक समुद्घात

४ वैक्रिय समुद्धात ५ तेजस् समुद्धात ६ आहारि समुद्धात ७ केवल समुद्धात ।

(१०) संज्ञा असंज्ञा द्वारः-जिनमें विचार करने की (मन) शक्ति होवे सो संज्ञी और जिनमें (मन) विचार करने की शक्ति नहीं होवे सो असंज्ञी ।

(११) वेद द्वार-वेद तीन-१ स्री वेद २ पुरुष वेद ३ नपुमंक वेद ।

(१२) पार्याप्ति द्वार-पार्याप्ति छः-१ आहार पार्याप्ति २ शरीर पार्याप्ति ३ इन्द्रिय पार्याप्ति ४ अःसोऽधाम पार्याप्ति ५ मनः पार्याप्ति ६ भाषा पार्याप्ति ।

(१३) दृष्टि द्वार-दृष्टि तीन-१ समयत् दृष्टि २ विभक्त्य दृष्टि ३ गम विध्वारय (विध्व) दृष्टि ।

(१४) दर्शन द्वार-दर्शन चार-१ पक्ष दर्शन २ अपक्ष दर्शन ३ अगधि दर्शन ४ केवल दर्शन ।

(१५) ज्ञान अज्ञान द्वार-ज्ञान पाँच-१ ननि ज्ञान २ भूत ज्ञान ३ अगधि ज्ञान ४ मनः पक्ष ज्ञान ५ केवल ज्ञान । अज्ञान तीन-१ मति अज्ञान २ भूत अज्ञान ३ निमग्न ज्ञान ।

(१६) योग द्वार-योग पन्द्रह-१ गम्य मन योग २ अगम्य मन योग ३ मित्र मन योग ४ स्वरदा मन योग ५ भोग ६ अगम्य अपन योग ७ मित्र रमन योग ८ उपन योग ९ धातु योग १० धातु योग ११ धातु योग १२ धातु योग १३ धातु योग १४ धातु योग १५ धातु योग ।

२० स्थिति द्वारः—स्थिति जपन्य अन्तर ४४४ की उरुष्ट तैर्वाग सागरोपम की ।

२१ मरण द्वारः—ममोदिया मरण, असमोदिया मरण । ममोदिया मरण जो भीटी की चाल के समान चाले व असमोदिया मरण जो दही के समान चाले (अथवा पन्ध्र की गोला समान)

२२ पचन द्वारः—चोबीस ही दण्डक में जावे—पहले कहे अनुसार ।

आगति द्वारः—चार गति में मे जावे १ नरक गति में मे २ निर्वाण गति में मे ३ मनुष्य गति में मे ४ देव की गति में मे ।

गति द्वारः—पाँच गति में जावे १ नरक गति में २ निर्वाण गति में ३ मनुष्य गति में ४ देव गति में ५ मित्र गति में ।

॥ इति समुच्चय चोर्ध्वस द्वार ॥

नारकी का एक तथा देवता के नरक दुगडक

गर्भ ११ दुगडक लिखने

गर्भ - - -

भयन पति व बाणव्यन्तर में चार लेखा १ कृष्ण
२ नील ३ काशोत्त ४ तेजो ।

उपोतिगी, पहेला व दूसरा देवलोक में—१ तेजो लेखा ।
तीसरे, चौथे व पांचवें देवलोक में—१ पद्म लेखा ।
द्विदे देवलोक से नव मैत्रेय (प्रीयवेक) तक १ शुक्ल लेखा ।
पाँच अनुत्तर विमान में—१ परम शुक्ल लेखा ।

८ इन्द्रिय द्वारा:—

मरक में पाँच व देवलोक में पाँच इन्द्रिय ।

९ समुद्र घात द्वारा:—

नगर में चार मनुष्यात्मा १ वेदनीय २ कषा
३ मारणात्मिक ४ वैक्रिय ।

देवताओं में पाँच— १ वेदनीय २ कषाय ३ मारणात्मिक
४ वैक्रिय ५ तेजस ।

भयन पति में बाह्यद्वै देवलोक तक पाँच समुद्र
५ प्रीयवेक में पाँच अनुत्तर विमान तक तीन समुद्र
१ वेदनीय २ कषाय ३ मारणात्मिक ।

१० संज्ञी द्वारा —

पहला नगर म १ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९ १० ११ १२
में १३

१४ १५ १६ १७

१८ १९ २०

२१ २२ २३

२४ २५

२६ २७

मयन पति व चारुव्यन्तर में चार लेख्या १ कृष्ण
२ नील ३ कापोत ४ तेजो ।

ज्योतिषी, पहेला व दूसरा देवलोक में—१ तेजो लेख्या ।
तीसरे, चौथे व पांचवें देवलोक में—१ पद्म लेख्या ।
छठे देवलोक से नव श्रैवेक (श्रीयवेक) तक १ शुक्ल लेख्या ।
पांच अनुत्तर विमान में—१ परम शुक्ल लेख्या ।

८ इन्द्रिय द्वारः—

नरक में पाँच व देवलोक में पाँच इन्द्रिय ।

९ समुद्र धान द्वारः—

नरक में चार समुद्रपात १ वेदनीय २ कषाय
३ मारणांतिक ४ वैक्रिय ।

देवताओं में पाँच—१ वेदनीय २ कषाय ३ मारणांतिक
४ वैक्रिय ५ तेजम् ।

मयन पति में चारहवें देवलोक तक पाँच समुद्रपात
नर श्रैयवेक में पाँच अनुत्तर विमान तक तीन समुद्रपात
१ वेदनीय २ कषाय ३ मारणांतिक ।

१० संज्ञी द्वारः—

पदनों नरक में संज्ञी व ८ अमंज्ञी और गुप्त नरकों
में संज्ञी ।

• समुद्र निर्गम नर का इस पति में उल्लेख होने है, कारणोंका प्रमाण के
अपेक्षा है । यह भी होने का अर्थ है तथा विमान का उल्लेख होता है ।
इस क्षेत्र में उल्लेख का है ।

ग्रीयवेक तक तीन ज्ञान व तीन अज्ञान । सब अनुत्तर विमान में केवल तीन ज्ञान, अज्ञान नहीं ।

१६ यो १ द्वार:-

नरक में तथा देवलोक में इग्यारह इग्यारह योग-
१ सत्य मनयोग २ असत्य मनयोग ३ मिश्र मन योग
४ उपवहार मनयोग ५ सत्य वचन योग ६ असत्य वचन योग
७ मिश्र वचन योग ८ उपवहार वचन योग ९ वैक्रिय शरीर
काय योग १० वैक्रिय मिश्र शरीर काय योग ११ कर्मण शरीर
काय योग ।

१७ उपयोग द्वार:-

नरक, व भवन पति से नव ग्रीयवेक तक उपयोग
नव-१ मति ज्ञान उपयोग २ भुत ज्ञान उपयोग ३ अवधि
ज्ञान उपयोग ४ मति अज्ञान उपयोग ५ भुत अज्ञान उप-
योग ६ विर्मम ज्ञान उपयोग ७ वस्तु दर्शन उपयोग
८ अवस्तु दर्शन उपयोग ९ अवधि दर्शन उपयोग ।

पंच अनुत्तर विमान में ६ उपयोग तीन ज्ञान और
तीन दर्शन ।

१८ आहार द्वार:-

नरक व देवलोक में दो प्रकार का आहार १ भोजन
२ रोम छः ही दिशाओं का आहार लेते हैं । परन्तु लेते
हैं एक प्रकार का-नेरिये अचित्त आहार करते हैं किन्तु
अशुभ और देवता भी अचित्त आहार करते हैं किन्तु शुभ ।

१६ उत्पत्ति द्वार और २२ नश्यन द्वार:-

पटेली नरक से छहों नरक तक मनुष्य व तिर्यक पंचेन्द्रिय-इन दो दण्डक के आगे हैं-३ दो ही (मनुष्य, तिर्यक) दण्डक में जाते हैं ।

सातवीं नरक में दो दण्डक के आगे हैं-मनुष्य व तिर्यक, व एक दण्डक में-तिर्यक पंचेन्द्रिय-में जाते हैं ।

मयन पति, वायु प्यन्तर, ज्योतिषी तथा पहले दुमरे देवलोक में दो दण्डक-मनुष्य व तिर्यक के आगे हैं व पांच दण्डक में जाते हैं १ पृथ्वी २ अथ ३ वनस्पति, ४ मनुष्य ५ तिर्यक पंचेन्द्रिय ।

तीसरे देवलोक से आठवें देवलोक तक दो दण्डक मनुष्य और तिर्यक-का आगे और दो ही दण्डक में जावे ।

नवमं देवलोक से अनुत्तर विमान तक एक दण्डक मनुष्य का आगे और एक मनुष्य-ही में जावे ।

२० स्थिति द्वार:-

पहले नरक के नेरियों की स्थिति अघन्य दश हजार वर्ष की, उत्कृष्ट एक सागर की ।

दूसरे नरक की ज० १ सागर की, उ० ३ सागर की ।

तीसरे नरक की ज० ३ सागर की, उ० ७ सागर की ।

चौथे नरक की ज० ७ सागर की, उ० १० सागर की ।

पांचवें नरक की ज० १० सागर की, उ० १७ सागर की ।

छठे नरक की ज० १७ सागर की, उ० २२ सागर की ।

मातर्वे नरक की ज० २२ सागर की, उ० ३३ सागर की ।

दक्षिण दिशा के भगुर कुमार के देव की स्थिति जघन्य दश हजार वर्ष की उत्कृष्ट एक सागरोपम की । इनकी देवियों की स्थिति जघन्य दश हजार वर्ष की उत्कृष्ट ३॥ पद्मोपम की । इनके नवनिर्माण के देवों की स्थिति जघन्य दश हजार वर्ष की उत्कृष्ट १॥ पद्मोपम की । इनकी देवियों की स्थिति जघन्य दश हजार वर्ष की उत्कृष्ट पौन पद्म की ।

उत्तर दिशा के भगुर कुमार के देवों की स्थिति जघन्य दश हजार वर्ष की, उत्कृष्ट एक सागर जालेरी । इनकी देवियों की स्थिति ज. दश हजार वर्ष की, उ. ४॥ पद्म की । नवनिर्माण के देव की ज. दश हजार वर्ष उ. दश उष्ण (क्रम) दश पद्मोपम की, इनकी देवियों की ज. दश हजार वर्ष की उ. दश उष्ण (क्रम) एक पद्मोपम की ।

वायु स्थान के देव की स्थिति ज. दश हजार वर्ष की, उ. एक पद्म की । इनकी देवियों की ज. दश हजार वर्ष की, उ. सर्व पद्म की ।

अग्नि देव की स्थिति ज. पात्र पद्म की उ. एक पद्म और एक जल वर्ष की । देवियों की स्थिति ज. पात्र पद्म की उ. सर्व पद्म और पद्म हजार वर्ष की ।

सूर्य देव की स्थिति ज. पात्र पद्म की उ. एक पद्म और एक हजार वर्ष की । देवियों की ज. पात्र पद्म की उ. सर्व पद्म और पद्म हजार वर्ष की ।

इम्पारवे	"	"	"	"	२०	"	"	"	२१	"	"
चारवे	"	"	"	"	२१	"	"	"	२२	"	"
पहेली ग्रीयवेक	"	"	"	"	२२	"	"	"	२३	"	"
दुमरी	"	"	"	"	२३	"	"	"	२४	"	"
तीसरी	"	"	"	"	२४	"	"	"	२५	"	"
चौथी	"	"	"	"	२५	"	"	"	२६	"	"
पांचवी	"	"	"	"	२६	"	"	"	२७	"	"
छहठी	"	"	"	"	२७	"	"	"	२८	"	"
सातवीं	"	"	"	"	२८	"	"	"	२९	"	"
आठवीं	"	"	"	"	२९	"	"	"	३०	"	"
नवीं	"	"	"	"	३०	"	"	"	३१	"	"
चार अनुत्तर विमान,	"	"	"	"	३१	"	"	"	३३	"	"
पांचवे अनुत्तर विमान की अ. उ. ३३ सागरोपम की ।											

२१ मरण द्वारा:-

१ समोदिया और २ असमोदिया ।

२३ आगति और २४ गति द्वारा:-

पहेली नरक से छहठी नरक तक दो गति-मनुष्य और तिर्यच-का आवे और दो गति-मनुष्य, तिर्यच में आवे । सातवीं नरक में दो गति-मनुष्य, तिर्यच का आवे और एक गति-तिर्यच में आवे ।

मंत्रन पति, वाण व्यन्त, ज्योतिषी यावन् आठवे देवलोक तक दो गति-मनुष्य और तिर्यच का आवे और दो गति-मनुष्य और तिर्यच में आवे ।

नवे देवलोक मे श्वार्ध निद्र गक. एक गति-मनुष्य
का श्वार्ध और एक गति-मनुष्य-में जावे ।

॥ शनि नारणी तथा द्वेय लोक का २४ दण्डक ॥

॥ पांच एकेन्द्रिय का पांच दण्डक ॥

वायु काय का शरीर शेष चार एकेन्द्रिय में शरीर
तीन १ श्वार्धारिक २ तेजम् ३ कायम् ।

वायुकाय में चार शरीर १ श्वार्धारिक २ वैक्रिय
३ तेजम् ४ कायम् ।

अवगाहना द्वारः—

पृथ्वादि चार एकेन्द्रिय की अवगाहना जघन्य
अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट अंगुल के असंख्यातवें
भाग ।

वनस्पति की अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें
भाग उत्कृष्ट हजार योजन जाजेरी कमल नाल आश्री ।

३ संघयन द्वारः—

पांच एकेन्द्रिय में सेवार्त संघयन ।

४ संस्थान द्वारः—

पांच एकेन्द्रिय में हण्डक संस्थान ।

५ कषाय द्वारः—

पांच एकेन्द्रिय में कषाय चार ।

६ संज्ञा द्वारः—

पांच एकेन्द्रिय में संज्ञा चार ।

एकेन्द्रिय तीन विकलेन्द्रिय, मनुष्य व तिर्यच एव दश दण्डक ।

तेजस् काय, वायु काय में दश दण्डक का भावे-
पांच एकेन्द्रिय, तीन विकलेन्द्रिय, मनुष्य, तिर्यच-एवं दश
और नव दण्डक में जावे, मनुष्य छोड़ कर शेष ऊपर समान ।

२० स्थिति द्वारः—

पृथ्वी काय की स्थिति जघन्य अन्तर सुहृत् की
उत्कृष्ट चारोंप हजार वर्ष की ।

अप काय की जघन्य अन्तर सुहृत् की उत्कृष्ट सात
हजार वर्ष की । तेजस् काय की ज. अन्तर सुहृत् की उ.
तीन अक्षरात्रि की । वायु काय की ज. अन्तर सुहृत् की
उ. तीन हजार वर्ष की । वनस्पति काय की ज. अन्तर
सुहृत् की उ. दश हजार वर्ष की ।

२१ मरण द्वारः—

इनमें समोदिया मरण और अमोदिया मरण दोनों
होते हैं ।

२२ आगति द्वार २४ गति द्वारः—

पृथ्वी काय, अप काय, वनस्पति काय, इन तीन एकेन्द्रिय
में तीन—१ मनुष्य २ तिर्यच ३ देव-गति का भावे और
१ मनुष्य २ तिर्यच-दो गति में जाय । तेजस् और वायु
काय में १ मनुष्य २ तिर्यच दो गति का भावे और
तिर्यच-एक गति में जाय ।

॥ इति त्रय एकेन्द्रिय का वाच्य दण्डक सम्पूर्णः ॥

४ सुजपर (मर्ष) की प्रत्येक धनुष्य की (दो में नव धनुष्य तक की)

५ मेरु की प्रत्येक धनुष्य की (दो में नव धनुष्य की)
३ संघयन द्वारः—

तीन विकलेन्द्रिय (वेदन्द्रिय त्रैन्द्रिय चौरिन्द्रिय)
और तीर्थेय समूर्द्धिम पंचेन्द्रिय में संघयन एक-संघर्ष ।

४ संस्थान द्वारः—

तीन विकलेन्द्रिय और समूर्द्धिम पंचेन्द्रिय में संस्थान
एक-द्वयद्वय ।

५ कषाय द्वारः—

कषाय चार ही पावे ।

६ संज्ञा द्वारः—

संज्ञा चार ही पावे ।

७ मेरु द्वारः—

मेरु तीन पावे १ कृष्ण २ नील ३ कापीत ।

८ इन्द्रिय द्वारः—

वेदन्द्रिय में दो इन्द्रिय—१ स्वर्गेन्द्रिय २ रमेन्द्रिय
(मृग) त्रैन्द्रिय में तीन इन्द्रिय १ स्वर्गेन्द्रिय २ रमेन्द्रिय
३ प्राणोन्द्रिय । चौरिन्द्रिय में चार इन्द्रिय—१ स्वर्गेन्द्रिय
२ रमेन्द्रिय ३ प्राणोन्द्रिय ४ अलु इन्द्रिय ।

त्रिर्वेय समूर्द्धिम में पांच इन्द्रिय—१ स्वर्गेन्द्रिय
२ रमेन्द्रिय ३ प्राणोन्द्रिय ४ अलु इन्द्रिय ५ अर्धोन्द्रिय ।

१६ योग द्वार

इनमें योग पावे चारः—१ औदारिक शरीर काय योग
२ औदारिक मिथ्र शरीर काय योग ३ कर्मण शरीर
काय योग ४ व्यवहार वचन योग ।

१७ उपयोग द्वार

ये इन्द्रिय, त्री इन्द्रिय के अपर्याप्ति में पांच उपयोग
१ मति ज्ञान २ भुत ज्ञान ३ मति अज्ञान ४ भुत अज्ञान
५ अचक्षु दर्शन पर्याप्ति में तीन उपयोग—दो अज्ञान और
एक—अचक्षु—दर्शन । चौरिन्द्रिय और तिर्यच समूर्द्धिम
पंचेन्द्रिय के अपर्याप्ति में छः उपयोग १ मति ज्ञान उप-
योग २ भुत ज्ञान उपयोग ३ मति अज्ञान उपयोग ४ भुत
अज्ञान उपयोग ५ चक्षु दर्शन ६ अचक्षु । पर्याप्ति में चार
उपयोग—दो अज्ञान और दो दर्शन ।

१८ आहार द्वार

आहार छः दिशाओं का लेवे, आहार तीन प्रकार
का ओजस् २ रोम ३ कवस और १ सचित २ आविष
३ मिथ ।

१९ उत्पत्ति द्वार २२ चवन द्वार

ये इन्द्रिय, त्री इन्द्रिय, चौरिन्द्रिय में, दश दण्डक—
पांच एकेन्द्रिय, तीन विकलेन्द्रिय, मनुष्य और तिर्यच का
आवे और दश ही दण्डक में जावे । तिर्यच समूर्द्धिम पंचे-
न्द्रिय में दश दण्डक का आवे—(ऊपर कहे हुये) और

गो वैमानिक इन दो दण्डक को छोड़ कर शेष २२ में जावे ।

२० स्थिति द्वार

पंचेन्द्रिय की स्थिति जघन्य अन्तर मुहूर्त की उत्कृष्ट वर्ष की । त्रिन्द्रिय की स्थिति जघन्य अन्तर मुहूर्त कृष्ट ४६ दिन की । चौरिन्द्रिय की ज० अन्तर मुहूर्त कृष्ट छः मास की । तिर्यच समूर्द्धिम पंचेन्द्रिय की अनुसार—

—पुन्य बक्रोड़ चउराशी, तेरन, बायालीस, बहुचेर ।

सहसाई वासाई समुदिमे आउयं होइ ॥

स्थलचर की स्थिति जघन्य अन्तर मुहूर्त की उत्कृष्ट पूर्व वर्ष की । स्थलचर की जघन्य अन्तर मुहूर्त की शराशी हजार वर्ष की । उरपर (सर्प) की जघन्य मुहूर्त की उत्कृष्ट ५३ हजार वर्ष की, भुज पर की जघन्य अन्तर मुहूर्त की उत्कृष्ट ४२ हजार वर्ष खेचर की जघन्य अन्तर मुहूर्त की उत्कृष्ट ७२ हजार ।

२१ मरण द्वार

समोहिया मरण:-वीटी की चाल के समान जिम की गति हो ।

असमोहिया मरण बन्दूक की गोली के समान जिमकी गति हो ।

२३ आगति द्वार २४ गति द्वार

ये इन्द्रिय, त्री इन्द्रिय, चौरिन्द्रिय में दो गति-मनुष्य और तिर्यच का आवे और दो गति मनुष्य तिर्यच में जावे । तिर्यच समूर्द्धिम पंचेन्द्रिय में दो-मनुष्य और तिर्यच-गति का आवे और चार गति में जावे १ नरक २ तिर्यच ३ मनुष्य ४ देव ।

॥ इति तीन विकलेन्द्रिय और तिर्यच समूर्द्धिम ॥



तिर्यच गर्भेज पंचेन्द्रिय का एक बंडक

(१) शरीर:-तिर्यच गर्भेज पंचेन्द्रियमें शरीर ४:-

१ आदोरिक २ वैक्रियक ३ तेजस ४ कर्मण

(२) अयमाहना ।

माधाः ज्ञेयण सहस्रं न गाउ आहं ततो ज्ञेयण सहस्रं
गाउ पुःर्त्तं मुजये षण्णुद पुःर्त्तं च पश्वीसु ।

जलचरकी-जघन्य अंगुल के अमंरुपातवें माग,
उत्कृष्ट एक हजार योजन की ।

स्थलचरकी:-जघन्य अंगुल के अमंरुपातवें माग,
उत्कृष्ट छ गाउको ।

उरपरीसर्पकी:-जघन्य अंगुल के अमंरुपातवें
माग, उत्कृष्ट एक हजार
योजन की ।

(१५) ज्ञान द्वारः-ज्ञान तीनः- १ मति ज्ञान २ श्रुतज्ञान
३ अवधि ज्ञान । अज्ञान भी तीन
१ मति अज्ञान २ श्रुत अज्ञान ३ विमंग
ज्ञान ।

(१६) योग द्वारः-योग तेराः--१ सत्य मनयोग २ अस-
त्य मनयोग ३ मिथ मनयोग ४ व्य-
वहार मनयोग ५ सत्य वचनयोग ६
असत्य वचनयोग ७ मिथ वचन
योग ८ व्यवहार वचन योग
९ औदारिक शरीर काय योग १०
औदारिक मिथ शरीर काययोग ११
वैक्रिय शरीर काययोग १२ वैक्रिय
मिथ शरीर काययोग १३ कर्मण
शरीर काययोग ।

(१७) उपयोग द्वारः-विधेय गर्भेय में उपयोग ६ (नो)
१ मति ज्ञान उपयोग २ श्रुतज्ञान
३ अवधि ज्ञान उपयोग ४ मति
अज्ञान उपयोग ५ श्रुत अज्ञान उप-
योग ६ विमंग ज्ञान उपयोग ७ चक्षु
दर्शन उपयोग ८ अचक्षु दर्शन
उपयोग ९ अवधि दर्शन उपयोग ।

(१८) धा. द्वारः-आहार तीन प्रकार का ।

(१६) उत्पत्तिद्वारः--(२२) चवन द्वारः--चोवीस
दंडक में उपजे, चोवीस दंडक में
जावे ।

(२०) स्थिति द्वारः--जलचर कीः--जघन्य अन्तर मुहूर्त
उत्कृष्ट करोड़ पूर्व
वर्ष की ।

सलचर कीः--जघन्य अन्तर्मुहूर्त
उत्कृष्ट तीन पन्थ की ।

उरपरि सर्प कीः--जघन्य अन्तर्मुहूर्त
उत्कृष्ट करोड़ पूर्व
वर्ष की ।

भुजपरि सर्प कीः--जघन्य अन्तर्मुहूर्त
उत्कृष्ट करोड़ पूर्व
वर्ष की ।

खेचर कीः--जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट
पन्थ के असंख्यावर्ष
भाग की ।

(२१) मरण द्वारः--समोहिया मरख असमोहिया मरण ।

(२३) जागति द्वार (२४) गति द्वारः--विर्यच गर्भज
पंचेन्द्रिय में चार गति के जीव जावे
और चार गति में जावे ।

। निर्धन पंचान्द्रिय का दंडक सम्पूर्ण

मनुष्य गर्भेज पंचेन्द्रिय का एक दंडक

१ शरीरः—मनुष्य गर्भेज में शरीर पांच ।

२ अवगाहना द्वारः—अवसर्पिणी काल में

मनुष्य गर्भेज की अवगाहना पहिला आरा लगते तीन गाड की, उतरते और दो गाड की, दूसरा आरा लगते दो गाड की, उतरते एक गाड की ।

तीसरे आरे लगते १ गाडकी उतरते आरे ५०० धनुष्य की
चौथे आरे ,, ५०० धनुष्यकी ,, ,, सात हाथ की
पांचवें ,, ,, ७ हाथ की ,, ,, एक हाथ की
छठे ,, ,, १ ,, ,, ,, मूढा हाथ की

उत्सर्पिणी काल में

पहिले आरे लगते मूढा हाथ की उतरते आरे १ हाथ की
दूसरे ,, ,, १ ,, ,, ,, ७ हाथ की
तीसरे ,, ,, ७ ,, ,, ,, ५०० हाथ की
चौथे ,, ,, ५०० धनुष्य की ,, ,, १ गाड की
पांचवें ,, ,, १ गाड की ,, ,, २ ,, ,,
छठे ,, ,, २ ,, ,, ,, २ ,, ,,

मनुष्य बैकिय करे तो अधन्य अंगुल के संख्यातये

भाग उत्कृष्ट लघु जोवन जाजेरी (अधिक)

३ संघयन द्वार—संघयन छः ही पावे

४ संस्थान द्वार—संस्थान ,, ,, ,,

५ कषाय द्वारः—कषाय चार ,, ,,

१७ उपयोग द्वार

उपयोग चार १ मति अज्ञान उपयोग २ भुत अज्ञान उपयोग ३ चक्षु दर्शन उपयोग ४ अचक्षु दर्शन उपयोग

१८ आहार द्वार

आहार दो प्रकार का—ओजसू, रोम० वे-सचित, अचित, मिश्र तीनों ही तरह का लेते हैं ।

१९ उत्पत्ति द्वार

मनुष्य संमूर्द्धिम में आठ दण्डक का आवे १ पृथ्वी काय २ अप काय ३ वनस्पति काय ४ वे इन्द्रिय ५ श्री इन्द्रिय ६ चौरिन्द्रिय ७ मनुष्य ८ तिर्येच पंचेन्द्रिय ।

२२ ज्ञयन द्वार

ये दश दण्डक में जावे—पांच एकेन्द्रिय तीन विकनेन्द्रिय मनुष्य और तिर्येच ।

२० स्थिति द्वार

इनकी स्थिति जघन्य और उरुष्ट अन्तर सुहर्न की ।

२१ मरण द्वार—मरण दो प्रकार का—समोदिया, असमोदिया ।

२३ आगति द्वार—इन में दो गति का आवे—मनुष्य तिर्येच ।

२४ गति द्वार—दो गति में जावे—मनुष्य और तिर्येच

११ वेद ,, -इनमें वेद दो १ स्त्री वेद, २ पुरुष वेद ।

१२ पर्याप्ति द्वारः-इनमें पर्याप्ति ६, अपर्याप्ति ६ ।

१३ दृष्टि द्वारः- ॐ पांच देव कुरु, पांच उत्तर कुरु
में दृष्टि दो-१ सम्यग् दृष्टि २
मिथ्यात्व दृष्टि ।

पांच हरिवास पांच स्म्यक वास, पांच हेमवय, पांच
हिरण्य वय-इन बीश अकर्मभूमि में व छप्पन्न अन्तरद्वीप
में दृष्टि १ मिथ्यात्व दृष्टि ।

१४ दर्शन द्वारः-इनमें दर्शन दो १ चक्षु दर्शन २
अचक्षु दर्शन ।

१५ ज्ञान द्वारः- ॐ पांच देव कुरु, पांच उत्तर कुरु
में दो ज्ञान-मति और भुत ज्ञान और
२ अज्ञान-मति अज्ञान और भुत
अज्ञान, शेष बीश अकर्म भूमि व
छप्पन्न अन्तर द्वीप में दो अज्ञान १
मति अज्ञान और २ भुत अज्ञान ।
१६ योग द्वार

इन में योग २१:-१ सत्य मन योग २ असत्य मन
योग ३ मिथ्य मन योग ४ व्यवहार मन योग ५ सत्य

* ३० अकर्म भूमि में १ दृष्टि २ ज्ञान तथा २ अज्ञान होते हैं और जो
अन्तर द्वीप में हैं १ मिथ्यात्व दृष्टि व २ अज्ञान होते हैं ऐसा कई स्थानों में
वर्णन आता है ।

२० स्थिति द्वार

हेमवय, हिरण्य वय में जपन्य एक पण्य में देश उषी, उत्कृष्ट एक पण्य की ।

हरियास रम्यक वास में जपन्य दो पण्य में देश उषी उत्कृष्ट दो पण्य की, देव कुरु उत्तर कुरु में जपन्य तीन पण्य में देश उषी उत्कृष्ट तीन पण्य की ।

छप्पन्न अन्तर द्वीप में जपन्य पण्य के असंख्यातवे माग में देश उषी उत्कृष्ट पण्य के असंख्यातवे माग ।

• २१ मरण द्वार

मरण २:- १ समोदिया और २ असमोदिया ।

२३ गति द्वार

इनमें दो गति का आवे- १ मनुष्य और २ तिर्यक् ।

२४ गति द्वार

ये एक गति-मनुष्य में आवे ।

॥ इति युगसिद्धियों का बंदक संपूर्ण ॥

ॐ ५०५६५

❀ सिद्धों का विस्तार ❀

१ शरीर द्वार:-सिद्धोंके शरीर नहीं ।

२ अवगाहना द्वार:-५०० धनुष्य देयमान वाले नो सिद्ध हुवे हैं उनकी अवगाहना ३३३ धनुष्य और ३२ अंगुल ।

सात हाथ के जो सिद्ध हुवे हैं उनकी अवगाहना चार हाथ और सोलह अंगुल की ।

दो हाथ के जो सिद्ध हुवे हैं उनकी एक हाथ और आठ अंगुल की ।

३ संघयन द्वारः—सिद्ध असंघयनी (संघयन नहीं) ।

४ संस्थान द्वार— „ असंस्थानी (संस्थान नहीं) ।

५ कषाय द्वार— „ अकषायी (कषाय नहीं) ।

६ संज्ञा „ — „ में संज्ञा नहीं ।

७ लेश्या „ — „ „ लेश्या „ ।

८ इन्द्रिय „ — „ „ इन्द्रिय नहीं ।

९ समुद्घात „ — „ „ समुद्घात „ ।

१० संज्ञी „ — सिद्ध नहीं तो संज्ञी और न असंज्ञी ।

११ वेद „ — सिद्ध में वेद नहीं ।

१२ पर्याप्ति द्वार—सिद्ध न पर्याप्ति है और न अपर्याप्ति है ।

१३ दृष्टि द्वार—सिद्ध—सम्यग् दृष्टि ।

१४ दर्शन द्वार—सिद्ध में केवल एक दर्शन—केवल दर्शन ।

१५ ज्ञान द्वारः—सिद्ध में केवल ज्ञान ।

१६ योग द्वारः—सिद्ध में योग नहीं ।

१७ उपयोग द्वारः—सिद्ध में उपयोग दो १ केवल ज्ञान २ केवल दर्शन ।

१८ आहार द्वारः—सिद्ध में आहार नहीं ।

१९ उत्पत्ति द्वारः— „ „ उत्पत्ति नहीं ।

२० स्थिति द्वारः-सिद्ध की आदि है परन्तु अन्त नहीं ।

२१ मरण द्वारः-सिद्ध में मरण नहीं ।

२२ चवन " :- सिद्ध चवते नहीं ।

२३ आगति " :- सिद्ध में एक गति-मनुष्य-का आवे ।

२४ गति " :- " ३ गति नहीं ।

ऐसे श्री सिद्ध भगवन्त को मेरा तीनों काल पर्यन्त नमस्कार होवे ।

॥ इति श्री सिद्ध भगवन्त का विस्तार सम्पूर्ण ॥



—: ॥ इति श्री श्री दण्डक सम्पूर्णः—



है जैसे राजा का मंढारी मंडार (सजाना)
को रखता है ।

आठ कर्म की प्रकृति तथा आठ कर्मों का बन्ध
कितने प्रकार से होता है व कितने प्रकार से वे भोगे जाते
हैं, तथा आठ कर्मों की स्थिति आदि:-

१ ज्ञानावरणीय कर्म

ज्ञानावरणीय कर्म की पाँच प्रकृति १ मति ज्ञाना-
वरणीय २ भूत ज्ञानावरणीय ३ अवधि ज्ञानावरणीय ४
मनःपर्यन्त ज्ञानावरणीय ५ केवल ज्ञानावरणीय ।

ज्ञानावरणीय कर्म छ प्रकारे बाँचे-१ नाश-
प्रतिगियाए-ज्ञान तथा ज्ञानी का अवर्णवाद बोलें तो
ज्ञानावरणीय कर्म बाँचे २ नाश निन्दवस्थियाए-ज्ञान देने
बोलें के नाम को दिखावे तो ज्ञानावरणीय कर्म बाँचे ३
नाश अन्तरायेण-ज्ञान में (प्राप्त करने में) अन्तराय
(बाधा) होने तो ज्ञानावरणीय कर्म बाँचे ४ नाश
पडमेण-ज्ञान तथा ज्ञानी पर डेर करे तो ज्ञानावरणीय
कर्म बाँचे ५ नाश आमायणाए-ज्ञान तथा ज्ञानी की
अमानता (निम्नता, निरादर) करे तो ज्ञानावरणीय
कर्म बाँचे ६ विमेषादगा ज्ञानेण-ज्ञानी के साथ छोटा
(भूटा) निरादर करे ज्ञानावरणीय कर्म बाँचे ।

॥ ज्ञानावरणीय कर्म १० प्रकारे भोगये ॥

१ ध्यान २ राग ३ धान निदान आवाण ३ नेत्र

छ महीने बाद फिर आगे उप समय दिखा जहां रक्षा होने वहां से लाकर घर में रखे पश्चात् काल करे। ऐसी निद्रा लेने वाला जीव मर कर नरक में जावे। इसे स्था नद्रि निद्रा कहते हैं।

६ चक्षु दर्शनावर्णीय ७ अन्तर्दृष्टि दर्शनावर्णीय
अथि दर्शनावर्णीय ८ हृत्त दर्शनावर्णीय।

❀ दर्शनावर्णीय कर्म छ प्रकारे बांटे ❀

१ दृश्य पार्श्वार्थ—सम्पत्ति तथा सम्पत्ति के अभाव का दर्शनावर्णीय कर्म बांटे।

२ दृश्य निम्नार्थ—बाध बीज सम्पत्ति का नाश का दर्शनावर्णीय कर्म बांटे।

३ दृश्य अन्तर्दृष्टि—गर्ह हार्द सम्पत्ति प्रदण का नाश का दर्शनावर्णीय कर्म बांटे।

४ दृश्य पार्श्वार्थ—सम्पत्ति तथा सम्पत्ति के अभाव का दर्शनावर्णीय कर्म बांटे।

५ दृश्य अन्तर्दृष्टि सम्पत्ति तथा सम्पत्ति के अभाव का दर्शनावर्णीय कर्म बांटे।

६ दृश्य निम्नार्थ सम्पत्ति तथा सम्पत्ति के नाश का दर्शनावर्णीय कर्म बांटे।

दर्शनावर्णीय कर्म छ प्रकारे बांटे

१ दृश्य २ दृश्य ३ दृश्य ४ दृश्य ५ दृश्य ६ दृश्य

३ जीराणु कंठियाण् ४ सत्ताणु कंठियाण् ५ षड्गुणं पाशाणं
भुगणं जीराणं मृगाणं अदमणीयाण् ६ असोयणियाण्
७ अभुगणियाण् = अटीणियाण् ८ अपीट्टणियाण्
९ अवरिणियाण् ।

। अशांना येदनीय वाराह प्रकार पांथे ।

११ पर दशमिवाण् १२ पर मोयमिवाण् १३ पर मु-
लिवाण् १४ पर टीवरनिवाण् १५ पर पीदुमिवाण् १६ पर परिश
वलिवाण् १७ पर दमं पामाणं धूपाणं ज्ञियाणं मत्ताणं द्रुयमि
वाण् १८ पर गमिवाण् १९ मुमिवाण् २० टीवरनिवाण् २१
पीदुमिवाण् २२ पर निशमिवाण् ।

વડાના કામ માનદ પ્રકાર માનવે રૂપ માલ
પ્રદાન ખર્ચા.

बैरबीन रुधे की मिनसि भाभा वेदनीय की
मिनो अथवा दा भयव की उच्छुष्ट वच्छुष्ट करोडा करोडी।
भ.भगवत को, भयवा काल कर ना अथवा अन्तर सुद्धी
की उच्छुष्ट श्रा दशक री का ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय । नमो भगवते वासुदेवाय । नमो भगवते वासुदेवाय ।
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय । नमो भगवते वासुदेवाय । नमो भगवते वासुदेवाय ।
(ॐ नमो भगवते वासुदेवाय) (ॐ नमो भगवते वासुदेवाय) (ॐ नमो भगवते वासुदेवाय)
(ॐ नमो भगवते वासुदेवाय) (ॐ नमो भगवते वासुदेवाय) (ॐ नमो भगवते वासुदेवाय)

[illegible]

- ६ " " मान-इष्टिका स्थम्भ समान
 ७ " " माया-मेटे के सींग समान
 ८ " " लोम-नगर की गटर के कर्दम (काश)

समान ।

इन चार की गति त्रिर्ध्व की, स्थिति एक वर्ष की,
 घात करे देश ग्रन्थ की ।

९ प्रत्याख्याना वरणीय क्रोध-बेलु (रेत) की मीठ
 (दीवार) समान

- १० " " मान-सकड़ के स्थम्भ समान
 ११ " " माया-गोबुध्रिका (बेल कृत्तरी) समान
 १२ " " लोम-गाडा का आजन (कलह) "

इन चार की गति -मनुष्य की, स्थिति चार माह की,
 घात करे माघुष्य की ।

१३ संज्जसुन की क्रोध-जल के भन्दर लकीर समान

- १४ " " मान-ठण के स्थम्भ समान
 १५ " " माया- वांम की खोई (छिलका) समान
 १६ " " लोम -पतंग तथा हलदी के रंग समान

इन चार की गति दूर की, स्थिति पन्द्रह दिनों की,
 घात करे केवल ज्ञान की ।

। न. कथाय चारित्र्य माहर्नय की नव प्रकृति ।

१ इष्ट्य - २ न ३ अर्थात् ४ मय ५ शांति ६ दुःखंशा

७ श्री वद ८ पुरुष वद ९ नयमक वद ।

नरक आयुष्य चार प्रकारे पांघे—१ महा आरम्भ
२ महा पश्चिम ३ महा मांस का आहार ४ पंचेन्द्रिय बध।

निर्गन्ध आयुष्य चार प्रकारे बंधि-१ कपट २ महा
कपट ३ सुपायाद ४ खोटा तेल खोटा माप ।

मनुष्य आगुष्य चार प्रकारे वर्गित-१ मद्र प्रकृति
२ मिनम प्रकृति ३ मानुकोण दया) ४ अमत्सर (स्वार्थ
रहित) ।

देव आशुष्य चार प्रकारे पथि-१ सरास संयम २ संयमा
संयम ३ बालनपोष कर्म ४ अकाम निर्जरा ।

। आयुष्यं कर्म चार प्रकारे भोग्ये ।

१. नमिने नमः ॥ मांगने २. निर्मित, निर्मित का मांगने
३. मनुष्य, मनुष्य का मांगने ४. देव, देव का मांगने ।

भाग्यद्वय कर्म की स्थिति

नगर व देव की स्थिति जयन्त्य दश हजार वर्ष आगे
अन्तर मूर्ति की उत्कृष्ट तनीय मांगर और कगोड पूरे की
नीलग मांग अनिरु ।

मनुष्य व निषेध की स्थिति जपन्ध अन्तर सुद्धे के
उद्भूत तीन पन्ध आगे बढ़ रहे हैं नीमरा बाग अधिष्ठ

नाम क.५ का विचार

[illegible]



(३) शरीर नाम के पाच भेदः—१ आहारिक शरीर
२ वैक्रिय शरीर ३ आहारिक शरीर ४ तैवम् शरीर ५
कार्मण शरीर ।

(४) शरीर अंगोपांग के तीन भेदः—१ औदारिक शरीर अंगोपांग २ वैदिक शरीर अंगोपांग ३ आहारिक शरीर अंगोपांग ।

(५) शरीर बंधन नाम के पाँच भेदः—१ भौदागिक शरीर बंधन २ वैक्रिय शरीर बंधन ३ आडागिक शरीर बंधन ४ तैजम् शरीर बंधन ५ कार्मण शरीर बंधन ।

(६) शरीर संघात करणं नाम के पांच भेदः—१ आहारिक शरीर संघात करणं २ वैक्रिय शरीर संघात करणं ३ आहारिक शरीर संघात करणं ४ तैजस शरीर संघात करणं ५ कर्मणु शरीर संघात करणं ।

(७) मंथयन नाम के छः भेदः— १ वज्र शृण्णम नाराय मंथयन २ शृण्णम नाराय मंथयन ३ नाराय मंथयन ४ अथ नाराय मंथयन ५ कीलिका मंथयन ६ मेवर्ति मंथयन।

(८) संस्थान नाम के ६ वेदः—१ समचतुरांश संस्थान
द्विप्रोथ पश्चिमदल संस्थान ४ कुञ्ज संस्थान ५ वामन सं-
स्थान ६ श्रृङ्ग संस्थान। ३६

(६) वर्ग नाम के पात्र में:- १. कृष्ण रत्नील ३ १/४
४ पात्र ४ ग्राम, ४५

[illegible]

से प्रवर्ताने २ भाषा की सरलता-वचन के योग अच्छे प्रकार से प्रवर्ताने ३ भाषा की सरलता-मन के योग अच्छे प्रकार से प्रवर्ताने ४ अवलोकन मारी प्रवर्तन छोटा व मृदु विवाद नहीं करे ।

अशुभ नाम कर्म चार प्रकारे बधि-१ काया की वक्रता २ भाषा की वक्रता ३ भाषा की वक्रता ४ क्रूरता प्रवर्तन ।

॥ नाम कर्म २८ प्रकारे भोगवे ॥

शुभ नाम कर्म १४ प्रकारे भोगवे-१ इष्ट शब्द २ इष्ट रूप ३ इष्ट गंध ४ इष्ट रस ५ इष्ट स्पर्श ६ इष्ट गति ७ इष्ट स्थिति ८ इष्ट लावण्य ९ इष्ट यशो कीर्ति १० इष्ट उत्थान, कर्म बल वीर्य पुरुषाकार पराक्रम ११ इष्ट स्वर १२ कांत स्वर १३ पिय स्वर १४ मनोज्ञ स्वर ।

अशुभ नाम कर्म १४ प्रकारे भोगवे-१ अनिष्ट शब्द २ अनिष्ट रूप ३ अनिष्ट गंध ४ अनिष्ट रस ५ अनिष्ट स्पर्श ६ अनिष्ट गति ७ अनिष्ट स्थिति ८ अनिष्ट लावण्य ९ अनिष्ट यशो कीर्ति १० अनिष्ट उत्थान, कर्म बल वीर्य पुरुषाकार पराक्रम ११ दीन स्वर १२ दीन स्वर १३ अनिष्ट स्वर १४ अकान्त स्वर ।

नाम कर्म की स्थिति जघन्य आठ मुहूर्त की उत्कृष्ट बीश कभोडा कभोड़ी मागरोपम की, अराधा काल दो हजार वर्ष का ।

उक्त नाम कर्म की सोलह प्रकृति के समान ॥ सोलह प्रकारे भोगवे ।

गौत्र कर्म की स्थिति:-अथन्य आठ सुहृत् की वत्कृष्ट बीश करोडा करोड सागरोपम की, अवाधा काल दो हजार वर्ष का ।

८ अन्तराय कर्म का विस्तार

अन्तराय कर्म की पांच प्रकृति:-१ दानांतराय २ सामांतराय ३ भोगांतराय ४ उपभोगांतराय ५ वीर्यांतराय ।

अंतराय कर्म पांच प्रकारे पांचे-ऊपर समान ।

अंतराय कर्म पांच प्रकारे भोगवे-ऊपर समान ।

अंतराय कर्म की स्थिति-अथन्य अन्तर सुहृत् की, वत्कृष्ट बीश करोडा करोड सागरोपम की, अवाधा काल तीन हजार वर्ष का ।

॥ इति आठ कर्म का विस्तार सम्पूर्ण ॥





मवनं पति, वाण ध्यन्तर, ज्योतिषी, पद्मिना दूमा
देव लोक में अंतर पड़े तो जघन्य एक समय उत्कृष्ट चोवीश
सहस्र का, तीसरे देव लोक में अंतर पड़े तो जघन्य एक
समय उत्कृष्ट नव दिन और बीस सहस्र का ।

चांधे देव लोक में अंतर पड़े तो जघन्य एक समय
उत्कृष्ट बारह दिन और दश सहस्र का ।

पांचवे देव लोक में अंतर पड़े तो जघन्य एक समय
उत्कृष्ट साढ़ा पाचीस दिन का ।

छह देव लोक में अंतर पड़े तो जघन्य एक समय
उत्कृष्ट पैंतालीस दिन का ।

सातवें देवलोक में अंतर पड़े तो जघन्य एक समय
उत्कृष्ट अस्सी दिन का ।

आठवें देवलोक में अंतर पड़े तो जघन्य एक समय
उत्कृष्ट सो दिन का ।

नववें, दशवें देवलोक में जघन्य एक समय उत्कृष्ट
संख्याता माह का, द्वादशवें बारहवें देवलोक में जघन्य एक
समय उत्कृष्ट संख्याता वर्ष का, त्रिंशवेक की पहली श्रोक में
अंतर पड़े तो जघन्य एक समय का उत्कृष्ट संख्याता
सो वर्ष का, त्रिंशवेक की दूसरी श्रोक में ज० एक समय
उ० संख्याता हजार वर्ष का त्रिंशवेक की तीसरी
श्रोक में ज० एक समय उ० संख्याता लक्ष वर्ष का
चार अनुगत " " " " " अन्य के अमेख्यातवें भाग

पांचवें व्याधे मिद्ध विमान में ३० ए०. समय ३० मंजरातरे भाग ।

पांच एकेन्द्रिय में निरंतर नहीं पड़े ।

तीन विरमेन्द्रिय और विरम समुद्धिम में अंतर पड़े तो जपन्य एक समय उन्मृष्ट ध्वज सुर्जित का ।

विरम गर्भज व मनुष्य गर्भज में जपन्य एक समय उन्मृष्ट ध्वज सुर्जित का । मनुष्य समुद्धिम में जपन्य एक समय उन्मृष्ट चोखीश सुर्जित का ।

तिद्ध में अंतर पड़े तो जपन्य एक समय उन्मृष्ट छ नाद का । इसी प्रकार मिद्ध को छोड़कर शेष में पवने का अंतर उन्न उत्पन्न होने के अंतर समान जानना ।

ॐ तीसरा सधंतर निरंतर द्वार ॐ

म धंतर अर्थात् अंतर सहित, निरंतर अर्थात् अंतर रहित उत्पन्न होवे ।

पांच एकेन्द्रिय के पांच दण्डक छोड़कर शेष उन्नीस दण्डक में तथा मिद्ध में सधंतर तथा निरंतर उत्पन्न होवे ।

पांच एकेन्द्रिय के पांच दण्डक में निरंतर उत्पन्न होवे ऐसे ही उद्भवर्तन । चवने का । जानना । मिद्ध के छोड़कर ।

४ एक समय में जिस पोल में कितने उत्पन्न होवे व नव उत्पन्न द्वार ।

तक, २७. तीन विकलेन्द्रिय, ३०. तिर्यच समूर्द्धिम, २. तिर्यच गर्भज, ३२. मनुष्य समूर्द्धिम, ३३ इन तृतीया में एक समय में अधन्य एक, दो, तीन उत्कृष्ट उपजे तो असंख्याता उपजे। नववां, दशवां, इग्यारवां, व बारहवां देवलोक ये चार देवलोक ४, नव ग्रीयवेक, १३, पांच अनुत्तर विमान १८ मनुष्य गर्भज १६ इन उग्रीश बोल में अधन्य एक समय में एक, दो, तीन उत्कृष्ट संख्याता उपजे, पृथ्वी, अप, अग्नि, वायु, इन चार एकेन्द्रिय में समय समय असंख्याता उपजे वनस्पति में समय समय असंख्याता (यथास्थाने) अनंता उपजे ।

सिद्ध में एक समय में अधन्य एक, दो, तीन उत्कृष्ट एक सो आठ उपजे ऐसे ही उद्वर्तन (चवन) सिद्ध को छोड़ कर शेष सर्व का जानना (उत्पन्न होने के समान) ।

पांचवा कस्तो (कहां से आवे), छुड़ा उद्वर्तन (चव कर जावे) ये दोनों द्वार ।

५६- में से जिस जिस बोल के आकर उत्पन्न होवे वो आगति और चव कर ५६३ में से जिस जिस बोल में जावे वो गति (उद्वर्तन)

(१) पहिली नरक में २५ बोल की आगति १५ कर्म भूमि, ५ मंत्री तिर्यच, ५ अमंजी तिर्यच पंचेन्द्रिय ये २५

भूमि और १ जलवर एवं १६ बोल इसमें ही मा का नही आती है केवल पुरुष तथा नपुमंक मरकर आते हैं। गति दश बोल की--पांच संज्ञी तिर्यच का पर्यासा और अपर्यासा ।

२५ मयन पनि और २६ वाण उद्यन्ता इन ५१ जाति के देवताओं में आगति १११, बोल की-१०१, मंजी मनुष्य का पर्यासा, पांच मंजी तिर्यच वैनन्द्रिय और पांच अमंजी तिर्यच एवं १११ का पर्यासा । गति ४१ बोल की-१५ कर्म भूमि, पांच मंजी तिर्यच, बड़ा पृथ्वी काय, बादर अणकाय, बादर वनहरति वाय और तेरीश का पर्यासा और अपर्यासा ।

उपानिषी और पहेला देवलोक में ५० बोल की आगति-१५ कर्म भूमि, २० अकर्म भूमि, ५ संज्ञी तिर्यच एवं ५० का पर्यासा । गति ४६ बोल की मयनपनि समान ।

दूसरा देवलोक में ५० बोल की आगति-११ कर्म भूमि, पांच मंजी तिर्यच ये २० और ३० अकर्म भूमि में ये पांच हेम वय और पांच दिग्ग वय छोड़ शेष २० अकर्म भूमि एवं ५० बोल का पर्यासा । गति ४६ बोल की मयन पनि समान ।

तृतीया त्रिजिगी में ३० बोल की आगति १५ कर्म भूमि, ५ मंजी तिर्यच, ५ दूर वय, ५ उल्ला वय एवं ३० अकर्म भूमि एवं ३० बोल का पर्यासा । गति ४६ बोल की मयन पनि समान ।

तीन विकलेन्द्रिय (चेन्द्रिय, श्रोत्रेन्द्रिय, घोरिन्द्रिय)
की आगति १७६ बोल की ऊपर समान । गति १७६
बोल की ऊपर समान ।

असंज्ञी तिर्यच की आगति १७६ बोल की-१०१
संमूर्द्धिम मनुष्य का अपर्याप्ता, १५ कर्म भूमि का अपर्याप्ता
और पर्याप्ता और ४८ जाति का तिर्यच एवं १७६ बोल ।
गति ३६५ बोल की-५६ अन्तर द्वीप, ५१ जाति
का देव, पदेसी नरक इन १०८ का अपर्याप्ता और
पर्याप्ता ये २१६ और ऊपर बहे हुये १७६ एवं ३६५ बोल ।

मर्त्या तिर्यच की आगति २६७ बोल की-८१ जाति
का देव (६६ जाति के देवताओं में से ऊपर के चार देव
लोक नव प्रीत्यंशु, ५ अनुवर दिमान एवं १८ छोड़ शेष
८१ जाति का देव) मात नरक का पर्याप्ता ये ८८ और
ऊपर बहे हुये १७६ एवं २६७ बोल ।

गति पाँचों की अलग अलग

(१) जलन की ५२७ बोल की-५६३ में से नववें देव
लोक से मर्त्या के सिद्ध तक १८ जाति का देव का अपर्याप्ता
और पर्याप्ता एवं ३६ बोल छोड़ शेष ५२७ बोल ।

२ उत्तर (मर्त्य) की ५२३ बोल की-उक्त ५२७
में से छठी और सातवीं नरक का अपर्याप्ता और पर्याप्ता
ये चार बोल छोड़ शेष ५२३ बोल ।

३, जलन की ५२७ बोल की-५२३ में से पाँचवीं
नरक का अपर्याप्ता और पर्याप्ता ये दो बोल छोड़ शेष ५२१ बोल ।

की १२४ बोल की-उक्त १२६ बोल में से दूसरे देव लोक का अपर्याप्ता और पर्याप्ता घटाना ।

५६ अंतर द्वीप के युगलियों की २५ बोल की आगति-१५ कर्म भूमि, ५ संज्ञा तिर्यच, ५ असंज्ञा तिर्यच एवं २५ गति १०२ बोलकी- २५ भवन पति, २६ वायव्यन्तर,-इन ५१ का अपर्याप्ता और पर्याप्ता एवं १०२ ये २२ बोल सम्पूर्ण इन २२ बोल में चौबीस दण्डक की गता गति कहा गई है ।



नव उत्तम पदवी में से मांडलिक राजा छोड़
शेष आठ पदवीधर मिथ्यात्वी तथा तीन वेद-गर्वा
१२ बोल की गतागति—

(१) तीर्थंकर की आगति ३८ बोल की-वैमानिक का २५ वेद व पदेनी दूसरी, तीसरी नरक एवं ३८, गति मांष की ।

(२) चक्रवर्ति की आगति ८२ बोल की-६६ ज्ञाति के देव में से-१५ परमाधर्मी, तीन किन्दरपी-ये १८ छोटे गुण ८१ व पदेनी नरक एवं ८२, गति १४ बोल की-सात नरक का अपर्याप्ता और पर्याप्ता एवं १४ (यदि दीक्षा नेत्रे तो गति देव की या मांष की)

(३) वासुदेव की आगति ३२ बोल की-१२ देवलोक

६ लोकांतिक, नव ग्रीयवेक, व पहेली दूसरी नरक एवं ३२।
गति १४ बोल की—सात नरक का अन्यासा और पर्यासा ।

(४) बलदेव की आगति ८२ बोल की—चक्रवर्ति के
८२ बोल कहे वो और एक दूसरी नरक एवं ८३। गति ७०
बोल की—वैमानिक के ३५ भेद का अपर्यासा और पर्यासा
एवं ७० ।

(५) केवली की आगति १०८ बोल की—६६ जाति के
देव में से—१५ परमाधर्मी और तीन किलिषी एवं १८
घटाना—रोष = १ बोल, और १५ कम भूमि, ५ संज्ञी तिर्थच,
पृथ्वी, जप, वनस्त्रति, पहेली, दूसरी, तीसरी व चौथी
नरक एवं ($८१ + १५ + ५ + १ + १ + १ \times ३$) १०८ बोल
का पर्यासा, गति मोक्ष की ।

(६) ताम्रु की आगति २७५ बोल की—ऊपर के १७६
बोल में से तेजस् वायु का आठ बोल छेड़ रोष १७१ बोल,
६६ जाति के देव, व पहेली नरक में पांचवीं तक तक
($१७१ + ६६ + ५$) एवं २७५ बोल । गति ७० बोल की
बलदेव समान ।

(७) आचक की आगति २७५ बोल की—ताम्रु के २७५
बोल व छठी नरक का पर्यासा एवं २७५ बोल ।

गति ६० बोल की—१० देवों के ६० बोल नरक इन
६१ का अपर्यासा और २७५ बोल ७०

८ नरक व २७५ बोल की गति ७० बोल की

जाति के देव का पर्याप्ता, १०१ संघी मनुष्य का पर्याप्ता, १०१ संमूर्द्धिम मनुष्य का अपर्याप्ता १५ कर्म भूमि का अपर्याप्ता, सात नरक का पर्याप्ता, तिर्यच के ४८ भेद में से तेजस् वायु का आठ बोल छोड़ शेष ४० एवं (६६+१०१+१०१+१५+७+४०) ३६३ बोल + गति २५८ की-६६ जाति का देव, १५ कर्म भूमि, संघी तिर्यच, ६ नरक-इन १२५ का अपर्याप्ता और पर्याप्ता एवं २५० तीन विकलेन्द्रिय का अपर्याप्ता और ५ तिर्यच का अपर्याप्ता एवं २५८ ।

(६) मिथ्यात्व द्रष्टि की आगति ३७१ बोल की जाति का देव और ऊपर कहे हुए १७६ बोल एवं २ सात नरक का पर्याप्ता और ८६ जाति का युगलिका का पर्याप्ता एवं ३७१ बोल । गति ५५३ की:- ५६३ बोल में से पांच अनुत्तर विमान का अपर्याप्ता और पर्याप्ता ये १० छोड़ शेष ५५३ ।

(१०) स्री वेद की आगति ३७१ बोल की मिथ्या द्रष्टि समान । गति ५६१ बोल की-सातवीं नरक का अपर्याप्ता और पर्याप्ता ये दो बोल छोड़ (५६३-२) शेष ५६१ ।

(११) पुरुष वेद की आगति ३७१ बोल की मिथ्या द्रष्टि की आगति समान । गति ५६३ की ।

(१२) नपुंसक वेद की आगति २८५ बोल की:-

X कोई २ १२२ की भी मानन है- ३५ परमा व नी और ३ क्रिद्विषी के पर्याप्ता और अपर्याप्ता एवं ३५ छोड़ कर ।

छोड़ते हैं—१ जाति २ गति ३ स्थिति ४ अवगाहना
५ प्रदेश और ६ अनुभाव ।

❀ आठवाँ आकर्षण द्वार ❀

तथाविध प्रयत्न करके कर्म दुर्बल का प्रदण काने व
खेचने को आकर्षण कहते हैं जैसे गाय पानी पीते समय
मग्न हो पीछे देखे व फिर पीने वैसे ही जीव जाति निद्रा-
तादि आयुष्य को जघन्य एक, दो, तीन उत्कृष्ट आठ
आकर्षण करके बांधता है ।

आकर्षण का अन्य सहायक बहुरूप

सब से थोड़ा जीव आठ आकर्षण से जाति निद्रा-
युष्य को बांधने वाले, उससे सात से बांधने वाले संख्यात
गुणा, उससे छह से बांधने वाले संख्यात गुणा, उससे
पाँच से बांधने वाले संख्यात गुणा उससे चार से बांधने
वाले संख्यात गुणा उससे तीन से बांधने वाले संख्यात
गुणा, उससे दो से बांधने वाले संख्यात गुणा उससे एक
से बांधने वाले संख्यात गुणा ।

॥ इति गतागति सम्पूर्ण ॥



'महंगाय' 'मिगा', 'सुहृयंगा' 'दीव' 'जोरे' 'वितगा',
'वितरसा' 'मणवेगा', 'गिहगारा' 'अनियगणाड' ।

अर्थ—१ 'मटङ्ग वृक्ष' जिससे मधुर फल प्राप्त होते हैं २ 'मिङ्गा वृक्ष' से रत्न जड़ित सुवर्ण मोजन (पाव) मिलते हैं ३ 'सुहृयङ्गा वृक्ष' से ४६ जाति के (वाजिन्) के मनोहर नाद सुनाई देते हैं ४ 'दीव वृक्ष' रत्न जड़ित दीपक समान प्रकाश होता है ५ जोति वृक्ष रात्रि में सूर्य समान प्रकाश करते हैं ६ 'वितङ्ग वृक्ष' से सुगंधी फूलों के भूषण प्राप्त होते हैं ७ 'वितरसा वृक्ष' से (१८ प्रकार के) मनोज्ञ मोजन मिलते हैं ८ 'मनोवेगा' से सुवर्ण रत्न के आभूषण मिलते हैं ९ 'गिहगारा' वृक्ष से ४२ भंजल के मदल मिल जाते हैं १० 'अनिय गणाड' वृक्ष से नाक के आस से उड़ जावे ऐसे महीन (पतले व उत्तम वस्त्र प्राप्त होते हैं) । प्रथम धारे के स्त्री पुरुष का आयुष्य जब महीने का शेष रहता है उस समय युगलिये परमव का आयुष्य बाँधते हैं और तब युगलनी एक पुत्र पुत्री के जोड़े को प्रयुतती (जन्म देती) है । उन बच्चे बच्ची का ४६ दिन तक पालन करने बाद वे होशियार हो दम्पती बन सुखोपमोगानुभव करते हुवे विचरते हैं और युगल युगलनी का दण्ड मात्र भी वियोग नहीं होता है उनके माता पिता एक को छीक और दूसरे को उषाका आने ही भर कर देव गति में जाते

हैं। (क्षेत्राधिष्ठित) देव उन पुंगल के मृतक शरीर को क्षीर सागर में प्रक्षेप कर मृत्युमंस्वार (मरण क्रिया) करते हैं। गति एक देव की।

इस आरे में चैर नहीं, ईर्ष्या नहीं, जरा (बुढ़ापा) नहीं, रोग नहीं, बुरूप नहीं, परिपूर्ण अंग उपांग पाकर सुख भोगते हैं ये सब पूर्व भव के दान पुण्यादि सत्कर्म का फल जानना। ॥ इति प्रथम आरा संपूर्ण ॥

✽ दूसरा आरा ✽

(२) उक्त प्रकार प्रथम आरे की समाप्ति होते ही तीन करोड़ करोड़ी सागरोपम का ' सुखमा ' (केवल सुख) नामक दूसरा आरा आरम्भ होता है उस वक्त पहिले से बर्ष, गंध, रस, स्पर्श के पुद्गलों की उत्तमता में अनन्त शुष्की होनता हो जाती है इस आरे में मनुष्य का देहमान दो कोस का व आयुष्य दो पन्थोपम का होता है। उतरते आरे एक कोस का शरीर व एक पन्थोपम का आयुष्य रह जाता है घट कर पांसलिये केवल १२८ रह जाती है व उतने आरे ६४। मनुष्यों में वच श्रेष्ठम नाराच संघयन व समचतुर्भुज मंथान होता है इस आरे के मनुष्यों को आहार की इच्छा दो दिन के अन्तर से होती है तब शरीर प्रमाणे आहार करते हैं। पृथ्वी का स्वाद शरीर जैसा रह जाता है व उतने आरे मुक्त जैसा

इस आरे में दश प्रकार के कर्मवृत्त दश प्रकार का मनु-
वाञ्छित सुख देते हैं (पहला आरा समान) मृग के
महिने जब शेष रहते हैं तब युगलनी एत पुत्र पुत्री
प्रसव करती है बच्चे बच्ची का द्ध दिन पालन किये
ये (पुत्र पुत्री) दम्पती वन सुखोपभोग करते हुये नि-
हते और उनके माता पिता एक को छोड़ और दूसरे
उपासी आते ही नरक देव गति में जाते हैं चेन्नाधिपति
देव इन के रक्त शरीर को धीरे सागर में डाल कर मृग
क्रिया करते हैं । गति एक देव की । इस आरे में ईश्वर
नहीं, वैर नहीं, जरा नहीं, रोग नहीं, कुरुष नहीं, परि-
श्रम उपाश्र पात्र सुख भोगते हैं । ये सब पूर्ण भव
दान पुण्यादि सत्कर्म का फल जानना । ॥ इति दूसरा
आरा सम्पूर्ण ॥

❀ तीसरा आरा ❀

(३) यों दूसरा आरा समाप्त होते ही दो करोड़ का
सागरोपम का 'सुखमा दुःखमा' (सुख बहुत दुःख थोड़ा)
नामक तीसरा आरा शुरु होता है तब पहिले से वर्ष
रस स्पर्श की उषमता में हीनता हो जाती है । क्रम
घटते घटते मनुष्यों का देहमान एक गाउ (कोश)
व आयुष्य एक पन्नोपम का रह जाता है उतरते आरे
घनुष्य का देहमान व करोड़ पूर्व का आयुष्य रह जाता

तीसरे आरे की समाप्ति में चोरासी लाख वर्ष व साढ़े आठ माह जब शेष रह जाते हैं उस समय सर्वार्थसिद्ध विमान में ३३ सागरोपम का आयुष्य प्राप्त कर तथा वहां से चव कर वनिता नगरी के अन्दर नारि राजा के यहां मरुदेवी रानी की कुचि (कोंख) में श्री अष्टम देव स्वामी उत्पन्न हुवे । (माताने) प्रथम का स्वप्न देखा इससे अष्टम देव नाम रखा गया युगलिया धर्म मिटा कर १ असि २ मसि ३ कुचि दिक ७२ कला पुरुष को सिखाई व ६४ कला स्त्री बीस लाख पूर्व तक आप कौमार्य अवस्था में ६३ लाख पूर्व तक राज्य शासन किया । पश्चात् भारत को राज्य भार सौंप कर आपने ४ हजार पुरुषों के साथ दाचा ग्रहण की । संयम लेने के एक हजार वर्ष बाद आपने केवल ज्ञान उत्पन्न हुवा इस प्रकार लघुस्थ व केवल अवस्था में आप कुल मिला कर एक लाख पूर्व तक संयम पाल कर अष्टावद पर्वत पर पद्म आसन से स्थित हो ५ हजार साधु के परिवार से निर्वाण पद को प्राप्त हुवे । मगवंत के पांच कन्याश्रीक उत्तरापादा नक्षत्र में हुवे १ पदला कन्याश्रीक, उत्तरापादा नक्षत्र में सर्वार्थसिद्ध विमान से चव कर मरु देवी रानी की कुचि में उत्पन्न हुवे २ दूसरा कन्याश्रीक, उत्तरापादा नक्षत्र में आपका जन्म हुवा । ३ कन्याश्रीक, उत्तरापादा नक्षत्र में राज्यासन प

चलायमान हुआ तब शकेन्द्र ने उपयोग द्वारा मत्स्य
 किया कि श्री महावीर स्वामी मितुक कुल के भद्र
 उत्पन्न हुए हैं । ऐसा जान कर शकेन्द्र ने हर्ष
 गमेपी देव को बुला कर कहा कि तुम जाकर वीर
 कुंड के अन्दर, सिद्धार्थ राजा के यहाँ, त्रिशला देवी
 रानी की कुक्षि (कोख) में श्री महावीर स्वामी का गर्भ
 प्रवेश करो और जो गर्भ त्रिशला देवी रानी की कोख में
 उसे लेजाकर देवानन्दा ब्राह्मणी की कोख में रखो।
 इस पर हरिश्च गमेपी आज्ञानुसार उसी समय माहण ईश
 नगरी में आया व आकर भगवंत को नमस्कार कर के
 बोला " हे स्वामी आपको भली भाँति विदित है कि मैं
 आपका गर्भ हरण करने आया हूँ " इस समय देवानन्दा
 को अवस्थापिनि निद्रा में डाल कर गर्भ हरण किया व
 गर्भ को लेजाकर पृथ्वी कुंड नगर के अन्दर सिद्धार्थ
 राजा के यहाँ, त्रिशला देवी रानी की कोख में रखवा।
 त्रिशला देवी रानी की कोख में जो पुत्रो थी उसे लेजाकर
 देवानन्दा ब्राह्मणी की कोख में रखली। पश्चात् सप्ताह नव
 मास पूर्ण होने पर भगवंत का जन्म हुआ। दिन प्रति
 दिन बढ़ने लगे व अनुक्रम से यौवनावस्था को प्राप्त हुये
 तब यशोदा नामक राजकुमारी के साथ आपका पार्थ
 प्रदण हुआ। सांसारिक सुख भोगने हुये आप के एक पुत्र
 उत्पन्न हुई जिसका नाम प्रियदर्शना रखला गया। श्री



कन्याणीक उचरा फागुनी नक्षत्र में हुवे १ पहेला कन्या-
 णीक--दशवें प्राणत देवलोक से चव कर देवानन्दी की
 कोख में जब उत्पन्न हुवे तब २ दूसरे कन्याणीक में गर्भ
 का हरण हुवा ३ तीसरे कन्याणीक में जन्म हुवा ४ चौथे
 कन्याणीक में दीघा ग्रहण की और पांचवें कन्याणीक में
 केवल ज्ञान प्राप्त हुवा । स्वाति नक्षत्र में भगवन्त मोक्ष
 पधारे । इस आरे में गति पांच जानना । श्री महावीर स्वामी
 मोक्ष पधारे उसी समय गौतम स्वामी को केवल ज्ञान
 उत्पन्न हुवा व चारह वर्ष पर्यन्त केवल प्रवज्या पाल कर
 गौतम स्वामी मोक्ष पधारे । उसी समय श्री सुधर्मा स्वामी
 को केवल ज्ञान उत्पन्न हुवा जो आठ वर्ष तक केवल
 प्रवज्या पालकर मोक्ष पधारे । उसी समय श्री जम्बू
 स्वामी को केवल ज्ञान प्राप्त हुवा । इन्होंने ४४ वर्ष तक
 केवल प्रवज्या पाली व पश्चात् मोक्ष पधारे एवं सर्व
 मिलाकर श्री महावीर स्वामी के मोक्ष पधारने बाद ६४
 वर्ष तक केवल ज्ञान रहा पश्चात् विच्छेद (नष्ट) गया ।
 इस आरे में जन्मे हुवे को पांचवे आरे में मोक्ष
 मिल सकता है परन्तु पांचवें आरे में जन्मे हुवे को
 पांचवे आरे में मोक्ष नहीं मिल सकता । श्री जम्बू स्वामी
 के मोक्ष पधारने के बाद दश बोल विच्छेद हुवे--१ परम
 अवधि ज्ञान २ मनः पर्यव ज्ञान ३ केवल ज्ञान ४ परिहा
 विशुद्ध चात्रि ५ सूक्ष्म मंगाय चात्रि ६ यथाख्यात



- ३ सुकुलोत्पन्न दास दासी होवे ।
- ॥ प्रधान (मंत्री) लालची होवे ।
- ५ यम जैसे क्रूर दंड, दाता राजा होवे ।
- ६ कुलीन स्त्री रक्षा रहित (दुराचारिणी) होवे ।
- ७ कुलीन स्त्री चेरया समान धर्म करने वाली होवे ।
- ८ पिता की आज्ञा भंग करने वाला पुत्र होवे ।
- ९ गुरु की निन्दा करने वाला शिष्य होवे ।
- १० दुर्जन लोग सुखी होवे ।
- ११ सखन लोग दुखी होवे ।
- १२ दुर्मित्र अकाल बहुत होवे ।
- १३ सर्प विच्छु, दंश माकुखादि छुद्र जीवों की उत्पत्ति बहुत होवे ।
- १४ माद्वय लोभी होवे ।
- १५ रिंसा धर्म प्रवर्तक बहुत होवे ।
- १६ एक मत के अनेक मतान्तर होवे ।
- १७ मिथ्यात्वी देव बहुत होवे ।
- १८ मिथ्यात्वी लोग की शक्ति होवे ।
- १९ लोगों को देव दर्शन दुर्लभ होवे ।
- २० दैताटय गिरि के विद्या घरों की विद्या का प्रभाव मन्द होवे ।
- २१ गो रम (दूध, दही, घी) में स्निग्धता (चिकनाई) कम होवे ।

घातु रहेगी, व चर्म की मोहरे चलेगी जिसके पास
रहेंगे वे भीमन्त (घनवान) कहलावेंगे । इस आरे
मनुष्यों को उपवास मास खमण समान लगेगा ।

[इस आरे में छान सर्व विच्छेद हो जावेगा फिर
दशवैकालिक सूत्र के चार अध्ययन रहेंगे । कोई कोई
मानते हैं कि १ दशवैकालिक २ उत्तराध्ययन ३ आचार्य
४ आवश्यक ये चार सूत्र रहेंगे । इस में चार जीव एक
बतारी होंगे - १ दुपसह नामक आचार्य २ कामगुर
नामक साध्वी ३ जीवनदास थायक ४ नाम भी धारिक
ये सर्व २००४ पाँचवे आरे के अन्त तक भी माती
स्वाधी क घुमंघर जानना ।]

आषाढ सुदि १५ को शकेन्द्र का आसन पहावमा
होवेगा तब शकेन्द्र उपयोग द्वारा मासूम करेंगे कि आ
पाँचवा आरा ममात्र होकर छड़ा आरा लगेगा ऐसा
कर शकेन्द्र आवेग व आकर चार जीवों को करेंगे
कम छड़ा आरा लगेगा अतः आसोचना व प्रतिक्रम
हाग शुद्ध वनो अनन्तर ऐसा मून कर जो चारों जीव उ
को चमा कर, निगुण्य हो कर मयाता करेंगे । उस समय
सर्वतक महाभवंतक नामक स्वा चलेगी जिससे पर्यट, ग
छोट, कुर्वे, कावडीये आदि सर्व स्थानक नष्ट होमा
केवल १ वेतादय वनेन २ गमा नदी ३ विपु नदी
स्थान हट व मयता की न हो । व पाँच स्थानक वपर

देह मान एक हाथ का, आयुष्य २० वर्ष का उतरते आरे
 मूठ कम एक हाथ का व आयुष्य १६ वर्ष का रह जावेगा।
 इस आरे में संघयन एक सेवार्थ, संस्थान एक हंडक उतरने
 आरे भी ऐसा ही जानना। मनुष्य के शरीर में आठ पंख
 लिये व उतरते आरे केवल चार पंखलिये रह जावेगी।
 इस आरे में छः वर्ष की स्त्री गर्भ धारण करने लग जावेगी
 व कुत्ता के समान परिवार के साथ बिचरेगी। गङ्गा सिन्धु
 नदी का ६२॥ योजन का पट है जिनमें से रथ के चक्र
 समान थोड़ा पाट व गाढ़े की धूरी हूये इतना गहरा जल
 रह जायेगा जिनमें मरस कच्छ आदि जीव जन्तु विशेष
 रहेंगे। ७२ मिल के अन्दर रहने वाले मनुष्य संघ्या तथा
 प्रभात के समय उन मरस कच्छ आदि जीवों को जल से
 बाहार निकाल कर नदी के किनारे रेत में गाड़ कर रह
 देंगे वे जीव सूर्य की तेजी व उग्र शरदी से भुना जावेंगे जिनका
 मनुष्य आहार करलेवेंगे इनके चमड़े व हड्डियों को चाट
 कर तिर्यच अपना निर्वाह करेंगे। मनुष्यों के मस्तक की
 खोपड़ी में जल लाकर मनुष्य पीवेंगे। इस प्रकार २१०००
 वर्ष पूर्ण होवेंगे जो मनुष्य दान पुण्य रहित, नमोकार
 रहित व्रत प्रत्याख्यान रहित होवेंगे केवल वे ही इस आरे
 में आकर उत्पन्न होवेंगे।

ऐसा जान कर जो जीव जैन धर्म पालेगा तथा जैन

❀ दश द्वार के जीव स्थानक ❀

गाथा:—

'जीवठाण, 'लघुस्थान, 'टिई, 'क्रिया, 'कर्मसत्ताम,
'बन्ध 'उदीरण 'उदय 'निज्जरा 'छमाव दश दाराम ॥

अर्थ:—दश द्वार के नाम:—१ चौदह जीव स्थानक
के नाम २ लघुस्थान द्वार ३ स्थिति द्वार ४ क्रिया द्वार
५ कर्म सत्ता द्वार ६ कर्म बन्ध द्वार ७ कर्म उदीरण द्वार
८ कर्म उदय द्वार ९ कर्म निजरा द्वार १० छे भाव द्वार ।

दश द्वार का विस्तार ।

(१) नाम द्वार:—चौदह जीव स्थानक के नाम—
१ मिथ्यात्व जीव स्थानक २ सास्वादान जीव स्थानक ३
सम मिथ्यात्व (मिथ) दृष्टि जीव स्थानक ४ अग्रति स
दृष्टि जीव स्थानक ५ देश प्रति जीव स्थानक ६ प्रम
संयति जीव स्थानक ७ अग्रमत्त संयति जीव स्थानक ८
निवर्ती यादर जीव स्थानक ९ अनिवर्ती यादर जीव स्थानक
१० सूक्ष्म संपराय जीव स्थानक ११ उपसम मोहनी
जीव स्थानक १२ क्षीण मोहनीय जीव स्थानक १३
सयोगी केवली जीव स्थानक १४ अयोगी केवली जी
स्थानक ।

वेदन्द्रियादिक न अपर्याप्त होते समय होते व पर्याप्त होने बाद मिट जावे संज्ञा पंचेन्द्रिय को पर्याप्त होने बाद में होवे उसे साक्षादान मम इति करते हैं शास्त्र सूत्र ज्ञानमिगम दण्डक के अधिकार से ।

३ मिथ्यादृष्टि जीव स्थानक का लक्षणः—जो मिथ्यात्व में से निकला पान्तु जिसने सद्भक्ति प्राप्त नहीं इस बीचमें अप्रामाण्य के रस से प्रवर्तता हुआ आयुष्य कर्म बांधे नहीं, काल भी करे नहीं, वहां से जो समय के अन्दर, अनिश्चयता से तीसरे जीव स्थानक में गिर कर पड़ेले जीव स्थानक आवे अथवा वहां से वही आदि जीव स्थानक पर जावे तब आयुष्य बांधे, काल करे । शास्त्र दृष्ट मगवती शतक तीशिवे अथवा २६ वें

४ अव्यतीत सम दृष्टि जीव स्थानक का लक्षणः—जो शंका बाधा रहित हो कर भीतराग के बचनों पर भाव से भ्रष्टान करे तथा प्रतीति लाकर रोच, चोरी प्रतिकूल आचरण आचरे नहीं,—इसलिये कि उसकी हानि में हिलना होवे नहीं—व व्यवहार में समाहित रहे । शास्त्र उचराप्ययन के २८ वें मोक्ष मार्ग के अध्ययन से ।

५ देशव्यतीत जीव स्थानक का लक्षणः—जो सत्य समाहित महित, विज्ञान विवेक सहित देश प्रवृत्त अधिकार करे, जो अथन्य एक नभोक रशी प्रवृत्त स्थान तथा एक जीव की पाठ करने का प्रत्या

११ उपशान्त मोहनीय जीवस्थानक का लक्षण
जिसने मोहनीय कर्म की २८ प्रवृत्तियों- उपशमादि-उसे
उपशान्त मोहनीय जीव स्थानक कहते हैं ।

१२ शीण मोहनीय जीवस्थानक
जिसने मोहनीय कर्म की २८ प्रवृत्ति का दृष्टि-क्षीण
उसे शीण मोहनीय स्थानक कहते हैं ।

१३ सयोगी केवली जीवस्थानक का लक्षण
जो मन वचन व काया के शुभ योग सहित केवल ज्ञान
केवल दर्शन में प्रवर्त रहा है उसे सयोगी केवली जीव
स्थानक कहते हैं ।

१४ अयोगी केवली जीवस्थानक का लक्षण
जो शरीर सहित मन वचन काया के योग रोक-कर केवल
ज्ञान केवल दर्शन में प्रवर्त रहा है उन्हें अयोगी केवली
जीव स्थानक कहते हैं ।

❁ ३ स्थिति द्वार ❁

१ मिथ्यात्व जीवस्थानक की स्थिति तीन तरह की

(१) अनादि अपर्यवसितः-जिस मिथ्यात्व की आदि
नहीं और अन्त भी नहीं ऐसा अभ्रम्य जीवों का मिथ्यात्व
मानना ।

(२) अनादि सपर्यवसितः-जिस मिथ्यात्व की
आदि नहीं परन्तु अन्त है ऐसा मध्य जीवों का मिथ्यात्व
मानना ।

का उदय-ऊपर कहे हुवे सात चयोपशम में एक मिथ्या दर्शन वसतिवा क्रिया नहीं लगे २१ के उदय में २३ सं-
राय क्रिया लगे ।

(५) देश वती जीव स्थानक में मोहनीय कर्म की २८ प्रकृति में से ११ का चयोपशम व १७ का उदय १ अनन्तानु-
बंधी क्रोध २ मान ३ माया ४ लोभ ५ समकित मो-
नीय ६ मिथ्यात्व मोहनीय ७ मिथ्र मोहनीय ८ अप्रत्या-
ख्यानी क्रोध ९ मान १० माया ११ लोभ इन ११ का
चयोपशम व उक्त ११ बोल छोड़ कर शेष (२८-११)
१७ का उदय, ११ चयोपशम में मिथ्यात्व दर्शन वसित
क्रिया व अप्रत्याख्यान क्रिया ये दो क्रिया नहीं लगे १५
के उदय में २२ संपराय क्रिया लगे ।

(६) प्रमत्त संयति जीव स्थानक में मोहनीय कर्म की २८ प्रकृति में से १५ का चयोपशम १५ का उदय १
अनन्तानुबंधी क्रोध २ मान ३ माया ४ लोभ ५ समकित
मोहनीय ६ मिथ्यात्व मोहनीय ७ मिथ्र मोहनीय ८ अप्र-
त्याख्यानी क्रोध ९ मान १० माया ११ लोभ १२ प्रत्या-
ख्यानी क्रोध १३ मान १४ माया १५ लोभ इन १५ का
चयोपशम उक्त १५ बोल छोड़ कर शेष १३ बोल का उदय
१५ के चयोपशम में २२ संपराय क्रिया नहीं लगे १३
उदय में १ आरंभिका २ माया वसित ये दो क्रिया लगे
छोटे जीव स्थानक आरंभ नहीं करे वग्न्युष्ट के कृमानु-



वेद के ज्ञात शेष छः आर्य मंज्वलन का सोम एवं सा
का उदय, ११ के जयापशम में २३ मंषाय क्रिया की
जाए। सोम के उदय में एक मायापशमया क्रिया लगे।

इसके नीचे स्थानक में मोहनोर कर्म की २७ प्रकृति
म म - १ के जयापशमया क्रिया, १ इय संभार
का न म का उदय २७ के उपशम त ३ दाधिक में २१
मंषाय क्रिया लगे। जया आर्य एक मंज्वलन का सोम के
उदय में एक मायापशमया क्रिया लगे।

११ के जयापशमया कर्म की २८ प्रकृति
म म म के उदय ११ के जयापशमया क्रिया लगे। जया
न म का उदय २७ के उपशम त ३ दाधिक में २१
मंषाय क्रिया लगे। जया आर्य एक मंज्वलन का सोम के
उदय में एक मायापशमया क्रिया लगे।

१२ के जयापशमया कर्म की २९ प्रकृति
उपशम त ३ दाधिक में २१ मंषाय क्रिया लगे। जया
न म का उदय २७ के उपशम त ३ दाधिक में २१
मंषाय क्रिया लगे। जया आर्य एक मंज्वलन का सोम के
उदय में एक मायापशमया क्रिया लगे।

१३ के जयापशमया कर्म की ३० प्रकृति
उपशम त ३ दाधिक में २१ मंषाय क्रिया लगे। जया
न म का उदय २७ के उपशम त ३ दाधिक में २१
मंषाय क्रिया लगे। जया आर्य एक मंज्वलन का सोम के
उदय में एक मायापशमया क्रिया लगे।

१४ के जयापशमया कर्म की ३१ प्रकृति
उपशम त ३ दाधिक में २१ मंषाय क्रिया लगे। जया
न म का उदय २७ के उपशम त ३ दाधिक में २१
मंषाय क्रिया लगे। जया आर्य एक मंज्वलन का सोम के
उदय में एक मायापशमया क्रिया लगे।

१५ के जयापशमया कर्म की ३२ प्रकृति
उपशम त ३ दाधिक में २१ मंषाय क्रिया लगे। जया
न म का उदय २७ के उपशम त ३ दाधिक में २१
मंषाय क्रिया लगे। जया आर्य एक मंज्वलन का सोम के
उदय में एक मायापशमया क्रिया लगे।

अथवा आठ कर्म की उद्दीरणा करे (सात की करे तो आयुष्य कर्म छोड़ कर) ।

छह, सातवें, आठवें, नववें जीव स्थानक पर सात, आठ, छः की उद्दीरणा करे (सात की करे तो आयुष्य छोड़ कर और छः की करे तो आयुष्य और वेदनीय कर्म छोड़ कर) ।

दशवें जीव स्थानक पर छः व पांच की उद्दीरणा करे (छः की करे तो आयुष्य और वेदनीय छोड़ कर और पांच की करे तो आयुष्य, वेदनीय व मोहनीय तीन छोड़ कर) ।

इग्यारहवें जीव स्थानक पर पांच कर्म की उद्दीरणा करे (आयुष्य, वेदनीय और मोहनीय कर्म छोड़ कर) ।

बारहवें, तेरहवें जीव स्थानक पर दो कर्म की उद्दीरणा करे नाम और मोक्ष कर्म की ।

चौदहवें जीव स्थानक पर एक भी कर्म की उद्दीरणा नहीं करे ।

८ कर्म का उद्दय व ६ कर्म की निर्जरा द्वारा

पहले में दशवें जीव स्थानक तक आठ कर्म उद्दय और आठ कर्म की निर्जरा इग्यारहवें व बारहवें स्थानक पर मोहनीय कर्म छोड़ कर मोक्ष नाम कर्म उद्दय और नाम कर्म की निर्जरा तेरहवें चौदहवें स्थानक पर बार कर्म का उद्दय और बार कर्म की निर्जरा वेदनीय २ आयुष्य ३ नाम ४ मोक्ष ।

1. 2. 3.

बोल में से सयोगी, सलेशी, शुक्र लेशी, एवं तीन बोल
 छोड़ शेष ७ बोल सहित सर्व पर्वतों का राजा मेरु के
 समान अडोल, अचल, स्थिर अवस्था को प्राप्त होवे ।
 शैलेशी पूर्वक रह कर पंच लघु अक्षर के उच्चार प्रमाण
 काल तक रह कर शेष वेदनीय, आयुष्य, नाम गोत्र एवं
 ४ कर्म क्षीण करके मोक्ष पावे । शरीर औदारिक तेजस
 कर्मण सर्वा प्रकार छोड़ कर समधेयी रह गति अन
 आकाश प्रदेश को नहीं अवगाहता हुआ अणुकारस
 हुआ एक समय मात्र में उद्भगति अविप्रद गति से द
 जाकर एरंड बीज बंधन मुक्त वत् निर्लेप तुम्बीवत्, को
 मुक्त पाण वत्, रन्धन बद्धि मुक्त धूम्र वत् । उस सिद्ध
 में जाकर साकारोपयोग से सिद्ध होवे, पुद्ग होवे, परा
 होवे परंपरागत होवे मजल कार्य अर्थ साध कर
 कृतार्थ निष्ठितार्थ अतुल सुर सागर निमग्न मादि अन
 मागे सिद्ध होवे । इस सिद्ध पद का भाव सरण चि
 मनन मदा सर्वदा काले मुक्त होवे ? वो पड़ी पल प
 सकल होवे । अयोगी अर्थात् योग रहित केवल स
 विचरे उमे अयोगी केवनी गृणस्थान कहते है ।

३ स्थिति द्वार

पहले गुण स्थान की स्थिति ३ प्रकार की—अणुस्थिति
 अक्षर स्थिति यात्रे त्रिम विद्या-व की आदि नहीं
 अन्तर्मी नहीं । समस्त जीव के विद्यात्व भाव

का होवे वहां चलने का नहीं । दशवें, इग्यारहवें बारहवें गुण० १४ परिपह पावे (मोहनीय कर्म के उदय से होने वाले = छोड़ कर)-अचल, अरति, स्त्री का, बैठने का, आक्रोश का, मेल का, सत्कार पुरस्कार का एवं सात चारित्र मोहनीय कर्म के उदय होने से और १ दंसरु परिपह (दर्शन मोहनीय के उदय होने से) एवं आठ परिपह छोड़ कर शेष १४ इन में से एक समय में १२ वेदे शीत का वेदे वहां ताप का नहीं, और ताप का वहां शीत का नहीं, चलने का होवे वहां बैठने का नहीं और बैठने का होवे वहां चलने का नहीं । तेरहवें चौदहवें गुण० ११ परिपह पावे । उक्त परिपह में से तीन छोड़ कर शेष ११ (१) प्रज्ञा का (२) अज्ञान का ये दो परिपह ज्ञानावस्थायी कर्म के उदय से और (३) अलाम का परिपह अन्तराय कर्म के उदय से एवं २ परिपह छोड़ कर । इन परिपह में से एक समय में ६ वेदे शीत का होवे वहां ताप का नहीं और ताप का वेदे वहां शीत का नहीं, चलने का होवे वहां बैठने का नहीं और बैठने का होवे वहां चलने का नहीं ।

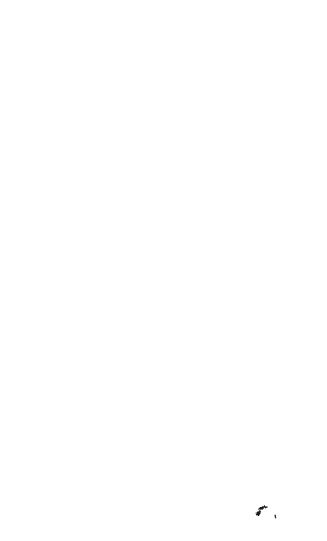
१४ मार्गणा द्वार ।

पहले गुण० मार्गणा ४, तीसरे, चौथे, पांचवें, सातवें जावे । दूसरे गुण० मार्गणा १, गिरे तो पहले गु० जावे । चढ़े नहीं) तीसरे गु० ४ गिरे तो पहले जावे और चढ़े तो

का होवे वहां चलने का नहीं । दशवें, इग्यारहवें चारहवें गुण० १४ परिपह पावे (मोहनीय कर्म के उदय से होने वाले = छोड़ कर)-अचल, शरति, स्त्री का, बैठने का, आक्रोश का, भेल का, सत्कार पुरस्कार का एवं सात चारित्र्य मोहनीय कर्म के उदय होने से और १ दंसर परिपह (दर्शन मोहनीय के उदय होने से) एवं आठ परिपह छोड़ कर शेष १४ इन में से एक समय में १२ वेदे शीत का वेदे वहां ताप का नहीं, और ताप का वहां शीत का नहीं, चलने का होवे वहां बैठने का नहीं और बैठने का होवे वहां चलने का नहीं । तेरहवें चौदहवें गुण० ११ परिपह पावे । उक्त परिपह में से तीन छोड़ कर शेष ११ (१) प्रज्ञा का (२) अज्ञान का ये दो परिपह ज्ञानावरणीय कर्म के उदय से और (३) अलाम का परिपह अन्तराय कर्म के उदय से एवं ३ परिपह छोड़ कर । इन परिपह में से एक समय में ६ वेदे शीत का होवे वहां ताप का नहीं और ताप का वेदे वहां शीत का नहीं, चलने का होवे वहां बैठने का नहीं और बैठने का होवे वहां चलने का नहीं ।

१४ मार्गणा द्वार ।

पहले गुण० मार्गणा ४. तीसरे, चौथे, पांचवें, सातवें जावे । दूसरे गुण० मार्गणा १, गिरे तो पहले गु० आवे (चडे नहीं) तीसरे गु० ४ गिरे तो पहले आवे और चडे तो



१ औदारिक का, एवं ६, तेरहवें गुण० योग ७-दो मन के, दो वचन के, औदारिक, औदारिक का मिश्र, कर्मस्य चार योग एवं ७ योग, चौदहवें गुण० योग नहीं ।

१८ उपयोग द्वार

पहले तीसरे गुण० ६ उपयोग-३ अज्ञान और ३ दर्शन एवं ६, दूसरे, चौथे, पांचवें गुण० ६ उपयोग-३ ज्ञान ३ दर्शन एवं ६, छठे से बारहवें तक उपयोग ७-४ ज्ञान ३ दर्शन (एवं ७) तेरहवें चौदहवें गुण० तथा निद्रा में ३ उपयोग १ केवल ज्ञान और २ केवल दर्शन ।

१९ लेश्या द्वार

पहले से छठे गुण० तक ६ लेश्या पावे, मातृवें गुण० तीन लेश्या पावे-तेजो, पद्म और शुक्ल । आठवें से बारहवें गुण० तक १ शुक्ल लेश्या तेरहवें गुण० १ परम गुण० लेश्या, चौदहवें गुण० लेश्या नहीं ।

२० चारित्र्य द्वार

पहले में चौथे गुण० तक कोई चारित्र्य नहीं, पांचवें गुण० देश यन्त्र सामायिक चारित्र्य, छठे सातवें गुण० ३ तीन चारित्र्य-सामायिक चारित्र्य, छंदोपस्थानीय चारित्र्य, परिहार विमुक्त चारित्र्य, एवं तीन । आठवें नववें गुण० २ दो चारित्र्य पावे, सामायिक चारित्र्य और छंदोपस्थानीय चारित्र्य, दशवें गुण० १ शुद्ध मंदराय चारित्र्य, द्वादशवें से चौदहवें गुण० तक १ दस स्थान चारित्र्य ।

और आहारिक के २ घटाना) नववें गुण० १६ हेतु (२२ में से-दाह्य, गति, अरति, भय शोक, दुर्गन्ध ये ६ घटाना) दशवें गुण० १० हेतु ६ योग और १ संज्वलन का लोभ एवं १० हेतु । इग्यारहवें, बारहवें गुण० ६ हेतु (६ योग के) तेरहवें गुण० ७ हेतु (सात योग के) चौदहवें गुण० हेतु नहीं ।

२ दण्डक द्वारः-पहले गुण० २४ दण्डक, दूसरे गुण० १६ दण्डक, (५ स्थावर के छोड़कर) तीसरे, चौथे, गुण० १६ दण्डक (१६ में से ३ विकलेन्द्रिय के घटाना) पांचवें गुण० २ दण्डक-संज्ञी मनुष्य और संज्ञी तिर्यच, छठे से चौदहवें गुण० तक १ मनुष्य का दण्डक ।

३ जीवा योनि द्वारः-पहले गुण० ८४ लाख जीवा योनि, दूसरे गुण० ३२ लाख, (एकेन्द्रिय की ५२ लाख छोड़कर) तीसरे चौथे गुण० २६ लाख जीवा योनि द्वार पांचवें गुण० १८ लाख जीवा योनि, छठे से चौदहवें गुण० १४ लाख जीवा योनि ।

४ अन्तर द्वारः-पहले गुण० जघन्य अन्तर्मुहूर्त उ० ६६ सागरोपम जाजेरी अधवा १३२ सागर जाजेरी, ये ६६ सागर चौथे गुण० रहे, अन्तर्मुहूर्त तीसरे गुण० रह कर पुनः चौथे गुण० ६६ सागर रह कर तिथ्यात्त्व गुण० अच्ये दूसरे गुण० में इग्यारहवें गुण० तक जघ य अन्तर्मुहूर्त अच्य ११ पन्य के असंख्यातव भाग (इतने काल के बिना उपशम

मी का एवं २६ मणि विस्तार श्री अनुयोग द्वारा विद्वान्
से जानना । देखो पृष्ठ १६०, १६१, १६२ ।

१४ गुणस्थान पर १० चेषक द्वारा

१ हेतु द्वारा:- २५ कषाय, १५ योग एवं ४० मणि
६ काय, ५ इन्द्रिय, १ मन एवं १२ अव्यक्त ($४० + १५ + ५ + १२$), प्रमिथ्यात्व एवं सर्व ५७ हेतु । पहले गुणस्थाने
हेतु (आहारिक के २ छोड़कर) दूसरे गुणस्थाने ५०
(५५ में से ५ मिथ्यात्व के छोड़ना) तीसरे गुणस्थाने
हेतु (५७ में से अनन्तानुबंधी के चार, आहारिक
मिश्र १ वैक्रिय का मिश्र १, आहारिक के २, क
का १, मिथ्यात्व ५, एवं १४ छोड़ना) चौथे गुणस्थाने
हेतु (४३ तो ऊपर के और आहारिक का मिश्र १, वैक्रिय
वैक्रिय का मिश्र १, कर्मण काययोग एवं ($४३ + ३ = ४६$)
पाँचवें गुणस्थाने ४० हेतु (४६ के ऊपर के उसमें से अ
स्थानी की चोकड़ी, प्रस काय का अव्यक्त और
काय योग ये ६ घटाना शेष ($४६ - ६ = ४०$) हेतु
गुणस्थाने २७ हेतु (४० में से प्रत्यास्थानी की चोकड़ी
स्थावर का अव्यक्त, पाँच इन्द्रिय का अव्यक्त और
का अव्यक्त एवं १५ घटाना शेष २५ रहे और २ अ
५ एवं २७ हेतु) सातवें गुणस्थाने २४ हेतु (२७ में म
रिक मिश्र, वैक्रिय मिश्र, आहारिक मिश्र ये तीन
शेष २४ हेतु) आठवें गुणस्थाने २२ हेतु (२४ में से

भेदी करके गिरे नहीं) उत्कृष्ट अर्द्धपुद्गल में देश नृ,
 बारहवें, तेरहवें और चौदहवें गुण० अन्तर नहीं पड़े ।

५ ध्यान द्वारः—पदेले, दूसरे, तीसरे, गुण० २ ध्यान
 (पदेला) चौथे, पाँचवें गुण० ३ ध्यान, छठे गुण० २ ध्यान
 १ आर्त ध्यान २ धर्म ध्यान । सातवें गुण० १ धर्म ध्यान
 आठवें में चौदहवें गुण० तक १ शुक्र ध्यान ।

६ करसना द्वारः—पदेले गुण० १४ राजसोक कामे,
 (हथेली) दूसरे गुण० नीचले पंडग वन से छठी नरक तक
 करसो तथा ऊँचा अघोगाम की विजय से नवप्रोपयेक तक
 करसो, तीसरे गुण० सोक के असंख्यातवें माग कामे । चौथा
 गुण० अघोगाम की विजय से बारहवें देव सोक तक
 कामे अथवा पंडग वन में छठे नरक तक करसो, पाँचवाँ
 गुण० इसी प्रकार अघोगाम की विजय से बारहवें देवसोक
 तक कामे । छठे में द्वादशवें गुण० तक अघोगाम की विजय
 में ५ अनुगर विमान तक कामे । बारहवाँ गुण० सोक
 का असंख्यातवें माग कामे । तेरहवाँ गुण० सौ सोक
 कामे । चौदहवाँ गुण० सोक का असंख्यातवें माग कामे ।

• निर्यंकर गोत्र ४ गुण० बान्धेः—चौथे, पाँचवें,
 छठे और सातवें एवं ४ गुण० बधि ओष गुण० नहीं बधि,
 निर्यंकर दस ६ गुण० कामे—४, ६, ७, ८, ९, १०, १२,
 १३, १४ एवं नव द्वादश ।

८ बारह अथवा आठवें द्वार — १४ गुण० में १,

ॐ तेतीश वेल ॐ

एक प्रकार का संयमः—सर्व आध्व से निर्वास होना। दो प्रकार का बंधः—१ गग बंध २ द्वेप बंध। तीन प्रकार का दण्डः—१ मन दण्ड २ वचन दण्ड ३ कार दण्ड। तीन प्रकार की गुप्तिः—१ मन गुप्ति २ वचन गुप्ति ३ काय गुप्ति। तीन प्रकार का शून्यः—१ माया शून्य २ निदान शून्य ३ मिथ्या दर्शन शून्य। तीन प्रकार का गर्वः—१ अद्वि गर्व २ अस गर्व ३ शास्त्रा गर्व। तीन प्रकार की विराधनाः—१ ज्ञान विराधना २ दर्शन विराधना ३ चारित्र्य विराधना।

४ चार प्रकार की कषायः—१ क्रोध कषाय २ मान कषाय ३ माया कषाय ४ लोभ कषाय। चार प्रकार की संज्ञाः—१ आहार संज्ञा २ भय संज्ञा ३ मैथुन संज्ञा ४ परिग्रह संज्ञा। चार प्रकार की कथाः—१ स्त्री कथा २ भक्त कथा ३ देश कथा ४ राज कथा। चार प्रकार का ध्यानः—१ आर्त ध्यान २ रौद्र ध्यान ३ धर्म ध्यान ४ शुक ध्यान।

पांच प्रकार की क्रियाः—१ कायिका क्रिया २ आधिकारिका क्रिया ३ प्रद्वेषिका क्रिया ४ पारितापिका क्रिया ५ शान्ति कृति क्रिया। पांच प्रकार का कर्मागुणः—१ शब्द २ रूप ३ गन्ध ४ रस ५ स्पर्श। पांच प्रकार

नय प्रकारकी ब्रह्मचर्य सुप्तिः-(१) स्त्री पशु पंङ्कली आलय (स्थानक) में रहना (इस पर) चूने सिद्धी का दृष्टान्त (२) मन को आनन्द देने वाली तथा काम-राग की बुद्धि करने वाली स्त्री के साथ वधा-वार्ता नहीं करना, नीर के रंग का दृष्टान्त (३) स्त्री के आसन पर बैठना नहीं तथा स्त्री के साथ सहवास करना नहीं। घृत के घट को अग्नि का दृष्टान्त (४) स्त्री का अङ्ग अथवा, उस की आकृति, उपर्युक्त बाल, शाल व उसका निरघल आदि का राग दृष्टिसे देखना नहीं-(घर्ष को दुस्मयी आश्रो से देखने का दृष्टान्त (५) स्त्री सम्बन्धी कृत्रिम, रुदन, भीत, हास्य, आनन्द आदि गुनाई देव एमी दीवार के समीप निवास नहीं करना, मृग को मर्जान का दृष्टान्त (६) पूर्वगत स्त्री सम्बन्धी क्रीडा, वाग, शक्ति, दर्प, स्नान, माध में मोजन करना आदि स्मरण नहीं करना। मर्ष के जल (विष) का दृष्टान्त (७) स्वादिष्ट तथा पोषक आहार नित्यप्रति करना नहीं। शिरोपी को घृत का दृष्टान्त (८) मर्यादित काल में धर्म यात्रा के निमित्त बलि उभने अभिष्ट आहार करना नहीं। कामन की कोथनी के रंगों का दृष्टान्त (९) शरीर सुन्दर व विभूषित करने के लिये यज्ञा व गोमा करना नहीं। बंद के साथ रत्न का दृष्टान्त

दृष्ट प्रकार का भ्रमण-(यनि) धर्म-१ धर्म

मदक करना २ मृकन निवासित रहना) ३ धर्म

१०० - ८ दृष्ट प्रकार का भ्रमण १००० (दोमन-भिर

गुरु आदि के समीप स्वार्थ रूप लक्ष्मी प्राप्त करने की हमेशा रहना ।

ग्यारह प्रकार की आवश्यक प्रतिमा—१ स मासकी-इस में शुद्ध सत्य धर्म की रुचि होवे पत्न नाना व्रत उपवासादि अवश्य करने के लिये पत्न को नियम न होवे । उसे दर्शन आवश्यक प्रतिमा कहें २ दूसरी प्रतिमा दो माह की-इसमें सत्य धर्म की रुचि के साथ २ नाना शील व्रत-गुणव्रत प्रत्याहार पौषपोषवासादि करे परन्तु सामायिक दिशा वक्राधिकार करने का नियम न होवे वो उपासक प्रतिमा ३ तीसरी प्रतिमा तीन माह की-इसमें ऊपर कहा उसके उपरान्त मास यिकादि करे, परन्तु अष्टमी, चतुर्दशी, अमावस्या, पूर्णमासी आदि पर्व में पौषपोषवासा करने का नियम न होवे । चौथी प्रतिमा चार माह की-इसमें ऊपर कहा उपरान्त प्रति पूर्ण पौषपोषवासा अष्टम्यादि सर्व में करे । ५ पाँचवी प्रतिमा पाँच माह की-इसमें पूर्ण सर्व आचरे, विशेष एक रात्रि में कायोत्सर्ग करे और शील आचरे; १ स्नान न करे २ रात्रि में जल न ले लांग न लगावे ४ दिन में ब्रह्मचर्य पाले ५ रात्रि में प मास करे । ६ छहठी प्रतिमा छः माह की-इसमें पूर्ण उपरान्त सर्व समय ब्रह्मचर्य पाले ७ सातवी प्रतिमा सात एक दिन उत्कृष्ट मान माह की इसमें मन्त्र आहार

अतिथि, कृपण, रंक प्रमुख द्विपद तथा चतुष्पद को अन-
राय नहीं लगे, इस तरह से लेवे । तथा एक मनुष्य जिनका
(भोजन करता) होवे व एक के निमित्त भोजन तैयार
किया होवे वो आधार लेवे । दो के भोजन करने में से
देवे तो नहीं लेवे; तीन, चार, पांच आदि भोजन करने में
पैठे हुए उसमें से देवे तो न लेवे; गर्भवन्ती निमित्त उत्पन्न
किया होवे वो न लेवे तथा नव प्रसूती का आधार न
लेवे, पालक को दूध पिलाने होवे उसके हाथ से नहीं लेवे,
तथा एक पाँच डेवकी के बाहर और एक पाँच डेवकी के
अन्दर रख कर बंदरावे तो लेवे, नहीं तो नहीं लेवे ।

३ प्रतिमा घारी साधु को तीन काल 'गौचरी' के होते
हैं-आदिम, मध्यम, चरम (अन्त का) 'चरम' अर्थात्
एक दिन के तीन भाग कर पहले भाग में 'गौचरी' जावे
तो दूसरे दो भाग में नहीं जावे इसी प्रकार तीनों में जानना ।

४ प्रतिमा घारी साधु को छः प्रकार की 'गौचरी'
करना कही है १ सन्दुक के आकार समान (चौमुनी)
२ अर्ध सन्दुक के आकार (दो पंक्ति) ३ पलद के मू
आकार ४ पतङ्ग टीढ़ उड़े उस समान अन्तर ५ से के
५ शंख के आवर्चन के समान गौचरी करे ६ जावता तथा
जावता गौचरी करे ।

५ प्रतिमा घारी साधु जिन गांव में जावे वहाँ या
यह जानने होवे कि यह प्रतिमा घारी साधु है तो एक रा

कोई दूसरा निकालने का प्रयाम करे तो स्वयं श्वा
शोध कर निकले ।

१५ प्रतिमा घारी साधु के पाँव में यदि कंट
लगा होवे तो उन्हें निकालना नहीं कन्ये ।

१६ प्रतिमा घारी साधु के श्वा में छोटे
नाना बीज व रज प्रमुख गिरे तो उन्हें निकाल
कन्ये, श्वा समिति में चलना कन्ये ।

१७ प्रतिमा घारी साधु को घूर्णास्त होने
एक पाँव भी आगे चलना नहीं कन्ये अर्थात् प्र
करने के समय तक विहार करे ।

१८ प्रतिमा घारी साधु को सविष पृथ्वी प
बैटना व थोड़ी निद्रा भी निकालना नहीं क
पहिले देखे हुवे स्थानक पर उचार प्रमुख परिठव

१९ साविष रज से यदि पाँव प्रमुख मरे हु
ऐसे शरीर से गृहस्थ के घर पर गौचरी जाना न

२० प्रतिमा घारी साधु को प्राशुक शीतल
जल में हाथ, पाँव, कान, नाक, श्वा प्रमुख एक
बारवार धोना नहीं कन्ये, केवल अशुचि से मरे
मोक्षण में मरे हुवे शरीर के अङ्ग धोना कन्ये
नहीं ।

२१ प्रतिमा घारी साधु घोड़ा, वृषभ, हाथ

आते हो तो डर कर एक पांच भी पीछे धरे नहीं परन्तु सुवांला (सीधा) मद्र जीव सामने आता हो; तो दया के कारण यत्ना के निमित्त पांच पीछे फिरे ।

२२ प्रतिमा धारी साधु धूर से छाया में नहीं जावे और छाया से धूर में नहीं जावे, शीत और ताप सम परिणाम पूर्वक सहन करे ।

दूसरी प्रतिमा एक मास की । इस में दो दाति आहार की और दो दाति जलकी लेवे ।

तीसरी प्रतिमा एक माह की । इस में तीन दाति आहार की और तीन दाति जलकी लेना कल्हे ।

चौथी प्रतिमा एक माह की । इस में चार दाति आहार की और चार दाति जल की लेना कल्हे ।

पांचवी प्रतिमा एक माह की । इस में पांच दाति आहार की और पांच दाति जल की लेना कल्हे ।

छट्टी प्रतिमा एक माह की । इस में ६ दाति आहार की और ६ दाति जल की लेना कल्हे ।

सातवी प्रतिमा एक माह की । इस में सात दाति आहार की और सात दाति जल की लेना कल्हे ।

आठवी प्रतिमा सात अहोरात्रि की । इस में जल बिना एकान्तर उपवास करे । ग्राम, नगर, राजधानी आदि के बाहर स्थानक करे । तीन आसन में बैठे, चित्त मोड़े, करवट में मोड़े, पलाट मग कर मोड़े । परन्तु बिनी नी परिपह में डरे नहीं ।

पर्व्याप्त (१०) चौरिन्द्रिय पर्व्याप्त (११) असंज्ञी पंचेन्द्रिय
अपर्व्याप्त (१२) असंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्व्याप्त (१३) संज्ञी
पंचेन्द्रिय अपर्व्याप्त (१४) संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्व्याप्त ।

पन्द्रह प्रकार के परमाधामी देव—(१) आद्य २
आत्र रत ३ शाम ४ सबल ५ रुद्र ६ वैश्रव ७ काल ८
महा काल । ९ असिपत्र १० घनुष्य ११ कुंभ १२ बाहु
(क) १३ वैतरणी १४ खरस्वर १५ महा घोष ।

सौलवे सूत्र कृत्त का प्रथम श्रुतस्कन्ध के सोलह
अध्यायनः—१ स्वप्नमय परममय २ वैदारिक ३ उपपन्न
प्रज्ञा ४ स्त्री प्रज्ञा ५ नरक विभक्ति ६ वीर स्तुति ७ कुशील
परिमाणा ८ वीर्या ध्ययन ९ धर्म ध्यान १० समाधि ११
मोक्ष मार्ग १२ समग्र सूरण १३ अथावध १४ प्रेमी १५
यमतिथि १६ गाथा ।

सत्तरह प्रकार का संयमः—१ पृथ्वी काय संयम
२ अप्काय संयम ३ तेजस् काय संयम ४ वायु काय संयम
५ वनस्पति काय संयम ६ चे इन्द्रिय काय संयम ७ त्रि
इन्द्रिय काय संयम ८ चौरिन्द्रिय काय संयम ९ पंचेन्द्रिय
काय संयम १० अजीव काय संयम ११ प्रेक्षा संयम १२
उत्प्रेक्षा संयम १३ अपहृत्य संयम १४ प्रमार्जना संयम १५
मन संयम १६ वचन संयम १७ काय संयम ।

अष्टारह प्रकार का ब्रह्मचर्य—ओदारिक शरीर
भेदन्वी भोग १ मन मे, २ वचन मे, ३ काया से सेवे

को १४ अकाले स्वाध्याय को १५ सचिच पृथ्वी से हाथ
पाँव भरे हुये होने पर भी आहारादि लेने जावे १६ शान्ति
के समय तथा प्रहर रात्रि बीत जाने पर जोर २ से
आयान को १७ मच्छ में भेद उत्पन्न को १८ मच्छ में
क्लेश उत्पन्न को १९ पशुपर दुग्ध उत्पन्न को २० एषोद
से लगाकर एषोदस्त तक अशनादि भोजन लेना ही ॥
२० अनेकलिङ्ग अश्राशुक्त आहार लेवे ।

इक्ष्वाक्य प्रकार के शपथ कर्म:- १ हस्त कर्म २
मधुन मेवे ३ रात्रि सोजना करे ४ आधा कमी भोगों ५
रात्र पिंड चिने ६ पांच सोल लेवे- १ गुरीद कर देवे तथा
लेवे २ उधार देवे तथा लेवे ३ बलान्कार से देवे तथा लेवे
४ सामी की आज्ञा बिना देवे तथा लेवे ५ स्थानक में
माना जाकर देवे तथा लेवे ७ बारंबार प्रत्याख्यान करके
भोगों ८ महिला के अन्दर तीन उदक लेप करे (नदी
उत्तरे) ९ छः माह में पहले एक मण से दूसरे मण में
जोड़े १० एक माह के अन्दर तीन माया का स्थान भोगों
११ शय्यातल का आहार करे १२ इगदा पूर्वक हिंसा करे
१३ इगदा पूर्वक अमन्य बोले १४ इगदा पूर्वक बोली करे
१५ इगदा पूर्वक मन्त्रित गृहति पर स्थानक शय्या
१६ १७ १८ इगदा पूर्वक मन्त्रित मिथ गृहति पर शय्या

करे १४ अश्वले स्वाध्याय करे १५ सवित्र पृथ्वी से इष्ट
पाँच मरे हुये होने पर भी आहारादि लेने जावे १६ शान्ति
के समय तथा प्रहर रात्रि धीत जाने पर जोर से
आवाज करे १७ मच्छ में मेद उत्पन्न करे १८ मच्छ में
क्लेश उत्पन्न करके परस्पर दुस्त्र उत्पन्न करे १९ सूर्योदय
से लगाकर सूर्यास्त तक अशनादि भोजन लेना ही ले
२० अनेपखिक अप्राशुक आहार लेवे ।

इष्टवीथ प्रकार के शयन कर्म:- १ इस्त कर्म २
मैथुन सेवे ३ रात्रि भोजन करे ४ आषा कर्मा भोगवे ५
राज पिंड विमे ६ पाँच कोल सेवे- १ खरीद कर देवे तथा
लेवे २ उधार देवे तथा लेवे ३ पत्तान्कार से देवे तथा लेवे
४ स्वामी की आज्ञा बिना देवे तथा लेवे ५ स्थानक में
सामा जाकर देवे तथा लेवे ७ बारंबार प्रत्याख्यान करके
भोगवे ८ महिने के अन्दर तीन उदक लेप करे (नदी
उतरे) ९ छः माह से पहले एक गण से हमरे गण में
जावे १० एक माह के अन्दर तीन माया का स्थान भोगवे
११ शय्यांतर का आहार करे १२ इरादा पूर्वक हिंसा करे
१३ इरादा पूर्वक असत्य बोले १४ इरादा पूर्वक चोरी करे
१५ इरादा पूर्वक सवित्र पृथ्वी पर स्थानक शय्या
बैठक करे १६ इरादा पूर्वक सवित्र मित्र पृथ्वी पर शय्या
दिक करे १७ सवित्र शिला, पत्थर, सूक्ष्म जीव जंतु
ऐसा कष्ट तथा रुंड प्राणी दीज, हति आदि जीव वा

करे १४ अकाले स्वाध्याय करे १५ सविच्च पृथ्वी से हाथ पाँव भरे हुये होने पर भी आहारादि लेने जावे १६ शान्ति के समय तथा प्रहर रात्रि बीत जाने पर जोर २ से आवाज करे १७ गच्छ में भेद उत्पन्न करे १८ गच्छ में भ्रमेश उत्पन्न करके परस्पर दुख उत्पन्न करे १९ सूर्योदय से लगाकर सूर्यास्त तक अश्वनादि मोत्रन लेता ही रहे २० अनेपणिक अप्राशुक आहार लेवे ।

इक्ष्वकीय प्रकार के शयन कर्म:-१ हस्त कर्म २ मैथुन सेवे ३ रात्रि मोत्रन करे ४ आधा कर्मी भोगवे ५ राज पिंड जिने ६ पाँच बोल सेवे-१ खरीद कर देवे तथा लेवे २ उधार देवे तथा लेवे ३ बलान्कार से देवे तथा लेवे ४ स्वामी की आज्ञा बिना देवे तथा लेवे ५ स्थानक में सामाँ जाकर देवे तथा लेवे ७ बारंबार प्रत्याख्यान करके भोगवे ८ महिने के अन्दर तीन उदक लेवे करे (नदी उतरे) ९ छः माह से पहले एक गण से दूसरे गण में जावे १० एक माह के अन्दर तीन माया का स्थान भोगवे ११ शय्यातर का आहार करे १२ इरादा पूर्वक हिंसा करे १३ इरादा पूर्वक असत्य बोले १४ इरादा पूर्वक चोरी करे १५ इरादा पूर्वक सविच्च पृथ्वी पर स्थानक शय्या व बैठक करे १६ इरादा पूर्वक सविच्च मिथ्य पृथ्वी का शय्या-दिक करे १७ सविच्च शिला, पत्थर, सूक्ष्म जीव जन्तु गेहे ऐसा कष्ट तथा भंड प्राणी बीज, हरित आदि जीव वाले

१६ मकाल साय्याप कर १७ सायच पृथ्वी १८ हाथ
 १९ मरे हुये होने पर भी आहारादि लेने जावे १६ शान्ति
 समय तथा प्रहर रात्रि बीच जाने पर जोर २ से
 यात्र करे १७ गच्छ में भेद उत्पन्न करे १८ गच्छ में
 उत्पन्न करके परस्पर दुम उत्पन्न करे १९ एषोदय
 लगाकर एषांस्त तक अशनादि भोजन लेता ही रहे
 अनेकानि अथाशुभ आहार लेवे ।

इष्यशीत प्रकार के शयन कर्म:- १ हस्त कर्म २
 न मेरे ३ रात्रि भोजन करे ४ आषा कर्मी भोगे ५
 विंइ जिने ६ पांच बोल मेरे-१ गरीद कर देवे तथा
 २ उधार देवे तथा लेवे ३ बनावकार मे देवे तथा लेवे
 ४ आमी की आजा बिना देवे तथा लेवे ५ स्थानक मे
 ६ आकर देवे तथा लेवे ७ बारबार प्रत्याख्यान करके
 ८ मदिने के अन्दर भीन उदक लेव करे (नदी
) ९ छः माह मे पहने एक गज मे दूसरे गज मे
 १० एक माह के अन्दर भीन माया का स्थान भोगे
 ११ शय्याशु का अहार करे १२ इगदा पूर्वक दिवा करे
 १३ इगदा पूर्वक समय बोलें १४ इगदा पूर्वक चोगी करे
 १५ इगदा पूर्वक मन्त्रिण पृथ्वी पर स्थापक शय्या व
 १६ इगदा पूर्वक मन्त्रिण मिथ पृथ्वी पर शय्या-
 १७ करे १८ मन्त्रिण गिना, पन्था, मूसम जीव वस्तु रहे
 १९ कष्ट तथा अष्ट शरीर शीत, दन्ति आदि जीव वस्तु

को १४ अकाले स्वाध्याय को १५ सचित्त पृथ्वी से हाथ पाँव मरे हुये होने पर भी आहारादि लेने जावे १६ शान्ति के समय तथा प्रहर रात्रि बीत जाने पर जोर २ से आवाज करे १७ गच्छ में भेद उत्पन्न करे १८ गच्छ में क्लेश उत्पन्न करके परस्पर दुख उत्पन्न करे १९ घृषादय से लगाकर घृषास्त तक अशनादि भोजन लेता ही रहे २० अनेपणिक अप्राशुक आहार लेवे ।

इक्षवीय प्रकार के शयन कर्म:-१ इस्त कर्म २ मैथुन सेवे ३ रात्रि भोजन करे ४ आधा कर्मा भोगवे ५ राज पिंड जिने ६ पाँच बोल सेवे-१ खरीद कर देवे तथा लेवे २ उधार देवे तथा लेवे ३ बलात्कार से देवे तथा लेवे ४ स्वामी की आज्ञा बिना देवे तथा लेवे ५ स्थानक में सामा जाकर देवे तथा लेवे ७ वारंवार प्रत्याख्यान करके भोगवे = मदिने के अन्दर तीन उदक लेव करे (नदी उतरे) ८ छः माह से पहले एक गण से दूसरे गण में जावे ९ एक माह के अन्दर तीन माया का स्थान भोगवे ११ शय्यातराज आहार करे १२ इरादा पूर्वक हिंसा करे १३ इरादा पूर्वक असत्य बोले १४ इरादा पूर्वक धोती करे १५ इरादा पूर्वक सचित्त पृथ्वी पर स्थानक शय्या व रेटक करे १६ इरादा पूर्वक सचित्त मिथ पृथ्वी पर शय्या-क करे १७ सचित्त शिला, पत्थर, मूढम जीव जंतु गेहूँ, कृष्ण तथा अंड प्राणी रोज, हनि आदि जीव बाले

पुरुषों का [द्वितीय-मित्र भादे] दिल फेर कर
को राज्य कर्तव्य से च्युत करे तो महा मोहनीय
११ स्त्री आदि गृह होकर, विवाहित होने
[मैं कुंवारा हूँ] कुमारपने का विरुद्ध घराबे
मोहनीय ।

१२ गायों [गौवं] के अन्दर गर्दभ समा
विषय में गृह हो कर आत्मा का अहित कर
माया मृषा बोले अवलंबारी होने पर भी अज्ञान
विरुद्ध [रूप] घराबे तो महा मोहनीय [कारण
में धर्म पर अधिश्वास होवे, धर्मों पर प्रतीत न रहे

१३ जिसके आश्रय से आजीविका को उर्म
दाता की लक्ष्मी में लुब्ध होकर उसकी लक्ष्मी लू
अन्य से लुटावे तो महा मोहनीय ।

१४ जिसकी दरिद्रता दूर करके ऊँच पद प
को किया वो पुरुष ऊँच पद पाकर पश्चात् ईर्ष्या
व कलुषित चित्त से उपकारी पुरुष पर विपत्ति डाल
घने प्रमुख की आमद में अन्तराय डाले तो महा मो

१५ अपना पालन पोषण करने वाले राजा,
प्रमुख तथा ज्ञानादि देने वाले गुरु आदि को म
महा

का राजा, व्यापारी गृह का

[व्यवहारिया] तथा नगर श्रेष्ठ ये तीनों अत्यन्त यशस्वी हैं अतः इनकी घात करे तो महा मोहनीय ।

१७ अनेक पुरुषों के आश्रय दाता-आधार भूत [समुद्र में द्रौप समान] को मारे तो महा मोहनीय ।

१८ संयम लेने वाले को तथा जिसने संयम ले लिया हो उसे धर्म से भ्रष्ट करे तो महा मोहनीय ।

१९ अनन्त ज्ञानी व अनन्त दर्शी ऐसे तीर्थंकर देव का अवर्णवाद [निन्दा] बोले तो महा मोहनीय ।

२० तीर्थंकर देव के प्ररूपित न्याय मार्ग का द्वेषी बन कर अवर्णवाद बोले, निन्दा करे और शुद्ध मार्ग से लोगों का मन फेरे तो महा मोहनीय ।

२१ आचार्य उपाध्याय जो सूत्र प्रमुख विनय सीखते हैं-व सिखाते हैं उनकी हिलना निन्दा करे तो महामोहनीय ।

२२ आचार्य उपाध्याय को सच्चे मन से नहीं आराधे तथा अहंकार से भक्ति सेवा नहीं करे तो महा मोहनीय ।

२३ अल्प सूत्री हो कर भी शास्त्रार्थ करके अपनी श्लाघा करे स्वाध्याय का वाद करे तो महा मोहनीय ।

२४ अतपस्वी होकर भी तपस्वी होने का ढोंग रचे (लोगों को ठगने के लिये) तो महा मोहनीय ।

२५ उपकारार्थ गुरु आदि का तथा स्थविर, ग्लान प्रमुख का शक्ति होने पर भी विनय वैयावच्च नहीं करे (कहे के इन्होंने मेरी सेवा पड़ेली नहीं की इस प्रकार वह

पूर्व मायावी मलिन चित्त वात्सा करना तोड़ बाँट कर नाश करने वाला अनुभवा रहित होता है) तो महा मोहनीय ।

२६ पाप तौर के अन्दर दुः पद ऐसी कथा काशी प्रभु (संतुष्ट रूप गुणोदक) का प्रयोग करे तो महा मोहनीय ।

२७ अपनी स्थावा काकाने उदा मिथ्या करने के लिये अर्धन योग बंधोकास निमित्त नथ प्रभु का प्रयोग करे तो महा मोहनीय ।

२८ मनुष्य सुम्बन्धी मोन तथा देव सुम्बन्धी योग वा अमृत पने गाढ़ परिश्रम से प्राप्त होकर आस्ता-दन करे तो महा मोहनीय ।

२९ महर्दिक महाज्योतिवान् महावगुस्त्री देशों के बल वीर्य प्रभु का अवर्ष वाद सोते तो महा मोहनीय ।

३० अज्ञानी होकर लोक में पूजा-सुधा निमित्त व्यन्तर प्रभु देव को नहीं देखता हुआ भी कहे कि 'मैं देखता हूँ' ऐसा कहे तो महा मोहनीय ।

इच्छार्थाय प्रकार के सिद्ध के आदि गुणः—आठ कर्म की ३१ प्रकृति का विजय से ३१ गुण ।

३१ प्रकृति नीचे लिखे अनुसार—

१ ज्ञानावासीय कर्म की पाच प्रकृति—१ ज्ञाना-

वरणीय २ श्रुत ज्ञाना वरणीय ३ अवधि ज्ञाना वरणीय
४ मन पर्यव ज्ञाना वरणीय ५ केवल ज्ञाना वरणीय ।

२ दर्शना वरणीय कर्म की नव प्रकृति-१ निद्रा २
निद्रा निद्रा ३ प्रचला ४ प्रचला प्रचला ५ धीणाद्वि (स्त्य-
नद्वि) (६) चक्षु दर्शना वरणीय (७) अचक्षु दर्शना वर-
णीय (८) अवधि दर्शना वरणीय (९) केवल दर्शना
वरणीय ।

(३) वेदनीय कर्म की दो प्रकृति-१ शाता वेदनीय २
अशाता वेदनीय ।

(४) मोहनीय कर्म की दो प्रकृति-१ दर्शन मोहनीय
२ चरित्र मोहनीय ।

(५) आयुष्य कर्म की चार प्रकृति-१ नरक आयुष्य २
तिर्यैच आयुष्य ३ मनुष्य आयुष्य ४ देव आयुष्य ।

(६) नाम कर्म की दो प्रकृति-१ शुभ नाम २ अशुभ
नाम ।

(७) गोत्र कर्म की दो प्रकृति-१ ऊंच गोत्र २ नीच
गोत्र ।

(८) अन्तराय कर्म की पांच प्रकृति-१ दानान्तराय २
लामान्तराय ३ भोगान्तराय ४ उप भोगान्तराय ५ वीर्यान्तराय

वर्त्ताश प्रकार का योग संग्रह:-१ जो कोई पाप
लगा होय उसका प्रायश्चित्त लेने का सुग्रह करना २ जो
कोई पाप भोग होय उसका दण्ड पतिव्रता वदना का सं-

करना ३ विपत्ति आने पर धर्म के अन्दर दृढ़ रहने का संग्रह करना ४ निथा रहित तप करने का संग्रह करना ५ स्रग्वर्ध ग्रहण करने का संग्रह करना ६ शुश्रूषा टालने का संग्रह करना ७ अज्ञात कुल की गौचरी करने का संग्रह करना ८ निर्लोभी होने का संग्रह करना ९ पार्वीस परिपह सहन करने का संग्रह करना १० सरल निर्मल (पवित्र) स्वभाव रखने का संग्रह करना ११ सत्य संयम रखने का संग्रह करना १२ समकित निर्मल रखने का संग्रह करना १३ समाधि से रहने का संग्रह करना १४ पांच आचार पालने का संग्रह करना १५ विनय करने का संग्रह करना १६ शरीर को स्थिर रखने का संग्रह करना १७ सुविधि-अच्छे अनुष्ठान का संग्रह करना २० आश्रव सेकने का संग्रह करना २१ आत्मा के दोष टालने का संग्रह करना २२ सर्व विषयों से विमुक्त रहने का संग्रह करना २३ प्रत्याख्यान करने का संग्रह करना २४ द्रव्य से उपाधि त्याग, भाव से गर्वादिक का त्याग करने का संग्रह करना २५ अप्रमादी होने का संग्रह करना २६ समय समय पर क्रिया करने का संग्रह करना २७ धर्म ध्यान का संग्रह करना २८ मंत्र योग का संग्रह करना २९ मरण आतङ्क (रोग) उत्पन्न होने पर मन में चान न करने का संग्रह करना ३० स्व-अन हि का न्य ग करने का संग्रह करना ३१ प्रायश्चित्त का संग्रह करना ३२ आराधिक

करे तो अशातना (१७) गुरु आदि के साथ मथना
 अन्य साधु के साथ अन्नदि बेहर कर लावे और गुरु
 व गुरु आदि को पूछे बिना त्रिम पर भजना प्रेम दे उसे
 थोड़ा २ देवे तो अशातना (१८) गुरु आदि के साथ
 आहार करते समय अच्छे २ पत्र, शकर, रस सहित मनोहर
 भोजन जन्दी से करे तो अशातना (१९) बड़ों के
 बोलाने पर सुनते हुवे भी तुर रहे तो अशातना (२०)
 बड़ों के बोलाने पर अपने आसन पर बैठे हुवा 'हां'
 कहे परन्तु काम का कहेगें इस मय से बड़ों के पास
 जावे नहीं तो अशातना (२१) बड़ों के बुलाने पर
 आवे और आकर कहे कि ' क्या करते हो ' इस
 प्रकार बड़ों के साथ अभिनय से बोले तो अशातना
 (२२) बड़े कहे कि यह काम करो तुम्हे लाभ होगा
 तब शिष्य कहे कि आप ही करो, आपको लाभ होगा तो
 अशातना (२३) शिष्य बड़ों के कठोर, कर्कश भाषा
 बोले तो अशातना (२४) शिष्य गुरु आदि बड़ों से,
 जिस प्रकार बड़े बोले वैसे ही श्रुद्धों से, वार्तालाप करे
 तो अशातना (२५) गुरु आदि धार्मिक व्याख्यान
 वांचते होवे उस समय सभा में जाकर कहे कि ' आप जो
 कहते हो वो कहां लिखा है ' इस प्रकार कहे तो अशातना
 (२६) गुरु आदि व्याख्यान देते हों उस समय उन्हें
 कहे कि आप बिलकुल भूल गये हो तो अशातना (२७)

नंदी सूत्र में पांच ज्ञान का विवेचन

१ ज्ञेय २ ज्ञान ३ ज्ञानी का अर्थ ।

१ ज्ञेय—ज्ञानने योग्य पदार्थ , २ ज्ञान—जीव का उपयोग, जीव का लक्षण, जीव के गुण का ज्ञान पना वो ज्ञान ३ ज्ञानी—जो जाने-ज्ञानने वाला जीव-मसंख्यत प्रदेशी आत्मा वो ज्ञानी ।

१ ज्ञान का विशेष अर्थ

१ जिससे वस्तु का ज्ञानपना होवे ।

२ जिसके द्वारा वस्तु की ज्ञान करी होवे ।

३ जिसकी सहायता से वस्तु की ज्ञानकारी होवे ।

४ जानना सो ज्ञान ।

ज्ञान के भेद

ज्ञान के पांच भेद १ मति ज्ञान २ भुत ज्ञान ३ अविज्ञान ४ मनः पर्वव ज्ञान ५ केवल ज्ञान ।

मति ज्ञान के दो भेद

१ सामान्य २ विशेष--१ सामान्य प्रकार का ज्ञान सो मति २ विशेष प्रकार का ज्ञान सो मति ज्ञान और विशेष प्रकार का अज्ञान सो मति अज्ञान । सम्यक् दृष्टि की मति वो मति ज्ञान और मिथ्या दृष्टि की मति सो मति अज्ञान ।

२ धृत ज्ञान के दो भेद

१ सामान्य २ विशेषः--१ सामान्य प्रकार का धृत सो धृत कहलाता है और २ विशेष प्रकार का धृत सो धृत ज्ञान या धृत अज्ञानः--सम्यक् दृष्टि का धृत--सो धृत ज्ञान और मिथ्या दृष्टि का धृत सो धृत अज्ञान १ मति ज्ञान २ धृत ज्ञान ये दोनों ज्ञान अन्योन्य पर-स्पर एक दूसरे में चीर नीर समान मिले रहते हैं । जीव और अभ्यन्तर शरीर के समान दोनों ज्ञान जब साथ होते हैं तबभी पहले मति ज्ञान और फिर धृत ज्ञान होता है । जीव मति के द्वारा जाने सो मति ज्ञान और धृत के दारे जाने सो धृत ज्ञानः--

मति ज्ञान का वर्णनः--

मति ज्ञान के दो भेदः--

धृत निधीत--मुने इवे वचनों के अनुसार मति फैलावे ।

२ अधृत निधीत--जो नहीं मुना व नहीं देखा हो वो भी उसमें अपनी मति (बुद्धि) फैलावे ।

अधृत निधीत के चार भेद

१ औत्पातिका २ वैनायिका ३ कार्मिका ४ पारिषा-निका ।

औत्पातिका बुद्धिः जो पहिले नहीं देखा हो व न मुना हो उसमें एक दिन विमृष्ट अर्थों की बुद्धि उत्पन्न हो-

वे व जो बुद्धि फल को उत्पन्न कर उसे भीष्माविका बुद्धि कहते हैं ।

२ वैनयिका बुद्धिः-गुरु आदि की विनय भक्ति से जो बुद्धि उत्पन्न होवे व शास्त्र का अर्थ रहस्य समझे वो वैनयिका बुद्धि ।

३ कार्मिका (कार्मीया) बुद्धिः-देउते, लिखते, चितरते, पढ़ते सुनते, सीखते आदि अनेक शिष्य कला आदि का अभ्यास करते २ इन में कुशलता प्राप्त करे वो कार्मिका बुद्धि ।

पारिणामिका बुद्धिः-जैसे जैसे वय (उम्र) की वृद्धि होनी जाती है वैसे वैसे बुद्धि बढ़ती जाती है, तथा बहु सुत्री स्थविर प्रत्येक गुरुआदि प्रमुख का आलोचन करता बुद्धि की वृद्धि होवे, ज्ञान स्मरणादि ज्ञान उत्पन्न होवे वो पारिणामिका बुद्धि ।

भूत निश्चील मति ज्ञान के चार भेद

१ अग्रद २ द्वा ३ अगत ४ धारणा ।

१ अग्रद के दो भेद

१ अग्रद २ अग्रदनाग्रद । अग्रदनाग्रद के चार भेदः-१ धोत्रेन्द्रिय अग्रदनाग्रद २ प्राणोन्द्रिय अग्रदनाग्रद ३ अग्रेन्द्रिय अग्रदनाग्रद ४ अग्रोन्द्रिय अग्रदनाग्रद
अग्रदनाग्रद-१ १५ ६ इन्द्रियों के नामने होते उन्हें

वे इन्द्रिये ग्रहण करें—सरावले के दृष्टान्त समान-वा व्यंजना-
वग्रह कहलाता है ।

चक्षु इन्द्रिय और मन ये दो रूपादि पुद्गल के सामने
जाकर उन्हें ग्रहण करें इसलिये चक्षुइन्द्रिय और मन
इन दो के व्यंजनावग्रह नहीं होते हैं, शेष चार इन्द्रियों का
व्यंजनावग्रह होता है ।

श्रोत्रेन्द्रिय व्यंजनावग्रह—जो कान के द्वारा शब्द
के पुद्गल ग्रहण करे ।

घ्राणेन्द्रिय व्यंजनावग्रह—जो नासिका से गन्ध
के पुद्गल ग्रहण करे ।

रसेन्द्रिय व्यंजनावग्रह—जो जिह्वा के द्वारा रस
के पुद्गल ग्रहण करे ।

स्पर्शेन्द्रिय व्यंजनावग्रह—जो शरीर के द्वारा स्पर्श
के पुद्गल ग्रहण करे ।

व्यंजनावग्रह को समझाने के लिये दो दृष्टान्त—

१ पड्विबोहग दिठंतेणं २ मल्लग दिठंतेणं

१ पड्विबोहग दिठंतेणं:—प्रति बोधक (जगाने का)

दृष्टान्त जैसे किसी सोते हुए पुरुष को कोई अन्य पुरुष
बुलाकर आवाज देवे ' हे देवदत्त ' यह सुनकर वो जाग
उठता है और जाग कर ' हूं ' जवाब देता है । तब
शिष्य शंका उत्पन्न होने पर पृच्छता है ' हे स्वामिन !
उन पुरुष ने हुंकारा दिया तो क्या उसने एक मनस के,

दो समय के, तीन समय के, चार समय के यावत् संख्यात समय के या असंख्यात समय के प्रवेश किये हुए शब्द पुद्गल ग्रहण किये हैं ? गुरु ने जवाब दिया—एक समय के नहीं, दो समय के नहीं तीन-चार यावत् संख्यात समय के नहीं परन्तु असंख्यात समय के प्रवेश किये हुए शब्द पुद्गल ग्रहण किये हैं इस प्रकार गुरु के कहने पर भी शिष्य की समझ में नहीं आया इस पर मल्लक (सरा-खवा) का दूसरा दृष्टान्त कहते हैं—कुम्हार के नीमाड़े में से अभी का निकला हुआ कोग सराखला हो और उसमें एक जल बिन्दु डाले परन्तु वो जल बिन्दु दिखाई नहीं देवे इस प्रकार दो तीन चार यावत् अनेक जल बिन्दु डालने पर जब तक वो भीजें नहीं वहाँ तक वो जल बिन्दु दिखाई नहीं देवे परन्तु भीजने के बाद वो जल बिन्दु सराखले में टहर जाता है ऐसा करते २ वो सराखला प्रथम पाव, आधा करने २ पूर्ण भरजाता है व पश्चात् जल बिन्दु के गिरने से गगखले में मे पानी निकलने लग जाता है वैसे ही कान में एक समय का प्रवेश किया हुआ पुद्गल ग्रहण नहीं हो सके, जैसे एक जल बिन्दु गगखले में दिखाई नहीं देवे वैसे ही दो, तीन, चार संख्यात समय के पुद्गल ग्रहण नहीं हो सके, अर्थात् दो पटक सके, सप्तक सके इसलिये कल्पित न समय आदिपे के १ व समय १ न समय के २ व १ व कय हुए पुद्गल जल

नहीं कि यह किम का शब्द व गन्ध प्रमुख है बादमें वह
से रहा मतिज्ञान में प्रवेश करे । इहा जो विचारे कि य
अमुक का शब्द व गन्ध प्रमुख है परन्तु निश्चय नहीं हो
पथात् अवाप्त मति ज्ञान में प्रवेश करे । अवाप्त जिससे
यह निश्चय हो कि यह अमुक का ही शब्द व गन्ध है
पथात् धारणा मति ज्ञान में प्रवेश करे । धारणा जो धा
राखे कि अमुक शब्द व गन्ध इस प्रकार का था ।

एवं इहा के ६ भेदः—भोगेन्द्रिय इहा, यावत् नो
इन्द्रिय इहा । एवं अवाप्त के ६ भेद भोगेन्द्रिय, यावत्
नोइन्द्रिय अवाप्त । एवं धारणा के ६ भेद भोगेन्द्रिय
धारणा यावत् नो इन्द्रिय धारणा ।

इनका काल कहते हैंः—अवग्रह का काल एक
समय से असंख्यात समय तक प्रवेश किये हुये पुद्गलों
को अन्त समय जाने कि मुझे कोई बुला रहा है ।

इहा का काल, अन्तर्मुहूर्त, विचार हुआ करे कि जो
मुझ बुला रहा है वो यह है अथवा वह ।

अवाप्त का कालः—अन्तर्मुहूर्त—निश्चय करने का कि
मुझे अमुक पुरुष ही बुला रहा है । शब्द क ऊपर से निश्चय करे ।

धारणे का काल संख्यात वर्षे अथवा असंख्यात
वर्षे तक धार राखे कि अमुक समय मैंने जो शब्द सुना वो
इस प्रकार है । अवग्रह के दश भेद, इहा के ६ भेद, अवाप्त

के ६ भेद, चारणा के ६ भेद एवं सब मिलकर श्रुत निश्चीन
मति ज्ञान के २८ भेद हूँ ।

मति ज्ञान समुच्चय चार प्रकार का-१ द्रव्य में
२ क्षेत्र में ३ काल में ४ भाव में १ द्रव्य में मति ज्ञानी
सामान्य से उपदेग द्वारा सर्व द्रव्य जाने परन्तु देखे नहीं ।
२ क्षेत्र में मति ज्ञानी सामान्य से उपदेग के द्वारा सर्व
क्षेत्र को जान जाने परन्तु देखे नहीं । ३ काल में मति
ज्ञानी सामान्य से उपदेग के द्वारा सर्व काल को जान जाने
परन्तु देखे नहीं । ४ भाव में-सामान्य से उपदेग के
द्वारा सर्व भाव को जान जाने परन्तु देखे नहीं-नहीं देखने
का कारण यह है कि मति ज्ञान को दर्शन नहीं है । नग-
दी वृक्ष में पासड़ पाठ है वो भी श्रद्धा के विषय में है
परन्तु देखे ऐसा नहीं ।

धुन (सूत्र) ज्ञान का वर्णन ।

धुन ज्ञान के १४ भेदः-१ अक्षर धुन २ अक्षर
धुन ३ मंत्री धुन ४ अमंत्री धुन ५ मन्त्रक धुन ६ निष्क
धुन ७ नादिक धुन ८ अनादिक धुन ९ सरसवन्ति धुन
१० असरसवन्ति धुन ११ गानिक धुन १२ अगानिक धुन
१३ अंगवन्ति धुन १४ अंगवन्ति धुन ।

१ अक्षर धुनः-इसके तीन भेद-१ मन्त्रा धुन
२ अक्षर धुन ३ मन्त्रि धुन ।

१ मन्त्रा धुन - मन्त्रा धुन २ मन्त्रा धुन ३ मन्त्रा धुन

को कहते हैं । जैसे क, ख, ग प्रमुख सर्व अक्षरों की संज्ञा का ज्ञान, क अक्षर के आकार को देख कर कहे कि यह ख नहीं, ग नहीं इस तरह से सर्व अक्षरों का ना वह कर कहे कि यह तो क ही है । एवं संस्कृत, प्राकृत, गोबी, फारसी, द्राविडी, हिन्दी आदि अनेक प्रकार की लिपियों में अनेक प्रकार के अक्षरों का आकार है इनका जो ज्ञान होवे उसे संज्ञा अक्षर भुज ज्ञान कहते हैं ।

२ व्यंजन अक्षर भुजः—ह्रस्व, दीर्घ, काना, मात्रा, अनुस्वार प्रमुख की संयोजना करके बोलना व्यंजनाक्षर भुज ।

३ लब्धि अक्षर भुजः—इन्द्रियार्थ के जानपने की लब्धि से अक्षर का जो ज्ञान होता है वो लब्धि अक्षर भुज इसके ६ भेद—

१ श्रोत्रेन्द्रिय लब्धि अक्षर भुजः—ज्ञान में भेरी प्रमुख का शब्द गुनकर कहे कि यह भेरी प्रमुख का शब्द है अतः भेरी प्रमुख अक्षर का ज्ञान श्रोत्रेन्द्रिय लब्धि में हुआ इस लिये इसे श्रोत्रेन्द्रिय लब्धि भुज कहते हैं ।

२ चक्षुर्इन्द्रिय अक्षर भुजः—आंख ग आम प्रमुख का रूप देख कर कहे कि यह आंख प्रमुख का रूप है अतः आम प्रमुख अक्षर का ज्ञान चक्षुर्इन्द्रिय लब्धि में हुआ इस लिये इसे चक्षुर्इन्द्रिय लब्धि भुज कहते हैं ।

३ श्रोत्रेन्द्रिय लब्धि अक्षर भुजः—आंख ग आम प्रमुख का रूप देख कर कहे कि यह आंख प्रमुख का रूप है अतः आम प्रमुख अक्षर का ज्ञान चक्षुर्इन्द्रिय लब्धि में हुआ इस लिये इसे चक्षुर्इन्द्रिय लब्धि भुज कहते हैं ।

केतकी प्रमुख की सुगन्ध ग्रंथ कर कहे कि यह केतकी प्रमुख की सुगन्ध है अतः केतकी प्रमुख अक्षर का ज्ञान घ्राणेन्द्रिय लब्धि से हुवा इस लिये इसे घ्राणेन्द्रिय लब्धि धृत कहते हैं ।

४ रसेन्द्रिय लब्धि अक्षर धृतः—जिह्वा से शकर प्रमुख का स्वाद जान कर कहे कि यह शकर प्रमुख का स्वाद है अतः इस अक्षर का ज्ञान रसेन्द्रिय से हुवा इसलिये इसे रसेन्द्रिय लब्धि अक्षर धृत कहते हैं ।

५ स्पर्शेन्द्रिय लब्धि अक्षर धृतः—शीत, उष्ण आदि का स्पर्श होने से जाने कि यह शीत व उष्ण है अतः इस अक्षर का ज्ञान स्पर्शेन्द्रिय से हुवा इस लिये इसे स्पर्शेन्द्रिय लब्धि अक्षर धृत कहते हैं ।

६ नोहन्द्रिय लब्धि अक्षर धृतः—मन में चिन्ता व विचार करते हुये स्मरण हुवा कि मैंने अमुक सोचा व विचारा अतः इस स्मरण के अक्षर का ज्ञान मन से—नोहन्द्रिय से हुवा इस लिये इसे नोहन्द्रिय लब्धि अक्षर धृत कहते हैं ।

२ अनक्षर धृतः—इसके अनेक भेद हैं, अक्षर का उच्चारण किये बिना शब्द, छोक, उधरम, उद्धास, निःश्वास, बगार्ली, नाक निपीक तथा नगारे प्रमुख का शब्द अनक्षरीवाणी द्वारा जान लेना इसे अनक्षर धृत कहते हैं ।

३ संज्ञा धृतः—इसके तीन भेद—१ मंजरी कालिकोपदेश २ मंजरी हतुपदेश ३ मंजरी दृष्टिवादोपदेश ।

१ संज्ञी कालिकोपदेशः—भुत सुनकर १ विचारना
२ निश्चय करना ३ समुच्चय अर्थ की गवेपणा करना
४ विशेष अर्थ की गवेपणा करना ५ सोचना (चिन्ता
करना) ६ निश्चय करके पुनः विचार करना ये ६ बोल संज्ञी
जीव के होते हैं । इस लिये इसे संज्ञी कालिकोपदेश भुत
कहते हैं ।

२ संज्ञी हेतूपदेशः—जो संज्ञी धारकर रखे ।

३ संज्ञी दृष्टि वादोपदेश—जो चयोपशम भाव से
सुने । अर्थात् शास्त्र को हेतु सहित, द्रव्य अर्थ सहित, का-
रण युक्ति सहित, उपयोग सहित पूर्वापर विचार सहित
जो पढ़े, पढ़ावे, सुने उसे संज्ञी भुत कहते हैं ।

असंज्ञी भुत के तीन भेदः—१ असंज्ञी कालिको-
पदेश २ असंज्ञी हेतूपदेश ३ असंज्ञी दृष्टिवादोपदेश ।

(१) असंज्ञी कालिकोपदेश भुत—जो सुने परन्तु
विचारे नहीं । संज्ञी के जो ६ बोल होते हैं वो असंज्ञी के
नहीं ।

असंज्ञी हेतूपदेश भुत—जो सुन कर धारण नहीं
करे ।

(३) असंज्ञी दृष्टिवादोपदेश—चयोपशम भाव से
जो नहीं सुने । एवं ये तीन बोल असंज्ञी आर्था कहें, अ-
र्थात् असंज्ञी भुत—जो भावार्थ सहित, विचार तथा उपयोग
शून्य, पूरक आलोचन सहित, निष्पत्ति सहित आद्य मंत्रा मे
पढ़ तथा पढ़ावे या मन उमे असंज्ञी भुत कहते हैं ।

(५) सम्यक् धृत-अरिहन्त, तीर्थंकर, केवल ज्ञानी केवल दर्शनी, द्वादश गुण सहित, अठारह दोष रहित, चौतीस अतिशय प्रमुख अनन्त गुण के धारक, इन से प्ररूपित बाहर अंग अर्थ रूप आगम तथा गणधर पुरुषों से गुंथित धृत रूप (मूल रूप) बारह आगम तथा चौदह पूर्व धारी, तेरह पूर्व धारी बारह पूर्व धारी व दश पूर्व धारी जो धृत तथा अर्थ रूप वाणी का प्रकाश किया है वो सम्यक् धृत, दश पूर्व से न्यून ज्ञान धारी द्वारा प्रकाशित किये हुवे आगम समधृत व मिथ्या धृत होते हैं ।

(६) मिथ्या धृत:-पूर्वोक्तगुण रहित, रागद्वेष सहित पुरुषों के द्वारा स्वमति अनुसार कल्पना करके मिथ्यात्व दृष्टि से रचे हुवे ग्रंथ-जैसे भारत, रामायण, वैद्यक, ज्योतिष तथा २६ जाति के पाप शास्त्र प्रमुख-मिथ्या धृत कहलाते हैं । ये मिथ्या धृत मिथ्या दृष्टि को मिथ्या धृत पने परिणामे (सत्य मान कर पढ़े इस लिये) परन्तु जो सम्यक् धृत का संपर्क होने से भूँट जान कर छोड़ देवे तो सम्यक् धृत पने परिणामे इस मिथ्या धृत सम्यक्त्ववान पुरुष को सम्यक् बुद्धि से वांचते हुवे सम्यक्त्व रत्न से परिणामे तो बुद्धि का प्रभाव जान कर आचार्यादि के सम्यक् शास्त्र भी सम्यक् वान पुरुष को सम्यक् हो कर परिणामे हैं और मिथ्या दृष्टि पुरुष का वे ही शास्त्र मिथ्यान्व पने परिणामे हैं ।

७ सादिक भुत ८ अनादिक भुत ९ सपर्यवसित भुत १० अपर्यवसित भुतः—इन चार प्रकार के भुत का भावार्थ साथ २ दिया जाता है । बारह अंग व्यवच्छेद होने आधी अन्त सहित और व्यवच्छेद न होने आधी आदिक अन्त रहित । समुच्चय से चार प्रकार के होते हैं । द्रव्य से एक पुरुष ने पटना शुरू किया उसे सादिक सपर्यवसित कहते हैं और अनेक पुरुष पंपरा आधी अनादिक अपर्यवसित कहते हैं क्षेत्र से ५ भरत ५ एरावन, दश क्षेत्र आधी सादिक सपर्यवसित ५ महा विदेह आधी अनादिक अपर्यवसित, काल से उत्सर्पिणी अवसर्पिणी आधी सादिक सपर्यवसित नोउत्सर्पिणी नोअवसर्पिणी आधी अनादिक अपर्यवसित, भाव से तीर्थंकरों ने भाव प्रकाशित किया इस आधी सादिक सपर्यवसित । चयोपशम भाव आधी अनादिक अपर्यवसित अथवा भव्य का भुत आदिक अन्त सहित अमव्य का भुत आदि अन्त रहित । इन पर दृष्टान्त—सर्व आकाश के अनन्त प्रदेश हैं व एक एक आकाश प्रदेश में अनन्त पर्याय हैं । उन सर्व पर्याय से अनन्त गुणे अधिक एक अगुरुलघु पर्याय अचर होता है जो चरे नहीं, व अप्रतिहत, प्रधान, ज्ञान, दर्शन जानना सो अचर, अचर ने बल सम्पूर्ण ज्ञान जानना-इस में से सर्व जीव को सर्व प्रदेश के अनन्तवे भाग जान पना सदाकाल रहता है शिष्य पूछने लगा हे स्वामिन् ! यदि उनका जानपना

सामायिक प्रमुख २ आवश्यक व्यतिरिक्त के दो भेद
१ कालिक भू। २ उत्कालिक भूत।

१ कालिक भूत-इसके अनेक मंद हैं-उत्तराख्यपन, इशाभुत रुक्मिण, इरान् कन्य, क्यउदार प्रमुख एकत्रीश इन कालिक के नाम नंदि सूत्र में आये हैं । तथा जिनके तीर्थहर के जितने शिष्य (जिनके चार वृद्धि हारे) होये उतने पद्मा सिद्धान्त जानना जैसे आपस देव के २५००० लाख पद्मा तथा २२ तीर्थहर के संख्याता ४ हजार पद्मा तथा महावीर स्वामी के १४ हजार पद्मा तथा सर्व गणेश के पद्मा व प्रत्येक वृद्ध के बनाए हुए पद्मा में सर्व कालिक जानना एवं कालिक भूत ।

२ उद्योगिक धूल-युक्त अनेक प्रकार के हैं।
इसैकात्मिक प्रमुख २२ प्रकार के गुणों के नाम नीचे
दिए हैं। ये भी इनके विषय और भी अनेक
प्रकार के गुण हैं परन्तु संशोधन में अनेक गुण विवेचन
में हैं।

डादगाँव मिहान्ति साबावे ई. मन्दूक गमान, गन
हाल में मनन्त और पत्र हा थ / ११ कड मना
मने मुन दू ई मय न के न य म- ॥ १ ॥ दुन
मुन / ११ ॥ न + न ध र क थ / ११ कड

दिक गुणों के साथ अखण्ड को जो उत्पन्न होता है वो चायोपशमिक ।

अवधिज्ञान के (संचय में) छः भेद-१ अनुगा-
मिक २ अनानुगामिक ३ वर्ष मानक ४ हाथ मानक
५ प्रति पाति ६ अप्रतिपाति ।

१ अनुगामिक-जहाँ-जावे वहाँ साथ आवे (रहे) यद
दो प्रकार का-१ अन्तःगते २ मध्यगत ।

(१) अन्तः गत अवधिज्ञान के ३ भेदः- (१)

पुरतः अन्तः गत-(पुरमो अन्तगत) शरीर के आगे
के भाग के क्षेत्र में जाने व देखे ।

(२) मार्गतः अन्तः गत (मरगमो अन्तगत) शरीर
के पृष्ठ भाग के क्षेत्र में जाने व देखे ।

(३) पार्श्वः अन्तःगत-शरीर के दो पार्श्व भाग के
क्षेत्र में जाने व देखे ।

अन्तःगत अवधिज्ञान पर दृष्टान्तः जैसे कोई पुरुष
दाय प्रमुख अग्नि का भाजन व मणि प्रमुख दायमें लेकर
आगे करता हुआ चले तो आगे देखे, पीछे रख कर चले
तो पीछे देखे व दोनों तरफ रख कर चले तो दोनों तरफ
देखे व जिस तरफ रखे उधर देखे दूसरी तरफ नहीं ।
ऐसा अवधिज्ञान का ज्ञानना । जिस तरफ देखे जाने उस
तरफ संरुपाठा, अन्रुपाठा योजना तक जाने देखे ।

(२) मध्य गत-यह सर्व दिशा व विदिशाओं में

लोक के बराबर असंख्यात सृष्टि (माय विह्वल) भराप
उठना चेत्य सर्व दिशा व विदियामों (चारों ओर) से
देखे । अवधि ज्ञान रूपी पदार्थ देखे । मध्यम अनेक भेद हैं—
यदि चार प्रकार से होंगे—

१ द्रुम्य से २ घंटा से ३ काल से ४ भाव से ।

१. काल से ज्ञान की शुद्धि होये तब तीन शील का ज्ञान बढ़े ।

२ धेय से ज्ञान बढ़े तब काल ही भवता व
द्रव्य भाव का ज्ञान बढ़े ।

२. दूसरे से ज्ञान बढ़े तथा काल की तथा देश की भ्रमना व भाव की दृष्टि ।

४ भाव से ज्ञान उदं तो शेष तीन बोल की मन्त्रना
इसका विस्तार पूर्वक अर्णवः सर्व वस्तुओं में काल-काष्ठान
एषव दे त्रैमे चावे आरे मे क्रमा दृवा निरोधो बलिष्ट
शरीर व वज्रभूषण नागाच भेदनन वाला पुढर तीक्ष्ण
मुई लेला डटे जान की बीड़ी रीति, रिथो सम्यक् पान
मे दूसर पान मे मुई को जाने मे समंस्कारा समय लग
जाता है। कात ऐसा पूजन होता है। इससे चेत समंस्कारा-
त गुण गुण है। जैसे एक यात्रा नितिन क्षेत्र में समं-
स्कारा ध्याने है एक एक वर्गों में समंस्कारा प्राप्ति
प्रदत्त है एक एक यवन न एक एक माहाय प्रदत्त है
५ संवत्सर १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १

जाते हैं तो भी एक श्रेणी पूरी (पूर्ण) न होवे । इस प्रकार क्षेत्र सूक्ष्म है । इससे द्रव्य अनन्त गुणा सूक्ष्म है । एक अंगुल प्रमाण क्षेत्र में असंख्यात श्रेणियाँ हैं अंगुल प्रमाण लम्बी व एक प्रदेश प्रमाण जाड़ी में असंख्यात आकाश प्रदेश हैं । एक एक आकाश प्रदेश ऊपर अनन्त परमाणु तथा द्विप्रदेशी, त्रिप्रदेशी, अनन्त प्रदेशी यावत् स्कन्ध प्रमुख द्रव्य हैं । इन द्रव्यों में से समय समय एक एक द्रव्य का अपहरण करने में अनन्त काल चक्र लग जाते हैं तो भी द्रव्य सूक्ष्म नहीं होते द्रव्य से भाव अनन्त गुणा सूक्ष्म है । पूर्वोक्त श्रेणी में जो द्रव्य कहे हैं उनमें से एक एक द्रव्य में अनन्त पर्यव (भाव) हैं एक परमाणु में एक वर्ण, एक गन्ध, एक रस, दो स्पर्श हैं । तिनमें एक वर्ण में अनन्त पर्यव हैं । यह एक गुण काला, द्विगुण काला, त्रिगुण काला यावत् अनन्त गुण काला है इस प्रकार पाँचों बोल में अनन्त पर्यव हैं एवं पाँच वर्ण में, दो गन्ध, पाँच रस, व आठ स्पर्श में अनन्त पर्याय हैं । द्वि-प्रदेशी स्कन्ध में २ वर्ण, २ गन्ध, २ रस, ४ स्पर्श हैं इन दश भेदों में भी पूर्वोक्त रीति से अनन्त पर्यव हैं, इस प्रकार सर्व द्रव्य में पर्येव की भावना करना, एवं सर्व द्रव्य के पर्येव इच्छा करके समय समय एक एक पर्येव का अरहरण करने में अनन्त काल चक्र : उन्मर्षिणी अवसाधिनी । रीति ज्ञान पर परमाणु द्रव्य के पर्येव पूरे होते हैं एवं द्वि-

प्रदेशी स्कन्धों के पर्यव त्रिप्रदेशी स्कन्धों के पर्यव, यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्धों के पर्यव का अपहरण करने में अनन्त काल चक्र लग जाते हैं तो भी सूटे नहीं इन प्रकार द्रव्य से माव सूक्ष्म होते हैं, काल को चने की ओपमा क्षेत्र को ज्वार की ओपमा द्रव्य को तिल को ओपमा और माव को सुमसुम की ओपमा दी गई है ।

पूर्व चार प्रकार की बुद्धि की जो रीति कही गई है उस में से क्षेत्र से व काल में किन प्रकार वर्धमान ज्ञान होता है उसका वर्णन:-

१ क्षेत्र से आंगुल का असंख्यातवें भाग जाने देखे व काल से आवलिका के अनंख्यातवें माग की बात गत व मविष्य काल की जाने देखे ।

२ क्षेत्र से आंगुल के संख्यातवें भाग जाने देखे व काल से आवलिका के संख्यातवें भाग की बात गत व मविष्य काल की जाने देखे ।

३ क्षेत्र से एक आंगुल मात्र क्षेत्र जाने देखे व काल से आवलिका से कुछ न्यून जाने देखे ।

४ क्षेत्र में दूधरू (दो में नव तरु) आंगुल की बात जाने देखे व काल से आवलिका मर्याद काल की बात गत व मविष्य काल की जाने देखे ।

५ क्षेत्र से एक हाथ प्रमाण क्षेत्र जाने देखे व काल में अनन्तर्भूत (बुद्धि में न्यून) काल की बात गत व मवि-

प्य काल की जाने देखे ।

६ चेत्र से धनुष्य प्रमाण चेत्र जाने देखे व काल से प्रत्येक मुहूर्त की बात जाने देखे ।

७ चेत्र से गाउ (कोस) प्रमाण चेत्र जाने देखे व काल से एक दिवस में कुल न्यून की बात जाने देखे ।

८ चेत्र से एक योजन प्रमाण चेत्र जाने देखे व काल से प्रत्येक दिवस की बात जाने देखे ।

९ चेत्र से पञ्चीश योजन चेत्र के भाव जाने देखे व काल से पक्ष में न्यून की बात जाने देखे ।

१० चेत्र से भरत चेत्र प्रमाण चेत्र के भाव जाने देखे व काल से पक्ष पूर्ण की बात जाने देखे ।

११ चेत्र से जम्बू द्वीप प्रमाण चेत्र की बात जाने देखे व काल से एक माह जाजेरी की बात जाने देखे ।

१२ चेत्र से अढ़ाई द्वीप की बात जाने देखे व काल से एक वर्ष की बात जाने देखे ।

१३ चेत्र से पन्द्रहवाँ रुक्क द्वीप तक जाने देखे व काल से पृथक् वर्ष की बात जाने देखे ।

१४ चेत्र से संख्याता द्वीप समुद्र की बात जाने देखे व काल से संख्याता काल की बात जाने देखे ।

१५ चेत्र से संख्याता तथा असंख्याता द्वीप समुद्र की बात जाने देखे व काल से असंख्याता काल की बात जाने देखे । इस प्रकार उर्ध्व लोक, अधो लोक, तिर्यक्

लोक इन तीन लोकों में बढ़ते वर्धमान परिणाम से प्र
में असंख्योता लोक प्रमाण खण्ड जानने की शक्ति
होवे ।

४ हाय मानक अवाधि ज्ञान-अप्रशस्त ले
के। परिणाम के कारण, अशुभ ध्यान से व मोविशुद्ध चा।
परिणाम से (चरित्र की मलिनता से) वर्ध मा।
अवाधि ज्ञान की डानि होती है। व कुल्लर घटता जा।
है। इसे हाय मानक अवाधि ज्ञान कहते हैं।

५ प्राति पाति अवधि ज्ञान-जो अवधि ज्ञान प्रा
 हो गया है वो एक समय ही नष्ट हो जाता है । वो अथवा
 १ आङ्गुल के असख्यातवें भाग २ आङ्गुल के संख्यातवें भाग
 ३ बालाग्रं ४ पृथक् बालाग्रं ५ लिम्ब ६ पृथक् लिम्ब
 ७ पूका (जू) = पृथक् जू ८ जब १० पृथक् जब ११
 आङ्गुल १२ पृथक् आङ्गुल १३ पाँव १४ पृथक् पाँव १५
 वेहैत १६ पृथक् वेहैत १७ हाथ १८ पृथक् हाथ
 १९ कुक्षि (दो हाथ) २० पृथक् कुक्षि २१ धनुष्य
 २२ पृथक् धनुष्य २३ गाड २४ पृथक् गाड २५
 योजन २६ पृथक् योजन २७ गो योजन २८ पृथक्
 सो योजन २९ सदस्र योजन ३० पृथक् सदस्र
 योजन ३१ लघ योजन ३२ पृथक् लघ योजन ३३ करोड
 योजन ३४ पृथक् करोड योजन ३५ करोडा करोड योजन
 ३६ पृथक् करोडा करोड योजन इस प्रकार चैत्र अवधि

अराधित मान का विषय (देखने की शक्ति)

नवा नं० १

विषय	१	२	३	४	५	६	७
१. रत्न प्रसा	रत्न प्रसा	शंकर प्रसा	बाहु प्रसा	पंक प्रसा	धूम प्रसा	तपः प्रसा	समलमः प्रसा
२. रत्न	२० गाउ	२ गाउ	२० गाउ	२ गाउ	१॥ गाउ	२ गाउ	०॥ गाउ
३. रत्न	४ गाउ	३० गाउ	२ गाउ	२॥ गाउ	२ गाउ	१॥ गाउ	१ गाउ

नवा नं० २

विषय	असुर कुमार	ह निमाय	विर्षव पंचे	संज्ञी	ज्योतिषी	देव लोक	देव लोक
४. देखे	२५ योवन	व्यन्तर	न्द्रिय संज्ञी	मनुष्य	संख्याता	१-२	३-४
५. देखे	असंख्यात	संख्यात	आहुत के	आहुत के	संख्याता	आहुत के	आहुत के
६. देखे	असंख्यात	असंख्यात	असंख्यात	असंख्यात	दीप समुद्र	अ. भाग	अ. भाग
७. देखे	दीप समुद्र	दीप समुद्र	दीप समुद्र	दीप समुद्र	अ. भाग	रत्न प्रसा के शंकर प्र.	नचि का तला के जति

अवधि ज्ञान देखने का संस्थान आकारः-१ नेरियों का अवधि ज्ञान आपा (त्रिपाई) के आकार २ भवन पति का पाला के आकार ३ तिर्यच का तथा मनुष्य का अनेक प्रकार का है ४ व्यन्तर का पट्टह वाजिन्त्र के आकार ५ ज्योतिषी का भास्तर के आकार ६ बाग्द देवलोक का ऊर्ध्वे मृदंग आकार ७ नव ग्रीयवेक का फूलों की शृंगेरी के आकार ८ पांच अनुत्तर विमान का अवधि ज्ञान कंशुकी के आकार होता है ।

नारकी देव का अवधि ज्ञान-१ अनुगामिक २ अप्रतिपाति ३ अवस्थित एवं तीन प्रकार का ।

मनुष्य और तिर्यच का-१ अनुगामिक २ अनानुगामिक ३ वर्धमानक ४ हाय मानक ५ प्रतिपाति ६ अप्रतिपाति ७ अवस्थित ८ अनवस्थित होता है । यह विषय द्वार प्रह्वय प्रज्ञापना सूत्र के ३३ वें पद से लिखा है । यदि सूत्र में संक्षेप में लिखा हुआ है ।

मनः पर्यय ज्ञान का विस्तार

मन पर्यय ज्ञान के चार भेदः—

१ लब्धि मनः—यह अनुत्तर वासी देवों को होता है ।

२ रुंज्ञा मनः—यह मंत्री मनुष्य व मंत्री तिर्यच को होता है ।

- ३ वर्गणा मनः—यह नास्ती व अनुत्तर विमान वासी देवों के सिवाय दूसरे देवों को होता है ।
- ४ पर्याय मनः—यह मनः पर्यव ज्ञानी को होता है मनः पर्यव ज्ञान किम को उत्पन्न होता है ?
- १ मनुष्य को उत्पन्न होवे, अमनुष्य को नहीं ।
- २ संज्ञी मनुष्य को उत्पन्न होवे असंज्ञी मनुष्य को नहीं ।
- ३ कर्म भूमि संज्ञी मनुष्य को उत्पन्न होवे अकर्म भूमि संज्ञी मनुष्य को नहीं ।
- ४ कर्म भूमि में संख्याता वर्ष का आयुष्य वाला को उत्पन्न होवे परन्तु असंख्याता वर्ष का आयुष्य वाला को उत्पन्न नहीं होवे ।
- ५ संख्याता वर्ष का आयुष्य में पर्याप्त को उत्पन्न होवे अपर्याप्त को नहीं ।
- ६ पर्याप्त में भी समदृष्टि को उत्पन्न होवे मिथ्या-दृष्टि व मिथ्य दृष्टि को नहीं होवे ।
- ७ सम दृष्टि में भी संयति को उत्पन्न होवे परन्तु अश्रुती समदृष्टि व देश-व्रती वाले को नहीं उत्पन्न होवे ।
- ८ संयति में भी अश्रुत संयति को उत्पन्न होवे श्रुत संयति को नहीं होवे ।
- ९ अश्रुत संयति में भी लब्धिदान को उत्पन्न होवे लब्धिदान को नहीं ।

मनः पर्यव ज्ञान के दो भेदः— १ श्रुति मति मनः पर्यव ज्ञान २ विपुल मति मनः पर्यव ज्ञान । सामान्य प्रकार से जाने तो श्रुति मति और विशेष प्रकार से जाने तो विपुल मति मनः पर्यव ज्ञान ।

मनः पर्यव ज्ञान के समुच्चये चार भेद हैं:- १ द्रव्य से २ क्षेत्र से ३ काल से ४ भाव से । द्रव्य से श्रुतिमति अनन्त अनन्त प्रदेशी स्कन्ध जाने देखे (सामान्य से विपुल मति इससे अधिक स्पष्टता से व निर्णय सहित जाने देखे

२ क्षेत्र से श्रुतिमति अधन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट नीचे रत्न प्रभा का प्रथम काण्ड के ऊपर का छोटे प्रतर का नीचला तला तक अर्थात् सम भूतल पृथ्वी से १००० योजन नीचे देखे, ऊर्ध्व ज्योतिषी के ऊपर का तल तक देखे अर्थात् समभूतल से ६०० योजन का ऊँचा देखे, विरिक् देखे तो मनुष्य क्षेत्र में अढ़ाई द्वीप तथा दो समुद्र के अन्दर सँझी पंचेन्द्रिय पर्याप्त के मनोगत भाव जाने देखे, विपुल मति श्रुति मति से अढ़ाई अंगुल अधिक विशेष स्पष्ट निर्णय सहित जाने देखे ।

३ काल में श्रुति मति अधन्य पन्योपम के असंख्यातवें भाग की बात जाने देखे, उत्कृष्ट पन्योपम के असंख्यातवें भाग की अतीत अनागत काल की बात जाने देखे, विपुल मति श्रुति मति से विशेष, स्पष्ट निर्णय सहित जाने देखे ।

४ भाव से श्रुति मति जयन्त्य अनन्त द्रव्य के भाव (वर्णादि पर्याय) जाने देखे उत्कृष्ट सर्व भावों के अनन्तवे भाग जाने देखे, विपुल मति इस से स्पष्ट निर्यय नदित विशेष अधिक जाने देखे ।

मनः पर्यव ज्ञानी अटार्ह द्वीप में रहे हुवे संज्ञी पंचेन्द्रिय के मनोगत भाव जाने देखे अनुमान से जैसे धूँवा देख कर अग्नि का निश्चय होता है वैसे ही मनोगत भाव से देखते हैं ।

केवल ज्ञान का वर्णन ।

केवल ज्ञान के दो भेद—१ मवस्थ केवल ज्ञान २ सिद्ध केवल ज्ञान । मवस्थ केवल ज्ञान के दो भेद १ संयोगी मवस्थ केवल ज्ञान २ अयोगी मवस्थ केवल ज्ञान, इनका विस्तार सूत्र से जानना । सिद्ध केवल ज्ञान के दो भेद—१ अनन्तर सिद्ध केवल ज्ञान २ परंपर सिद्ध केवल ज्ञान विस्तार सूत्र से जानना ज्ञान सधुध्य चार प्रकार का—१ द्रव्य से २ क्षेत्र से ३ काल से ४ भाव से ।

१ द्रव्य से केवल ज्ञानी सर्व रूपी अरूपी द्रव्य जाने देखे ।

२ क्षेत्र से केवल ज्ञानी सर्व क्षेत्र (लोकालोक) की बात जाने देखे ।

३ काल से केवल ज्ञानी सर्व काल की—भूत, भविष्य, वर्तमान—बात जाने देखे ।

के अन्दर नाव रूप हो जाता है ७ दण्ड रत्न—वेताङ्ग पर्वत के दोनों गुफाओं के द्वार खोलता है ४ खड्ग रत्न—शत्रु को मारता है ६ मणि रत्न—हस्ति रत्न के मस्तक पर रखने से प्रकाश करता है ७ काङ्कण (कांगनी) रत्न—गुफाओं में एकर योजन के अन्तर पर धनुष्य के गोलाकार पिंसने से सूर्य समान प्रकाश करता है ।

सात पञ्चेन्द्रिय रत्न

१ सेनापति रत्न—देशों को विजय करते हैं २ गाथापति रत्न—चौबीस प्रकार का धान्य उत्पन्न करते हैं ३ वार्धक (बढाई) रत्न—४२ भूमि महल सड़क पुल आदि निर्माण करते हैं ४ पुरोहित रत्न—लगे हुये पावों को ठीक करते विम को दूर करते, शांति पाठ पढ़ते व कथा सुनाते हैं ५ स्त्री रत्न—विषय के उपभोग में काम आती ६—७ गज रत्न व अश्व रत्न—ये दोनों सवारी में काम आते ।

चौदह रत्नों का उत्पत्ति स्थान

१ चक्र रत्न २ छत्र रत्न ३ दण्ड रत्न ४ खड्ग रत्न ये चार रत्न चक्रवर्ती की आयुध शाला में उत्पन्न होते हैं ।

१ चर्म रत्न २ मणि रत्न ३ काङ्कण (कांगनी) रत्न ये तीन रत्न लक्ष्मी के भण्डार में उत्पन्न होते हैं ।

१ सेनापति रत्न २ गाथापति रत्न ३ वार्धक रत्न ४

१ स्त्री रत्न विद्याधरों की श्रेणी में उत्पन्न होती है ।

१ गज रत्न २ अश्व रत्न ये दोनों रत्न वृताढ्य पर्वत के मूल में उत्पन्न होते हैं ।

चौदह रत्नों की अवगाहना

१ चक्र रत्न २ छत्र रत्न ३ दण्ड रत्न ये तीन रत्न की अवगाहना एक धनुष्य प्रमाण, चर्म रत्न की दो हाथ की, खड्ग रत्न पचास अङ्गुल लम्बा १६ अंगुल चौड़ा और आधा अंगुल जाड़ा होता है और चार अंगुल की मृष्टि होती है । मणि रत्न चार अंगुल लम्बा और दो अंगुल चौड़ा व तीन कोने वाला होता है । काकण्य रत्न चार अंगुल लम्बा चार अंगुल चौड़ा चार अंगुल ऊँचा होता है इसके छः तले, आठ कोण, बारह हाँसे वाला आठ सोनेया त्रिवेना वजन में व सोनार के एख समान आकार में होता है ।

सात पंचेन्द्रिय रत्न की अवगाहना

१ सेना पति २ गाथा पति ३ चाधिक ४ प्रोदित इन चार रत्नों की अवगाहना चक्रवर्ती ममान । श्री रत्न चक्रवर्ती ने चार आङ्गुल छोटी होती है ।

गज रत्न चक्रवर्ती ने दूगना होता है । अश्व रत्न १०८ अङ्गुल लम्बा १०८ अङ्गुल चौड़ा १०८ अङ्गुल ऊँचा होता है । मणि रत्न ४ अङ्गुल लम्बा २ अङ्गुल चौड़ा २ अङ्गुल ऊँचा होता है । काकण्य रत्न ४ अङ्गुल लम्बा २ अङ्गुल चौड़ा २ अङ्गुल ऊँचा होता है ।

और ३२ आहुल का मुख होता है । और ६६ आहुल की शिपि (घेराव) है ।

एवं ३३ पदवी का नाम तथा चक्रवर्ती के चौदह रत्नों का विवेचन कहा ।

नारकादिक चार गाँव में से निकले हुये जीव २३ पदवियों में की कौन २ भी पदवी पाये-इस पर पन्द्रह बोल ।

१ पहली नारक से निकले हुये जीव १६ पदवी पाये-मान एंडीन्द्रिय रत्न छोड़ कर ।

२ दूसरी नारक से निकले हुये जीव २३ पदवी में से १५ पदवी पाये-मान एंडीन्द्रिय रत्न और एक चक्रवर्ती एवं आठ नहीं पाये ।

३ तीसरी नारक से निकले हुये जीव २३ पदवी पाये-मान एंडीन्द्रिय रत्न, चक्रवर्ती, आहुल एवं दश पदवी नहीं पाये ।

४ चौथी नारक से निकले हुये जीव २३ पदवी पाये-दश जो द्वाय की ओर एक चक्रवर्ती एवं ११ नहीं पाये ।

५ पाँचवी नारक से निकले हुये जीव २३ पदवी पाये-११ जो द्वाय की ओर एक चक्रवर्ती एवं १२ नहीं पाये ।

६ छठी नारक से निकले हुये जीव २३ पदवी पाये-१२ जो द्वाय की ओर एक चक्रवर्ती एवं ११ नहीं पाये ।

७ सातवी नारक से निकले हुये जीव २३ पदवी पाये-१३ जो द्वाय की ओर एक चक्रवर्ती एवं १० नहीं पाये ।

कोन २ सी पदवी वाले किस किस गति जावे ।

१ पहली दूसरी, तीसरी, चौथी इन चार नरक ११ पदवी वाला जावे ७ पंचेन्द्रिय रत्न, ८ चक्रवर्ती वासुदेव १० समकित दृष्टि ११ मांडलिक राजा एवं १

२ पांचवी छठी नरक में नव पदवी का जावे गज, अश्व और स्त्री छोड़ कर शेष पांच पंचेन्द्रिय रत्न ६ चक्रवर्ती ७ वासु देव ८ सम्यक्त्वी ९ मांडलिक राजा एवं नव पदवी

३ सातवीं नरक में मात पदवी का जावे गज, अश्व और स्त्री छोड़ शेष चार ५ चक्रवर्ती, ६ वासु देव ७ मांडलिक राजा एवं सात ।

४ मयन पति, वायु व्यन्तर, ज्योतिषी और पदेत से भाटवें देवलोक तक दश पदवी का जावे—सात पंचेन्द्रिय रत्न में से स्त्री रत्न छोड़ शेष ६ रत्न ७ साधु ८ भावक ९ सम्यक्त्वी १० मांडलिक राजा एवं दश ।

५ नववें से बारहवें देव लोक तक आठ पदवी का जावे स्त्री, गज, अश्व छोड़ शेष चार पंचेन्द्रिय रत्न ६ साधु ६ भावक ७ सम्यक्त्वी ८ मांडलिक राजा एवं आठ

६ नव ग्रीष्मवेक में मान पदवी का जावे ऊपर के आठ पदवी में से भावक को छोड़ शेष मान पदवी ।

७ पांच अनुनर विमान में दश पदवी का जावे भावक ११ सम्यक्त्वी ।

६ मनुष्यस्त्री में ५ पदवी पावे-१ स्त्री रत्न
आविका २ समकित ४ साध्वी ५ केवली ।

१० तिर्यच में ११ पदवी पावे-सात एकेन्द्रिय रत्न
= गज ६ अथ १० आवक ११ समकित ।

११ तिर्यचस्त्री में २ पदवी पावे-१ समकित २ आवक

१२ संवेदी में २२ पदवी पावे-केवली नहीं ।

१३ स्त्री वेद में चार पदवी पावे-१ स्त्री रत्न
आविका २ समकित ४ साध्वी ।

१४ पुरुष वेद में १४ पदवी पावे-मात एकेन्द्रिय
रत्न केवली और स्त्री रत्न ये नव छोड़ शेष (२३-६
१४ पदवी ।

१५ अवेदी में ४ पदवी पावे-१ तीर्थहर २ केवली
३ साधु ४ समकित ।

१६ नरक गति में एक पदवी पावे-समकित की ।

१७ तिर्यच गति में ११ पदवी पावे-सात एकेन्द्रिय
रत्न = गज ६ अथ १० आवक ११ समकित ।

१८ मनुष्य गति में १४ पदवी पावे-नव उत्तम
पदवी और सात पंचेन्द्रिय रत्न में से गज अथ छोड़ शेष
५ एवं (६+५) १४ पदवों ।

१९ देवगति में एक पदवी पावे-समकित की ।

२० आठ कर्म वेदक में २१ पदवी पावे-तीर्थहर
और केवली ये दो नहीं ।

२१ सात कर्म वेदक में २ पदवी पावे-साधु और
श्रावक ।

२२ चार कर्म वेदक में चार पदवी पावे-१ तीर्थंकर
२ केवली ३ साधु ४ समकित ।

२३ जघन्य अवगाहना में १ पदवी पावे-समकित की ।

२४ मध्यम अवगाहना में १४ पदवी पावे-नव उत्तम
पुरुष, पांच पंचेन्द्रिय रत्न-गज अथ छोड़ कर-एवं ६+४
१४ पदवी पावे ।

२५ उत्कृष्ट अवगाहना में एक पदवी पावे-समकित ।

२६ अट्टाई द्वीप में २३ पदवी पावे ।

२७ अट्टाई द्वीप के बाहर ४ पदवी पावे-१ केवली
२ साधु ३ श्रावक ४ समकित ।

२८ भारत क्षेत्र में मध्यम पदवी = पावे-नव उत्तम
पदवी में से चक्रवर्ती छोड़ शेष = पदवी ।

२९ भारत क्षेत्र में उत्कृष्ट २१ पदवी पावे-वासुदेव,
वलदेव नहीं ।

३० उर्ध्व लोक में ५ पदवी पावे-१ केवली २ साधु
३ श्रावक ४ समकित ५ मांडलिक राजा ।

३१ अधः लोक तथा त्रिर्व्यू (त्रिर्व्यू) लोक में २३
पदवी पावे ।

३२ न्यून लिङ्ग में ४ पदवी पावे-१ तीर्थंकर २
केवली ३ साधु ४ श्रावक ।

६ मनुष्यणी में ५ पदवी पावे-१ स्त्री रत्न २
आविका ३ समकित ४ साध्वी ५ केवली ।

१० तिर्यच में ११ पदवी पावे-सात एकेन्द्रिय रत्न
८ गज ६ अश्व १० आवक ११ समकित ।

११ तिर्यचसो में २ पदवी पावे-१ समकित २ आवक ।

१२ संवेदी में २२ पदवी पावे-केवली नहीं ।

१३ स्त्री वेद में चार पदवी पावे-१ स्त्री रत्न २
आविका ३ समकित ४ साध्वी ।

१४ पुरुष वेद में १४ पदवी पावे-सात एकेन्द्रिय
रत्न केवली और स्त्री रत्न ये नव छोड़ शेष (२३-८)
१४ पदवी ।

१५ अवेदी में ४ पदवी पावे-१ तीर्थंकर २ केवली
३ साधु ४ समकित ।

१६ नरक गति में एक पदवी पावे-समकित की ।

१७ तिर्यच गति में ११ पदवी पावे-सात एकेन्द्रिय
रत्न ८ गज ६ अश्व १० आवक ११ समकित ।

१८ मनुष्य गति में १४ पदवी पावे-नव उत्तम
पदवी और सात पंचेन्द्रिय रत्न में से गज अश्व छोड़ शेष
५ एवं (६+५) १४ पदवी ।

१९ देवगति में एक पदवी पावे-समकित की ।

२० आठ कर्म वेदक में २१ पदवी पावे-तीर्थंकर
और केवली ये दो नहीं ।

२१ सात कर्म वेदक में, १ पदवी पावे-मायु और आवक ।

२२ चार कर्म वेदक में चार पदवी पावे-? तीर्थहर २ केवली २ मायु २ मनश्चिन् ।

२३ अन्न अन्नगाहना में १ पदवी पावे-मनश्चिन् की ।

२४ नयन अन्नगाहना में १४ पदवी पावे-नव उत्तम दृष्ट, पांच पंचेन्द्रिय गल-गत्र अन्न छोड़ का-एवं ६+४ १४ पदवी पावे ।

२५ उत्कृष्ट अन्नगाहना में एक पदवी पावे-मनश्चिन् ।

२६ अट्टारि दीप में २३ पदवी पावे ।

२७ अट्टारि दीप के बाहर ४ पदवी पावे-? केवली २ मायु २ आवक ४ मनश्चिन् ।

२८ नान क्षेत्र में नयन पदवी = १४-नव उत्तम पदवी में से चक्रवर्ती छोड़ गये = पदवी ।

२९ नान क्षेत्र में उत्कृष्ट २१ पदवी पावे-वासुदेव, चतुर्देव नहीं ।

३० उर्ध्व तोंक में ४ पदवी पावे-? केवली २ मायु २ आवक ४ मनश्चिन् ४ नांडितिक गवा ।

३१ अधः तोंक क्या निरंकुश : निरंकुश, तोंक में २३ पदवी पावे ।

३२ नव निरंकुश में ४ पदवी पावे-? तीर्थहर २ केवली २ मायु ४ आवक

६ मनुष्यणी में ५ पदवी पावे-१ स्त्री रत्न २
आविका ३ समकित ४ साध्वी ५ केवली ।

१० तिर्यच में ११ पदवी पावे-सात एकेन्द्रिय रत्न
८ गज ६ अथ १० आवक ११ समकित ।

११ तिर्यचणी में २ पदवी पावे-१ समकित २ आवक ।

१२ संवेदी में २२ पदवी पावे-केवली नहीं ।

१३ स्त्री वेद में चार पदवी पावे-१ स्त्री रत्न २
आविका ३ समकित ४ साध्वी ।

१४ पुरुष वेद में १५ पदवी पावे-सात एकेन्द्रिय
रत्न केवली और स्त्री रत्न से नव छोड़ शेष (२३-६)
१४ पदवी ।

१५ अवेदी में ४ पदवी पावे-१ तीर्थहर २ केवली
३ साधु ४ समकित ।

१६ नरक गति में एक पदवी पावे-समकित ही ।

१७ तिर्यच गति में ११ पदवी पावे-सात एकेन्द्रिय
रत्न ८ गज ६ अथ १० आवक ११ समकित ।

१८ मनुष्य गति में १४ पदवी पावे-नव उत्तम
पदवी और मान एकेन्द्रिय रत्न में से गज अथ छोड़ शेष
५ एवं (६+५) १४ पदवी ।

१९ देवगति में एक पदवी पावे-समकित ही ।

२० आठ कर्म वेदक में २१ पदवी पावे-तीर्थहर
२२ केवली २३ साधु २४ ।

३३ अन्य लिङ्ग में ४ पदवी पावे-१ केवली २ साधु ३ श्रावक ४ समकित ।

३४ गृहस्थ लिङ्ग मनुष्य में १४ पदवी पावे-नव उचम पदवी, और सात पंचेन्द्रिय रत्न में मे गज अश्व को छोड़ शेष पांच एवं (६+५) १४ पदवी ।

३५ संमुखिप में ८ पदवी पावे-सात एकेन्द्रिय रत्न और एक समकित ।

३६ गर्भज में १६ पदवी पावे-२३ में से सात एकेन्द्रिय रत्न छोड़ शेष १६ पदवी ।

३७ अगर्भज में ८ पदवी पावे-५ मुखिप समान ।

३८ एकेन्द्रिय में ७ पदवी पावे-सात एकेन्द्रिय रत्न ।

३९ तीन विकलन्द्रिय में १ पदवी पावे-समकित

४० पंचेन्द्रिय में १५ पदवी पावे-२३ में से सात एकेन्द्रिय रत्न और केवली-ये आठ नहीं ।

४१ अनिन्द्रिय में ४ पदवी पावे १ तीर्थहर २ केवली ३ साधु ४ समकित ।

४२ संयति में ४ पदवी पावे-अनिन्द्रिय समान ।

४३ असंयति में २० पदवी पावे-२३ में से १ केवली २ साधु ३ श्रावक ये तीन छोड़ शेष २० पदवी ।

४४ संयता संयति में १० पदवी पावे-स्त्री को छोड़ शेष ६ पंचेन्द्रिय रत्न ७ रत्नदेव ८ श्रावक ९ समकित मातृनिक ।

४५ समकित दृष्टि में १५ पदवी पावे-२३ में से सात एकेन्द्रिय रत्न और छी छोड़ शेष १५ पदवी ।

४६ मिथ्या दृष्टि में १७ पदवी पावे-सात एकेन्द्रिय रत्न, सात पंचेन्द्रिय रत्न, १४; १५ चक्रवर्ती १६ वासुदेव १७ मांडलिक ।

४७ मति, श्रुत और अवधि ज्ञान में १४ पदवी पावे-केवली छोड़ शेष ८ उत्तम पदवी, छी को छोड़ शेष ६ पंचेन्द्रिय रत्न एवं (८×६) १४ पदवी ।

४८ मनः पर्यव ज्ञान में ३ पदवी पावे १ तीर्थकर २ साधु ३ समकित ।

४९ केवल ज्ञान केवल दर्शन में ४ पदवी पावे १ तीर्थकर २ केवली ३ साधु ४ समकित ।

५० मति श्रुत अज्ञान में १७ पदवी पावे-सात एकेन्द्रिय रत्न, सात पंचेन्द्रिय रत्न, १४; १५ चक्रवर्ती १६ वासुदेव १७ मांडलिक ।

५१ विमङ्गल ज्ञान में ९ पदवी पावे-छी को छोड़ शेष ६ पंचेन्द्रिय रत्न, ७ चक्रवर्ती ८ वासुदेव ९ मांडलिक ।

५२ अचक्षु दर्शन में १५ पदवी पावे-केवली को छोड़ शेष ८ उत्तम पदवी और सात पंचेन्द्रिय रत्न एवं १५ पदवी ।

५३ अचक्षु दर्शन में २२ पदवी पावे-केवली नहीं ।

५४ अवधि दर्शन में १४ पदवी पावे-केवली के

३३ अन्य लिङ्ग में ४ पदवी पावे-१ केवली २ सा
३ भावक ४ समकित ।

३४ गृहस्थ लिङ्ग मनुष्य में १४ पदवी पावे-न
उत्तम पदवी, और सात पंचेन्द्रिय रत्न में से गज अ
को छोड़ शेष पाँच एवं (६+२) १४ पदवी ।

३५ संमूर्द्धिम में ८ पदवी पावे-गात एकेन्द्रिय रत्न
और एक समकित ।

३६ गर्भज में १३ पदवी पावे-२३ में से सा
एकेन्द्रिय रत्न छोड़ शेष १६ पदवी ।

३७ अगर्भज में ८ पदवी पावे-संमूर्द्धिम समान ।

३८ एकेन्द्रिय में ७ पदवी पावे-मात एकेन्द्रिय रत्न ।

३९ तीन त्रिकेन्द्रिय में १ पदवी पावे-समकित

४० पंचेन्द्रिय में १५ पदवी पावे-२३ में से सा
एकेन्द्रिय रत्न और केवली-ये आठ नहीं ।

४१ त्रिनेन्द्रिय में ४ पदवी पावे १ तीर्थार
केवली ३ सा ४ समकित ।

४२ संयति में ४ पदवी पावे-त्रिनेन्द्रिय समान ।

४३ समंयति में २० पदवी पावे-२३ में से
केवली २ सा ३ आरक्य ५ तीन श्रद्धा गुण २० पदवी

४४ मयना मयति में २० पदवी पावे-भी को छोड़

२५ ३ पंचेन्द्रिय रत्न ३ अनदय ८ आरक्य ६ समकित

छोड़ शेष = उच्चम पदवी, और छी को छोड़ शेष ६ पंचे-
न्द्रिय रत्न एवं सर्व १४ पदवी ।

५५ नपुंसक लिङ्ग में ५ पदवी पावे १ केवली २
साधु ३ थावक ४ समकित ५ मांडलिक ।

॥ इति तैत्तिरीय पदवी सम्पूर्ण ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय



ॐ पांच शरीर ॐ

श्री प्रज्ञप्तिजी (पञ्चवर्णा) ग्रन्थ के २१ वें खण्ड में वर्णित पांच शरीर का विवेचन ।

सोलह द्वार

१ नाम द्वार २ अर्थ द्वार ३ संस्थान द्वार ४ समाप्ति द्वार ५ अवगाहना द्वार ६ पुद्गल चयन द्वार ७ संयोजन द्वार ८ द्रव्यार्थ द्वार ९ प्रदेशार्थ द्वार १० द्रव्यार्थ द्वार ११ सूक्ष्म द्वार १२ अवगाहना द्वार १३ प्रयोजन द्वार १४ विषय द्वार १५ विज्ञान द्वार १६ अन्तर द्वार ।

१ नाम द्वार

१ औदारिक शरीर २ वैक्रिय शरीर ३ आहारिक शरीर ४ तेजस् शरीर ५ कार्मण शरीर ।

२ अर्थ द्वार

१ उदार अर्थात् सब शरीरों से अधिक, ईश्वर, गणेश आदि पुरुषों को मुक्ति पद प्रदान करने वाला शरीर, उदार कहेंगे सहस्र योजन मान शरीर कहेंगे १० औदारिक शरीर कहेंगे ६ ।

२ वैक्रिय-जिममे रूप परिवर्तन करने वाला शरीर तथा एक के अनेक छोटे बड़े खंभे, दृढ़, नरम, आदि

आदि विविध रूप विविध क्रिया से बनावे उसे वैक्रिय शरीर कहते हैं इसके दो भेद ।

१ मय प्रत्ययिक—जो देवता व नेत्रियों के स्वभाविक ही होता है ।

२ लब्धि प्रत्यायेक—जो मनुष्य विर्यच को प्रयत्न से प्राप्त होवे ।

३ आहारिक शरीर—जो चौदह पूर्वधारी महात्माओं को तपश्चर्यादिक योग द्वारा जब लब्धि उत्पन्न होवे तो तीर्थंकर देवाभिदेव की श्रद्धा देखने को व मन की शङ्का निवारण करने को, उत्तम पुद्गलों का आहार लेकर, जघन्य पौन हाथ का व उत्कृष्ट एक हाथ का, स्फुटिक समान सफेद व कोई न देख सके ऐसा शरीर बनाते है । जिससे इसे आहारिक शरीर कहते हैं ।

४ तैजस् शरीर—जो तेज के पुद्गलों से अदृश्य व ध्रुव (साये द्वे) आहार को पचावे तथा लब्धिवंत तेजो लेकर छोड़े उसे तैजस् शरीर कहते है ।

५ कार्मण कर्म के पुद्गल से उत्पन्न होने वाला व जिसके उदय से जीव पुद्गल ग्रहण करके कर्मादि रूप में परिणमावे तथा आहार को खेने उसे कार्मण शरीर कहते हैं ।

३ संस्थान द्वार

श्रौदारिक शरीर में संस्थान ६—१ समचतुरम् संस्थान २ न्यग्रोध परिमंडल संस्थान ३ सादिक संस्थान ४ वामन संस्थान ५ कुब्ज संस्थान ६ हुंड संस्थान ।

उत्कृष्ट पृथक् हजार । इससे वैश्विक के द्रव्य असंख्यात गुणा इससे औदारिक के द्रव्य असंख्यात गुणा इससे तैजस् कार्मण के द्रव्य-ये दोनों परस्पर बराबर व औदारिक से अनंत गुणा अधिक ।

६ प्रदेशार्थक द्वार ।

१ सर्व से थोड़ा आहारिक का प्रदेश इससे वैश्विक का प्रदेश असंख्यात गुणा इस से औदारिक का असंख्यात गुणा इस से तैजस् का अनंत गुणा व इस से कार्मण का अनंत गुणा अधिक ।

१० द्रव्यार्थक प्रदेशार्थक द्वार ।

सर्व से थोड़ा आहारिक का द्रव्यार्थ इस से वैश्विक का द्रव्यार्थ असंख्यात गुणा उससे औदारिक का द्रव्यार्थ असंख्यात गुणा इस से आहारिक का प्रदेश असंख्यात गुणा इस से वैश्विक का प्रदेश असंख्यात गुणा इस से औदारिक का प्रदेश असंख्यात गुणा इस से तैजस्, कार्मण इन दोनों का द्रव्यार्थ परस्पर समान व औदारिक से अनन्त गुणा अधिक इस से तैजस् का प्रदेश अनन्त गुणा अधिक इस से कार्मण का प्रदेश अनन्त गुणा अधिक ।

११ सूक्ष्म द्वार ।

१ सर्व से स्थूल (मोटे) औदारिक शरीर के वैश्विक शरीर के पृथक् द्रव्य इस से

४-४ तेजस्, कर्मण शरीर की अवगाहना जघन्य
मंगुल के असंख्यपात्रों भाग उरुठ चौदह राज लोक प्रमाण ।
पुत्रल घयन द्वार ।

(आहार किन्नी दियामों का लेने)

आहारिक, तेजस्, कर्मण शरीर वाला तीन चार
पाँच पात्र ले दियामों का आहार लेने ।

वैक्य और आहारिक शरीर वाला छः दियामों
का लेने ।

७ संपाज २ द्वार ।

१ आहारिक शरीर में आहारिक वैक्य की मज्जा
(होवे और नहीं भी होवे), तेजस् कर्मण की नियमा
(२५२ होवे) ।

२ वैक्य शरीर में आहारिक की मज्जा, आहारिक
नहीं होवे व तेजस् कर्मण की नियमा ।

३ आहारिक शरीर में वैक्य नहीं होवे, आहारिक,
तेजस्, कर्मण द्वार ।

४ तेजस् शरीर में आहारिक, वैक्य आहारिक
की मज्जा तेजस् की नियमा ।

५ कर्मण शरीर में आहारिक, वैक्य आहारिक
की मज्जा तेजस् की नियमा ।

४-५ तेजस्, कार्मण शरीर की मरणादना जघन्य
मंगुल के मत्संस्थानों भाग उरुः चौदह राज लोक प्रमाय ।
पुनः लभ्यते द्वार ।

(आहार किनी दिसाओं का लेने)

आहारिक, तेजस्, कार्मण शरीर वाला तीन चार
पाँच बार ये दिसाओं का आहार लेने ।

वैक्य और आहारिक शरीर वाला छः दिसाओं
का लेने ।

७ संभोजन द्वार ।

१ आहारिक शरीर में आहारिक वैक्य की मजना
(होरे और नहीं भी होरे), तत्रु कार्मण की नियमा
(नष्ट होरे) ।

२ वैक्य शरीर में आहारिक की मजना, आहारिक
नहीं होरे व तेजस् कार्मण की नियमा ।

३ आहारिक शरीर में वैक्य नहीं होरे, आहारिक,
तेजस्, कार्मण सब ।

४ तेजस् शरीर में आहारिक, वैक्य आहारिक
की नष्ट होरे के नियमा ।

५ कार्मण शरीर में आहारिक, वैक्य आहारिक
की नष्ट होरे के नियमा ।

आहारिक शरीर के पृथक् उत्पन्न इस से तैजस् शरीर के पृथक् उत्पन्न व इस से कार्मण शरीर के पृथक् उत्पन्न ।

१२ अवगाहना का अल्प बहुत्व द्वार ।

सब से जघन्य औदारिक शरीर की जघन्य अवगाहना इस से तैजस् कार्मण की जघन्य अवगाहना परस्पर परापर व औदारिक में विशेष वैक्रिय की जघन्य अवगाहना असंख्यता गुणी इस से आहारिक की जघन्य अवगाहना असंख्यता गुणी इस से आहारिक की उत्कृष्ट अवगाहना विशेष इससे औदारिक की उत्कृष्ट अवगाहना उपात गुणी इस से वैक्रिय की उत्कृष्ट अवगाहना उपात गुणी इस से तैजस् कार्मण उत्कृष्ट अवगाहना परस्पर परापर व वैक्रिय से असंख्यता गुणी अधिक ।

१३ प्रयोजन द्वार ।

१ औदारिक शरीर का प्रयोजन मोक्ष प्राप्ति में हाथी भूत होना २ वैक्रिय शरीर का प्रयोजन विविध प पाना ३ आहारिक शरीर का प्रयोजन मेशय निराकरण करना ४ तैजस् शरीर का प्रयोजन पृथक् का पाचन करना ५ कार्मण शरीर का प्रयोजन आहार तथा कर्मों का आकर्षण (लेचना) करना ।

१४ विषय (यक्ति) द्वार ।

औदारिक शरीर का विषय पन्द्रहवा रुचक नामक



लोक में सदा पावे-आहारिक शरीर की मजना (होवे और नहीं भी होवे) नहीं होवे तो उत्कृष्ट ६ माह का अन्तर पड़े ।

॥ इति पांच शरीर सम्पूर्ण ॥



कर्कश भारी, लघु (हलका) मृदु स्पर्श का एक साथ अल्प बहुत्व-सर्व से कम चक्षु इन्द्रिय का कर्कश भारी स्पर्श इससे श्रोत्रेन्द्रिय का कर्कश भारी स्पर्श अनन्त गुणा इससे घ्राणेन्द्रिय का अनन्त गुणा इससे रसेन्द्रिय का अनन्त गुणा इससे स्पर्शेन्द्रिय का अनन्त गुणा इससे स्पर्शेन्द्रिय का हलका मृदु स्पर्श अनन्त गुणा इससे रसेन्द्रिय का हलका मृदु स्पर्श अनन्त गुणा इससे घ्राणेन्द्रिय का हलका मृदु स्पर्श अनन्त गुणा इससे श्रोत्रेन्द्रिय का हलका मृदु स्पर्श अनन्त गुणा व इससे चक्षु इन्द्रिय का हलका मृदु स्पर्श अनन्त गुणा ।

■ शृष्ट दार

जो पुद्गल इन्द्रियों को आकर स्पर्श करते हैं उन पुद्गलों को इन्द्रियें ग्रहण करती हैं पांच इन्द्रियों में से चक्षु इन्द्रिय को छोड़ शेष चार इन्द्रियों को पुद्गल आकर स्पर्श करते हैं । चक्षु इन्द्रिय को आकर नहीं स्पर्श करते हैं ।

■ प्रविष्ट दार

जिन इन्द्रियों के अन्दर आभेसुप्त (सामां) पुद्गल प्रवेश करते हैं उन्हें प्रविष्ट कहते हैं । पांच इन्द्रियों में से चक्षु इन्द्रिय को छोड़ शेष चार इन्द्रिय प्रविष्ट हैं व चक्षु इन्द्रिय अप्रविष्ट है ।

६ विषय दार (गन्धिन दार)

प्रत्येक ज्ञानि की प्रत्येक इन्द्रिय का विषय ज्ञान्य

इस से श्रोत्रेन्द्रिय का जघन्य उपयोग काल विशेष इस में
 घ्राणेन्द्रिय का जघन्य उपयोग काल विशेष इसमें रसेन्द्रिय
 का जघन्य उपयोग काल विशेष इस से स्पर्शेन्द्रिय का
 जघन्य उपयोग काल विशेष इस से चक्षुर्इन्द्रिय का उत्कृष्ट
 उपयोग काल विशेष इस से श्रोत्रेन्द्रिय का उत्कृष्ट उपयोग
 काल विशेष इस से घ्राणेन्द्रिय का उत्कृष्ट उपयोग काल
 विशेष इस से रसेन्द्रिय का उत्कृष्ट उपयोग काल विशेष
 इस से स्पर्शेन्द्रिय का उत्कृष्ट उपयोग काल विशेष ।

११ वां आहार द्वार सूत्र भी प्रज्ञापना में से जानना ।

❀ इति पांच इन्द्रिय सम्पूर्ण ❀



अर्थः—१ घनदात २ तनुवात ३ पनोदधि, पृथ्वी
-१०, ११ असंख्यात द्वीप १२ असंख्यात समुद्र,
३ देव लोक २४, नव ग्रीष्मवेक ३३, पांच अनुत्तर
३८, भिद्धि शिला -३९ । २।

गाथाः—

उगलिया चउदेहा, पोमल काय छ दन्व लेह्या य;
नेहव काय जोगेणं ए सवेणं चडु कासा ॥३॥
अर्थः—४० आदारिक शरीर ४१ वैक्रिय शरीर ४२
आरिक शरीर ४३ तैत्रय शरीर एवं चार देह-४४ पुद्ग-
ल काय का पादर सन्ध, ६ द्रव्य लेरपा (१ कृष्ण,
२ लाल ३ कापोत ४ तेजो ५ पद्म ६ शुक्ल) ५०, ४१
योग एवं मर्म ४२ बोल रूपी आठ स्पर्श दे । इनमें
४ बीज बोल पावे । पांच वर्ण—१ शब्द—७, पांच रस-
८, आठ स्पर्श—१२ कील १४ उष्ण १ लूना (रुच)
१५ शिन्ध १६ मुक (वासी) १८ लघु (इलका) १९
२० मुर्धांत (मृदु-कोमल) । ३।

गाथा—

पाव टाणा निह, चउ चउ मुदि उमदे;
सत्रा बम्बजी पव उयणं, भाव जेम्मानि दिह्ये ॥४॥
अर्थ—घटारह पाव स्वानर की निर्गत (पाव स्था-
न निर्गत होना) १८, चार बुद्धि—१९ औन्मानिहा
काबीया २१ शिन्ध २२ पारयाभीया चार सनि-

चारित्र्य ६ यथारूपात् चारित्र्य ७ संयता संयति ८ असंयति
९ नो संयति-नो असंयति नो संयता संयति ।

१३ उपयोग द्वार के दो बोल

१ साकार उपयोग (साकार ज्ञानोपयोग) २ अना-
कार उपयोग (अनाकार दर्शनोपयोग) ।

१४ आहार द्वार के दो बोल

१ आहारिक २ अनाहारिक ।

१५ भाषक द्वार के दो बोल

१ भाषक २ अभाषक ।

१६ परित द्वार के तीन बोल

१ परित २ अपरित ३ नोपरित नोअपरित ।

१७ पर्याप्त द्वार के तीन बोल

१ पर्याप्त २ अपर्याप्त ३ नो पर्याप्त नो अपर्याप्त ।

१८ सूक्ष्म द्वार के तीन बोल

१ सूक्ष्म २ बादर ३ नोसूक्ष्म नो बादर ।

१९ संज्ञी द्वार के तीन बोल

१ संज्ञी २ असंज्ञी ३ नो संज्ञी नो असंज्ञी ।

२० अव्य द्वार के तीन बोल

१ अव्य २ अव्य ३ नो अव्य नो अव्य ।

२१ चरित्र द्वार के दो बोल

१ चरित्र २ अचरित्र ।

और १ असंज्ञी पंचेन्द्रिय का अपर्याप्त एवं ३, गुण स्थानक १४, योग १५, उपयोग १२, लेख्य ६ ।

५ मनुष्यनी में-जीव के भेद २-संज्ञी का । गुण-स्थानक १४, योग १३ आहारिक के दो छोड़ कर, उप-योग १२, लेख्य ६ ।

६ देव गति में-जीव के भेद ३-दो संज्ञी के और १ असंज्ञी पंचेन्द्रिय का अपर्याप्त एवं ३ गुणस्थानक ४ प्रथम, योग ११-४ मनके, ४ वचन के, २ वैक्रिय के और १ कार्मण्य काय एवं ११, उपयोग ८-३ ज्ञान, ३ अज्ञान, ३ दर्शन एवं ६, लेख्य ६ ।

७ देवाङ्गना में-जीव के भेद २-संज्ञी का, गुण-स्थानक ४ प्रथम, योग ११-४ मन का, ४ वचन का, २ वैक्रिय का १ कार्मण्य काय, उपयोग ६-३ अज्ञान, ३ ज्ञान, ३ दर्शन एवं ६, लेख्य ४ प्रथम ।

सिद्ध गति में-जीव का भेद नहीं, गुण स्थानक नहीं योग नहीं, उपयोग २-केवल ज्ञान और केवल दर्शन, लेख्य नहीं ।

नरक गति प्रमुख आठ धोल में रहे हुये जीवों का अल्प बहुत्व ।

सर्व से कम मनुष्यनी उससे मनुष्य अपरुप्यत गुणा (संसृद्धि के मिलने से) उसमें नेरिये अमरुप्यत गणा उसमें निर्वचनी अमरुप्यत गुणी उसमें देव अम-

४ काय योग में:-जीव के भेद १४ गुणस्थानक ११ योग १५ उपयोग १२ लेश्या ६ ।

५ अयोग में:-जीव का भेद १ मञ्जी का पञ्चाशत् गुण स्थानक १-चौदहवां योग नहीं, उपयोग २-केवल के लेश्या नहीं ।

सयोग प्रमुख पांच चोल में रहें हुये जीवों का अल्प पटुत्व ।

१ सर्व में कम मन योगी २ इस में वचन योगी असख्यात गुणे ३ इस में अयोगी अनन्त गुणे ४ इस से काय योगी अनन्त गुणे ५ इस से सयोगी विशेषाधिक ।

६ श्रेष्ठ द्वार

१ सवेद में-जीव के भेद १४, गुण स्थानक ६ प्रथम योग १५, उपयोग १०-केवल के दो छोड़ कर लेश्या ६

२ स्त्री वेद में-जीव के भेद २- सञ्जी का गुण स्थानक ६ प्रथम, योग १३ आहारिक के दो छोड़ कर उपयोग १० केवल के दो छोड़ कर लेश्या ६ ।

३ पुरुष वेद में:-जीव के भेद २ सञ्जी के गुण स्थानक ६ प्रथम योग १५, उपयोग १० केवल के दो छोड़ कर लेश्या ६ ।

४ नपुंसक वेद में:-जीव के भेद १४, गुण स्थानक ६ प्रथम, योग १५, उपयोग १०-केवल के दो छोड़ कर

सकृपाय प्रमुख ६ बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व ? सर्व से कम अकृपायी २ इससे मान कृपायी अनंत गुणा ३ इससे क्रोध कृपायी विशेषाधिक ५ लोभ कृपायी विशेषाधिक ६ मरुपायी विशेषाधिक ।

अलेख्या द्वार

१ सलेख्या में—जीव के भेद १४, गुण स्थानक १३ प्रथम योग १४, उपयोग १२, लेख्या ६ ।

२-३-४ कृष्ण, नील, कापोत लेख्या में जीव के भेद १४ गुण स्थानक ६ प्रथम योग १५ उपयोग १० केवल के दो छोड़कर लेख्या १ अपनी २ ।

५ तेजो लेख्या में—जीव का भेद ३-दो संज्ञी के और एक सादर एकेन्द्रिय का अवर्थात्; गुण स्थानक ७ प्रथम योग १५, उपयोग १०, लेख्या १ अपने लुप्त की ।

६ पद्म लेख्या में—जीव का भेद २ संज्ञी का, गुण स्थानक ७-प्रथम, योग १५ उपयोग १० लेख्या १ अपनी

७ शुक्ल लेख्या में—जीव के भेद २ संज्ञी के, गुण स्थानक १३ प्रथम, योग १५ उपयोग १२, लेख्या १ अपनी ।

८ अलेख्या में जीव का भेद नहीं, गुण स्थानक १ चौदहवां, योग नहीं, उपयोग २ केवल के लेख्या नहीं

सलेख्या प्रमुख आठ बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व ।

२-३ माति ज्ञान श्रुत ज्ञान में जीव का भेद ६ मध्यम् दृष्टि वत्, गुण स्थानक १० पहेला, तीसरा, तेरहवां, चौदहवां छोड़ कर, योग १५, उपयोग ७, ४ ज्ञान और ३ दर्शन, लेश्या ६ ।

४ अचधि ज्ञान में जीव का भेद २ संज्ञो का, गुण स्थानक १० माति ज्ञान वत्, योग १५, उपयोग ७, लेश्या ६ ।

५ समः पथव ज्ञान में जीव का भेद १ संज्ञो का पर्याप्त गुण स्थानक ७ छह में पारद्वे तक, योग १४, कर्मण का छोड़कर, उपयोग ७, लेश्या ६ ।

६ केवल ज्ञान में जीव का भेद १ संज्ञो पर्याप्त गुण स्थानक २-तेरहवां चौदहवां, योग ७-सत्य मन, सत्य वचन व्यवहार मन, व्यवहार वचन, दो औदारिक का, एक कर्मण एवं ७; उपयोग दो-केवल के लेश्या १ शुरुत ।

७-८-९ समुच्चय अज्ञान, माति अज्ञान, श्रुत अज्ञान-इन तीन में जीव का भेद १४, गुण स्थानक २-पहेला और तीसरा, योग १३-माहारिक के दो छोड़कर, उपयोग ६-तीन अज्ञान और ३ दर्शन, लेश्या ६ ।

१० विभंग अज्ञान में-जीव का भेद २-संज्ञो का-गुण स्थानक २-पहेला और तीसरा, योग १३, उपयोग ६, लेश्या ६ ।

समुच्चय ज्ञान प्रमुख दश बोल में रहे हुये जीवों का

पञ्च दर्शनी असंख्यात गुणा २ इसमें केवल दर्शनी अनन्त गुणा ४ इसमें अचक्षु दर्शनी अनन्त गुणा ।

१२ संयत द्वार

१ संयत (समुच्चय संयम) में जीव का भेद १ संज्ञी का पर्याप्त, गुण स्थानक ६-छठे में चौदहवें तक योग १५ उपयोग ६-तीन अज्ञान के छोड़कर; लेखा ६ ।

२-३ सामायिक व छेदापस्थानिक में-जीव का भेद १ संज्ञी का पर्याप्त, गुण स्थानक ४-छठे से नववें तक, योग १४ कर्मण का छोड़कर, उपयोग ७ । चार ज्ञान प्रथम व तीन दर्शन, लेखा ६ ।

४ परिहार विमुक्त में-जीव का भेद १ संज्ञी का पर्याप्त, गुण स्थानक २-छठे व सातवें, योग ६-४ मन के ४ वचन के १ भौदानिक का, उपयोग ७-४ ज्ञान का २ दर्शन का, लेखा ३ (ऊपर की) ।

५ सूक्ष्म सम्पराय में-जीव का भेद १ संज्ञी का पर्याप्त, गुण स्थानक १-दशवाँ, योग ६, उपयोग ७ लेखा १-शुद्ध ।

६ यथाख्यात में-जीव का भेद १ संज्ञी का पर्याप्त गुण स्थानक ४-ऊपर के, योग ११-४ मन के ४ वचन के २ भौदानिक के व १ कर्मण का, उपयोग ६-तीन अज्ञान के छोड़कर, लेखा १ शुद्ध ।

७ संयता संयत में-जीव का भेद १ संज्ञी का

स्थानक १३-दशवाँ छोड़ कर, योग १५, उपयोग १६, लेखा ६ ।

साकार प्रमुख दो बोल में रहे हूँ जीवों का अवयव मुख्य
१ सर्व से कम अनाकार उपयोगी २ इससे साकार
उपयोगी संख्यात गुणा ।

१४ आहार द्वार

आहारिक में-जीव का भेद १४, गुण स्थानक १३
प्रथम, योग १४ कार्मण्य का छोड़ कर, उपयोग १२
लेखा ६ ।

अनाहारिक में-जीव का भेद ८-सात अवस्था और
मंत्रों का पर्याप्त, गुण स्थानक ४-१, २, ४, १३, १४,
योग १ कार्मण्य का, उपयोग १०-मनः पर्यंत ज्ञान व
चक्षु दर्शन छोड़ कर, लेखा ६ ।

आहारिक प्रमुख दो बोल में रहे हूँ जीवों का
अवयव मुख्य ।

१ सर्व से कम अनाहारिक इससे २ आहारिक सं-
ख्यात गुणा ।

१५ भावक द्वार

भावक में-जीव का भेद १, ब्रह्मन्दित्र, त्रिन्दित्र
चौरिन्दित्र, अमन्त्रों वचन द्वार, मन्त्रों वचन द्वार एवं ४ भा
वचन, गुण स्थानक १३ प्रथम का योग १४ कार्मण्य का
छोड़ कर उपयोग १०, लेखा ६ ।

२ अपर्याप्त में-जीव का भेद ७, गुण स्थानक ३-१, २, ४, योग ५-२ औदारिक का, २ वैक्रिय का, १ कर्मण का, उपयोग ६-३ ज्ञान ३ अज्ञान ३ दर्शन लेख्या ६-१ ।

३ नो पर्याप्त नो अपर्याप्त में-जीव का भेद नहीं, गुणस्थानक नहीं, योग नहीं, उपयोग २ केवल का, लेख्या नहीं पर्याप्त प्रमुख तीन बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व १ सर्व से कम नो पर्याप्त नो अपर्याप्त २ इसमें अपर्याप्त अनन्त गुणा ३ इसमें पर्याप्त-संख्यात गुणा ।

१८ सूक्ष्म द्वार

१ सूक्ष्म में-जीव का भेद २ सूक्ष्म एकेन्द्रिय का अपर्याप्त व पर्याप्त, गुण स्थानक १ पहेला, योग ३-२ औदारिक तथा १ कर्मण उपयोग ३-२ अज्ञान व १ अचक्षु दर्शन, लेख्या ३ पहेली ।

२ पादर में-जीवका भेद १२-सूक्ष्म का २ छोड़ का, गुणस्थानक १४, योग १५, उपयोग १२, लेख्या ६ ।

३ नो सूक्ष्म नो पादर में-जीव का भेद नहीं गुणस्थानक नहीं, उपयोग २ केवल का, लेख्या नहीं । सूक्ष्म प्रमुख तीन बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व १ सर्व से कम नो सूक्ष्म नो पादर २ इसमें पादर अनन्त गुणा ३ इसमें सूक्ष्म अनेक्यात गुणा ।

१९ संज्ञी द्वार

१ संज्ञी में-जीव का भेद २, गुणस्थानक १२ पहेला

योग १५, उपयोग १०—केवल का दो छोड़ कर, लेखा ६ ।

२ असंज्ञी में-जीव का भेद १२-संज्ञी का दो छोड़ कर, गुणस्थानक २ पहला, योग ६-२ औदारिक का, २ वैक्रिय का, १ कार्भण का १ व्यवहार वचन, उपयोग ६-२ ज्ञान का २ अज्ञान का २ दर्शन का, लेखा ४ प्रथम की ।

नो संज्ञी नो असंज्ञी में-जीव का भेद १ संज्ञी का पर्याप्त, गुणस्थानक २, १२ वां, १४ वां, योग ७ केवल ज्ञान वत्, उपयोग २ केवल का, लेखा १ शुक्ल ।

संज्ञी प्रमुख तीन बोल में रहे हों जीवों का अल्प बहुत्व १ सब से कम संज्ञी २ इससे नो संज्ञी नो असंज्ञी अनन्त गुणा । ३ इससे असंज्ञी अनन्त गुणा ।

२० भव्य द्वार ।

१ भव्य में जीव का भेद १४ गुण स्थानक १४, योग १५, उपयोग १२, लेखा ६ ।

२ अभव्य में जीव का भेद १४. गुण स्थानक १ पहला योग १३ आहारिक के दो छोड़ कर. उपयोग ६ ३ अज्ञान ३ दर्शन. लेखा ६

३ नो भव्य नो अभव्य में जीव का भेद नह . गुण स्थानक नह . योग नह . उपयोग २ लेखा नह

भव्य प्रमुख तीन बोल में रहे हों जीवों का अल्प बहुत्व

१ सर्व से कम अभव्य २ इस से नो भव्य नो अभव्य
अनन्त गुणा ३ इस से भव्य अनन्त गुणा ।

२१ चरम द्वार ।

१ चरम में जीव का भेद १४, गुण स्थानक १४
योग १४, उपयोग १२, लेख्य ६ ।

२ अचरम में जीव का भेद १४, गुण स्थानक १
पहेला, योग-१३ आहारिक का दो छोड़ कर, उपयोग १
३ अज्ञान ३ दर्शन, लेख्य ६ ।

चरम प्रमुख दो बोल में रहे हुवे जीवों का अरूप
प्रकृत्य ।

१ सर्व से कम अचरम २ इस से चरम अनन्त गुणा ।
एवं दो गाथा के २१ बोल द्वार पर ६२ बोल
कहे, तदुपरान्त अन्य बीतराग प्रमुख पांच बोल
बौद्ध गुण स्थानक व पांच शरीर पर ६२ बोल—

१ बीतराग में जीव का भेद २ संज्ञो का पर्याप्त,
गुण स्थानक ४ ऊपर का, योग ११-२ आहारिक तथा २
बैक्रिय का छोड़कर, उपयोग ६-४ ज्ञान ४ दर्शन, लेख्य
१ शुद्ध ।

२ समुच्चय केवली में जीव का भेद २ संज्ञो का,
गुण स्थानक ११ ऊपर का, योग १४, उपयोग ६,४ ज्ञान
४ दर्शन, लेख्य ६ ।

३ युगल (युगलियों) में जीव का भेद २ संज्ञो

२ सास्वादान सम्यक् दृष्टि में-जीव का भेद ६ सम्यक् दृष्टि वत्. गुण स्थानक १ दूसरा, योग १३ आहारिक का दो छोड़कर, उपयोग ६-३ ज्ञान ३ दर्शन लेख्या ६ ।

३ मिथ दृष्टि में-जीव का भेद १ संज्ञी का पर्याप्त, गुण स्थानक १ तीसरा, योग १०-४ मन के, ४ वचन के १ आहारिक का १ वैक्रिय का, उपयोग ६-३ अज्ञान ३ दर्शन, लेख्या ६ ।

४ अवती सम्यक् दृष्टि में-जीव का भेद २ संज्ञी का गुण स्थानक १ चोथा, योग १३ सास्वादन सम्यक् दृष्टि वत् उपयोग ६-३ ज्ञान ३ दर्शन, लेख्या ६ ।

५ देश वती (संयता संयति) में-जीव का भेद १ १४ वाँ, गुण स्थानक १ पाँचवाँ, योग १२-२ आहारिक का व १ कर्मण का छोड़कर उपयोग ६-३ ज्ञान ३ दर्शन लेख्या ६ ।

६ प्रमत्त संयति में-जीव का भेद १ गुण स्थानक १ छठा योग १४ कर्मण का छोड़कर, उपयोग ७-४ ज्ञान ३ दर्शन, लेख्या ६ ।

७ अप्रमत्त संयति में-जीव का भेद १ गुणस्थानक २ योग ११-४ मन के ४ वचन के १ आहारिक १ वैक्रिय १ आहारिक, उपयोग ७-४ ज्ञान ३ दर्शन, लेख्या ३ ऊपर की ।

शरीर द्वार

१ आहारिक में-जीव का भेद १४, गुणस्थानक १४, योग १४, उपयोग १२, लेखा ६ ।

वैक्रिय में-जीव का भेद ४-दो संज्ञी का, एक असेतो पंचेन्द्रिय का अर्थात्तु व बादर एकेन्द्रिय का का अर्थात्तु गुणस्थानक ७ प्रथमः योग १२-दो आहारिक का, १ कर्मण्य छोड़ कर; उपयोग १०-केवल के दो छोड़ कर; लेखा ६ ।

आहारिक में-जीव का भेद १ संज्ञी का अर्थात्तु । गुणस्थानक २-६ व ७ योग १२-दो वैक्रिय व १ कर्मण्य छोड़ कर, उपयोग ७-४ ज्ञान व दर्शन, लेखा ६ ।

७ तन्त्रम् कान्तम् में-जीव का भेद १४, गुणस्थानक १४, योग १४, उपयोग १२, लेखा ६ ।

आहारिक प्रमुख तीन शरीर में रहे हों जीवों का अन्तः प्रमुख १ मर्ह मे कम आहारिक शरीर २ अपने वैक्रिय शरीर अनेकगुण गुणा ३ अपने आहारिक शरीर अनेकगुण गुणा ४ अपने नेत्र व कर्मण्य शरीर परस्पर गुण व अन्तः गुण ।

॥ इति वृद्धा पादश्रीया गुरुणा ॥

लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि ३, मन्त्र्य अमन्त्र्य २, दण्डक १३ देवता का, पञ्च २ ।

७ देवाङ्गना में-भाव ५, आत्मा ७, लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि ३, मन्त्र्य अमन्त्र्य २ दण्डक १३ देवता के, पञ्च २ ।

सिद्ध गति में भाव २ चावक, परिणामिक आत्मा ४, द्रव्य, ज्ञान, दर्शन व उपयोग, लब्धि नहीं वीर्य नहीं, वीर्य नहीं, दृष्टि १ समकित दृष्टि, मन्त्र्य अमन्त्र्य नहीं दण्डक नहीं, पञ्च नहीं ।

३ इन्द्रिय द्वार के ७ भेद

१ सङ्गिन्द्रिय में-भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५ वीर्य ३, दृष्टि ३, मन्त्र्य अमन्त्र्य २, दण्डक २४ पञ्च २ ।

२ एकेन्द्रिय में-भाव ३-उदय, चयोपशम परिणामिक; आत्मा ६ (ज्ञान चारित्र्य छोड़कर) लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि १ मिथ्यात्व दृष्टि, मन्त्र्य अमन्त्र्य २, दण्डक ५, पञ्च २

३ वेङ्गिन्द्रिय में-भाव ३ द्वार अनुसार आत्मा ७ (चारित्र्य छोड़कर) लब्धि ५, वीर्य १ द्वार प्रमाण, दृष्टि २-समकित दृष्टि व मिथ्यात्व दृष्टि, मन्त्र्य अमन्त्र्य २, दण्डक १ अचना २ पञ्च २

४ त्रिन्द्रिय में-भाव ३, आत्मा ७, लब्धि ५,

वीर्य १, दृष्टि २, भव्य अभव्य २, दण्डक १ त्रिन्द्रिय का, पञ्च २

५ चौरिन्द्रिय में-भाव ३, आत्मा ७, लब्धि ५ वीर्य १, दृष्टि २, भव्य अभव्य २, दण्डक १ चौरिन्द्रिय का, पञ्च २

६ पंचेन्द्रिय में-भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक १६-१३ देवता का, १ नारकी का, १ मनुष्य का एक तिर्य्य का एवं १६ पञ्च २ ।

७ अत्रिन्द्रिय में-भाव ३ उदय, च.यक, परिणामिक आत्मा ७ (कषाय छोड़कर), लब्धि ५, वीर्य पण्डित वीर्य, दृष्टि १ सम्यक् दृष्टि, भव्य १, दण्डक १ मनुष्य का, पञ्च १ शुक्र ।

४ सक्ताय के ८ भेद

१ सक्ताय में-भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३ दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४, पञ्च २ ।

२ पृथ्वा काय ३ अपकाय ४ तेजस् काय

५ वायु काय तथा वनस्पति काय में-भाव ३-क्षयोपशम, परिणामिक; आत्मा ८ (ज्ञान चाग्रि छोड़कर), लब्धि ५, वीर्य १, दृष्टि १, भव्य अभव्य २, दण्डक २ अपना २, पञ्च २ ।

७ अस काय में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक १६ (पांच एकेन्द्रिय का छोड़कर), पच २ ।

८ अकाय में भाव २, आत्मा ४, लब्धि नहीं वीर्य नहीं, दृष्टि १, नो मयी, नो अभयी, दंडक नहीं पच नहीं ।

५ सयोगी द्वार के ५ भेद ।

१ सयोगी में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४, पच २ ।

२ मन योगी में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक १६ (पांच स्थावर, ३ विकलेन्द्रिय छोड़कर), पच २ ।

३ वचन योगी में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक १६ (पांच स्थावर छोड़कर), पच २ ।

४ काय योगी में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४, पच २ ।

५ अयोगी में भाव ३ उदय, चायक, परिमाथिक, आत्मा ६ (कषाय, योग छोड़कर), लब्धि ५, वीर्य १ पंडित वीर्य, दृष्टि १ समकित दृष्टि, भव्य १ दण्डक १ मनुष्य का, पच १ शुरु ।

६ सवेद के ५ भेद ।

१ सवेद में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३,

दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दंडक २४, पच २ ।

२ स्त्री वेद में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दंडक १५ पच २ ।

३ पुरुष वेद भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दंडक १५ पच २ ।

४ नपुंसक वेद में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दंडक ११ (देवता का १३ छोड़कर), पच २ ।

५ अवेद में-भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य १ दृष्टि १, भव्य १, दण्डक १ ननुष्य का, पच १ शुक्ल ।

७ कषाय के ६ भेद

१ लकषाय में-भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २ दण्डक २४, पच २

२ क्रोध कषाय में-भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४, पच २ ।

३ मान कषाय में-भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४, पच २ ।

४ माया कषाय में-भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४ पच २ ।

५ लोभ कषाय में-भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४ पच २ ।

६ अकषाय में-भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४ पच २ ।

१, दृष्टि १ समकित, मध्य १, दण्डक १ मनुष्य का, पक्ष १ शुक्ल ।

= सलोशी के = भेद

१ सलोशी में-भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, मध्य अमध्य २, दण्डक २४ पक्ष २ ।

२ कृष्ण लेख्या में-भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, मध्य अमध्य २, दण्डक २२ (ज्योतिषी वैमानिक छोड़ कर) पक्ष २ ।

३ नील लेख्या में-भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, मध्य अमध्य २ दण्डक २२ ऊपर प्रमाण पक्ष २ ।

कपोत लेख्या में-भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, मध्य अमध्य २, दण्डक २२ ऊपर प्रमाण, पक्ष २ ।

तेजो लेख्या में-भाव ५, आत्मा ८ लब्धि ५, वीर्य ३ दृष्टि ३, मध्य अमध्य २, पक्ष २, दण्डक १८ (१३ देवता का १ मनुष्य का, १ विर्यन पर्वान्द्रय का, ५४वीं, भूत; वनशास्त्र एवं १८)

४ पद्म लेख्या में-भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, मध्य अमध्य २, दण्डक ३, वैमानिक, मनुष्य व निर्मल पक्ष - का, पक्ष २ ।

५ गुरु लेख्या में-भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५,

वीर्य ३, दृष्टि ३, नव्य अमव्य २, दंडक ३ ऊपर प्रमाणे,
पञ्च २, ।

८ अलेखी में नाव ३, आत्मा ६, तन्त्रि ५, वीर्य
१, पंडित वीर्य, दृष्टि १, समकित, नव्य १ दंडक १,
ननुप्य का, पञ्च १ शुक्र ।

९ समकित के ७ नेद ।

१ समकित में नाव ५, आत्मा ८, तन्त्रि ५, वीर्य
३, दृष्टि १ समकित, नव्य १, दंडक १८ (पांच एकेन्द्रिय
का दंडक छोड़कर) पञ्च १ शुक्र ।

२ सारवादान समकित में नाव ३, (नदय,
चयोपरान, पण्डितानि १, आत्मा ७, तन्त्रि ५, वीर्य १
पांच वीर्य दृष्टि १ समकित, नव्य १, दंडक १८ (पांच
स्थान छोड़कर), पञ्च १ शुक्र ।

३ उपरान समकित में नाव ४ (चायक छोड़कर),
आत्मा ८, तन्त्रि ५, वीर्य ३, दृष्टि १, नव्य १, दंडक
१८ (पांच स्थान, तीन विद्वेन्द्रिय छोड़कर), पञ्च १
शुक्र ।

४ वेदक समकित में नाव ३, आत्मा ८, तन्त्रि ५,
वीर्य ३, दृष्टि १, समकित, नव्य १, दंडक १८ ऊपर
प्रमाणे, पञ्च १ शुक्र ।

५ चायक समकित में नाव ४ (उपरान छोड़कर)
आत्मा ८, तन्त्रि ५, वीर्य ३, दृष्टि १, नव्य १, दंडक
१८ पञ्च १ शुक्र ।

६ मिथ्यात्व दृष्टि में भाव ३, आत्मा ६, लब्धि ५, वीर्य १, दृष्टि १, मन्व्य अमन्व्य २, दंडक २४, पक्ष २।

७ मिश्र दृष्टि में भाव ३, आत्मा ६, लब्धि ५, वीर्य १, बाल वीर्य, दृष्टि १, मन्व्य १, दंडक १६, पक्ष १ शुक्ल ।

१० समुच्चय ज्ञान द्वार के १० भेद ।

१ समुच्चय ज्ञान में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि १, मन्व्य १, दंडक १६, पक्ष १ शुक्ल ।

२ मति ज्ञान ३ श्रुत ज्ञान में-भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि १ मन्व्य १ दण्डक १६, पक्ष १ शुक्ल ।

४ अवाधि ज्ञान में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि १ मन्व्य १, दण्डक १६, पक्ष २ शुक्ल ।

५ मनः पर्यव ज्ञान में-भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि १, मन्व्य १, दण्डक १, मनुष्य का, पक्ष १ शुक्ल ।

६ केवल ज्ञान में भाव ३, (उदय धायक, परिणामिक) आत्मा ७ (कृपाय छोड़ कर) लब्धि ५, वीर्य १, दृष्टि १; मन्व्य १, दण्डक १, पक्ष १; ।

७ समुच्चय अज्ञान ८ मति अज्ञान ६ श्रुत अज्ञान में-भाव तीन; आत्मा ६, लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि १, मिथ्यात्व दृष्टि, मन्व्य अमन्व्य २, दण्डक २४ पक्ष २ ।

१ समकृत, मध्य १, दण्डक १, पञ्च १ शुक्ल ।

२ परिहार विगुह चारित्र्य में-भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य १ पण्डित, दृष्टि १ समकृत, मध्य १, दण्डक १ पञ्च १ शुक्ल ।

५ सूक्ष्मसंपराय चारित्र्य में-ऊपर प्रमाणे ।

६ यथा स्वप्न चारित्र्य में-भाव ५, आत्मा ७ (कषाय छोड़ कर), लब्धि ५, वीर्य १, दृष्टि १, मध्य १, दण्डक १, पञ्च १ ।

७ असंयति में-भाव ५, आत्मा ७ (चारित्र्य छोड़ कर) लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि ३, मध्य अमध्य २, दण्डक २४, पञ्च २ ।

८ संयता संयति में-भाव ५, आत्मा ७ ऊपर अनुसार, लब्धि ५, वीर्य १ बाल पण्डित, दृष्टि १ समकृत, मध्य १, दण्डक २, पञ्च १ शुक्ल ।

९ नो संयति नो असंयति नो संयता संयति में-भाव २, सायक, परिणामिक, आत्मा ४, लब्धि नहीं, वीर्य नहीं, दृष्टि १ समकृत, नो मध्य नो अमध्य, दण्डक नहीं, पञ्च नहीं ।

१३ उपयोग द्वार के २ भेद

साकार उपयोग में-भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, मध्य अमध्य २, दण्डक २४, पञ्च २ ।

२ अनाकार उपयोग में-भाव ५, आत्मा ८,

लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४, पञ्च २ ।

१४ आहारिक के २ भेद

१ आहारिक में-भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४, पञ्च २ ।

अनाहारिक में- भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य दो बाल व पण्डित, दृष्टि २, भव्य अभव्य २, दण्डक २४ पञ्च २ ।

१५ भापक द्वार के २ भेद

१ भापक में-भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक १६, पञ्च २ ।

२ अभापक में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४ पञ्च २ ।

१६ परित द्वार के ३ भेद ।

१ परित में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य १, दण्डक २४, पञ्च २ शुक्ल ।

२ अपरित में भाव ३, आत्मा ६, (ज्ञान चारित्र्य छोड़कर), लब्धि ५, वीर्य १, दृष्टि १, भव्य अभव्य २, दण्डक २४, पञ्च १ कृष्ण ।

३ नो परित नो अपरित में भाव २, आत्मा ४, लब्धि नहीं, वीर्य नहीं, दृष्टि १ समकित, नो भवी नो अभवी, दण्डक नहीं, पञ्च नहीं ।

१७ पर्याप्त द्वार के ३ भेद ।

१ पर्याप्त में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, मन्व्य अमन्व्य २, दंडक २४, पक्ष २ ।

२ अपर्याप्त में भाव ५, आत्मा ७. (चारित्र्य दोड़ कर), लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि २, मन्व्य अमन्व्य २, दंडक २४, पक्ष २ ।

३ नो पर्याप्त नो अपर्याप्त में भाव २ धायक व परिणामिक, आत्मा ४, लब्धि नहीं, वीर्य नहीं, दृष्टि १ समकित दृष्टि, नो मन्व्य नो अमन्व्य, दंडक नहीं, पक्ष नहीं ।

१८ सूक्ष्म द्वार के ३ भेद ।

१ सूक्ष्म में भाव ३, आत्मा ६, लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि १ मिथ्यात्व, मन्व्य अमन्व्य २, दंडक ५ (पांच स्थावर का), पक्ष २ ।

२ पादर में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, मन्व्य अमन्व्य २, दंडक २४, पक्ष २ ।

३ नो सूक्ष्म नो पादर में भाव २, आत्मा ४, लब्धि नहीं, वीर्य नहीं, दृष्टि १, नो मन्व्य नो अमन्व्य दंडक नहीं, पक्ष नहीं ।

१९ मंत्री द्वार के ३ भेद ।

१ मंत्री में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३ दृष्टि ३, मन्व्य अमन्व्य २ दंडक २४ । पांच स्थावर, मिथ्यात्व, मिथ्यात्व उर कर पक्ष २ ।

वीर्य, दृष्टि २-समकित दृष्टि व मिथ्यात्व दृष्टि, अमन्य १
दंडक, २४ पक्ष १ कृष्ण ।

शरीर द्वार के ५ भेद

१ आहारिक में-भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५,
वीर्य ३, दृष्टि ३, मन्य, अमन्य २, दंडक २०, पक्ष २।

२ वैश्रिक में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य
३, दृष्टि ३, मन्य अमन्य २, दंडक २७ (१३ देवता
का, १ नारकी का १, मनुष्य का, १ विर्यच का व १
वायु का एवं १७), पक्ष २ ।

३ आहारिक में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५,
वीर्य १, पंडित वीर्य, दृष्टि १ समकित दृष्टि, मन्य १,
दंडक १, पक्ष १ शुक्ल ।

४ तैजस व ५ कार्मण में भाव ५, आत्मा ८,
लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, मन्य अमन्य २, दंडक २४,
पक्ष २ ।

गुण स्थानक द्वार ।

१ मिथ्यात्व गुण स्थानक में भाव ३ (उदय,
चयोपशम, परिमाणिक), आत्मा ६ (ज्ञान चारित्र छोड़
कर) लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि १ मिथ्यात्व
दृष्टि, मन्य अमन्य दो, दंडक २४, पक्ष दो ।

२ सास्वादान समदृष्टि गुण स्थानक में भाव ३
ऊपर अनुसार, आत्मा ७ (चारित्र छोड़ कर), लब्धि ५,

वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि १ समकित दृष्टि; भव्य १ दंडक १६ (पांच एकेन्द्रिय छोड़कर), पक्ष १ शुक्र ।

३ मिश्र गुण स्थानक में भाव ३ ऊपर अनुसार आत्मा ६ (ज्ञान चारित्र छोड़कर), लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि १ मिश्र दृष्टि, भव्य १, दंडक १६, (५ एकेन्द्रिय तीन विकलेन्द्रिय छोड़कर) पक्ष १ शुक्र ।

४ अव्रती सम्यक्त्व दृष्टि में भाव ५, आत्मा ७, (चारित्र छोड़कर), लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य; दृष्टि १ समकित दृष्टि; भव्य १ दंडक १६ ऊपर अनुसार; पक्ष १ शुक्र ।

५ देश व्रती गुण स्थानक में भाव ५; आत्मा ७ (देश से चारित्र है सर्व से नहीं); लब्धि ५; वीर्य १; बाल पंडित वीर्य; दृष्टि १ समकित दृष्टि; भव्य १ दंडक दो (मनुष्य व तिर्यच के) पक्ष १ शुक्र ।

६ प्रमत्त संयति गुण स्थानक में भाव ५; आत्मा ८; लब्धि ५; वीर्य १ पंडित वीर्य; दृष्टि १ समकित दृष्टि भव्य १; दंडक १ मनुष्य का, पक्ष १ शुक्र ।

७ अप्रमत्त संयति गुण में—भाव ५, आत्मा ८ लब्धि ५, वीर्य १ पण्डित वीर्य, दृष्टि १ समकित भव्य १, दण्डक १ मनुष्य का, पक्ष १ शुक्र ।

नियंता वादर गुण ० में—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य १ पण्डित वीर्य, दृष्टि १ समकित दृष्टि, भव्य १, दण्डक १ मनुष्य का, पक्ष १ शुक्र ।

६ अनियतही मादर गुण० में-भाव ५, आत्मा ८ लब्धि ५, वीर्य १ परिहृत वीर्य, दृष्टि १ समकित, भव्य १, दण्डक १ मनुष्य का, पच १ शुक्ल ।

१० सूक्ष्म संपराय गुण० में-भाव ५ आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य १ परिहृत वीर्य, दृष्टि १ समकित, भव्य १, दण्डक १ मनुष्य का पच १ शुक्ल ।

११ उपशान्त मोहनीय गुण० में-भाव ५, आत्मा ७ (कपाय छोड़ कर) लब्धि ५, वीर्य १ परिहृत वीर्य, दृष्टि १ समकित, भव्य १, दण्डक १ मनुष्य का पच १ शुक्ल ।

१२ क्षीण मोहनीय गुण० में-भाव चार (उपशम छोड़ कर), आत्मा ७ (कपाय छोड़ कर), लब्धि ५, वीर्य १ परिहृत वीर्य, दृष्टि १ समकित, भव्य १, दण्डक १ मनुष्य का पच १ शुक्ल ।

१३ सयोगी केवली गुण० में भाव ३ (उदय, घायक, परिणामिक), आत्मा ७ (कपाय छोड़ कर), लब्धि ५, वीर्य १ परिहृत वीर्य, दृष्टि १ समकित दृष्टि भव्य १, दण्डक १ मनुष्य का, पच १ शुक्ल ।

अयोगी केवली गुण० में-भाव तीन ऊपर समान, आत्मा ६, (कपाय ३ योग छोड़ कर) लब्धि ५, वीर्य १ परिहृत वीर्य, दृष्टि १ समकित, भव्य १, दण्डक १ मनुष्य का, पच १ शुक्ल ।

॥ इति यावन् यानि सम्पूर्ण ॥

श्रोता अधिकार

श्रोता अधिकार श्री नंदि सूत्र में है सो नीचे अनुसार
गाथा

सेल' घण, कुङ्ग', चालणी', परिपुण्ण', हंस', महिस', भेस', य;
मसर्ग', जलूग', विरालो', जाङ्ग', गो', भेरि', आभेरी' सा । १ ।

चौदह प्रकार के श्रोता होते हैं जिनमें से प्रथम
सेल घण जैसे पत्थर पर मेघ गिरे परन्तु पत्थर मेघ (पानी)
से भीजे नहीं वैसे ही एकेक श्रोता व्याख्यानादिक सुने
परन्तु सम्यक् ज्ञान पावे नहीं, बुद्ध होवे नहीं ।

दृष्टान्तः—कुशिष्य रूपी पत्थर, सद् गुरु रूपी मेघ
तथा बोध रूपी पानी मुंग शेलीया तथा पुष्करावर्त मेघ का
दृष्टान्तः—जैसे पुष्करावर्त मेघ से मुंग शेलीया पिघले नहीं
वैसे ही एकेक कुशिष्य महान् संवेगादिक गुण युक्त
आचार्य के प्रतिबोधने पर भी समझे नहीं, वैराग्य रंग चढ़े
नहीं, अतः ऐसे श्रोता छाँड़ने योग्य हैं एवं अविनीत का
दृष्टान्त जानना—

काली भूमि के अन्दर जैसे मेघ बरसे तो वो भूमि
अत्यन्त भीज जावे व पानी भी रक्वे तथा गोधूमादिक
(गेहूं प्रभुत्व) की अत्यन्त निष्पत्ति कर वैसे ही विनीत
मुशिष्य भी गुरु की उपदेश रूर वाणी सुनकर हृदय में
धार रक्वे, वैराग्य में भीज जावे व अनेक अन्य मन्य

जीवों को विनय धर्म के अन्दर प्रवर्ताने, अतः ये श्रोता आदरवा योग्य है ।

२ कुङ्कुमः—कुङ्कुम का दृष्टान्त । कुङ्कुम के आठ भेद हैं जिनमें प्रथम घड़ा सम्पूर्ण घड़े के गुणों द्वारा व्याप्त है । घड़े के तीन गुणः—१ घड़े के अन्दर पानी भरने से किंचित् बाहर जावे नहीं २ स्वयं शीतल है अतः अन्य की भी तृप्त शान्त करे—शीतल करे । ३ अन्य का मलिनता भी पानी से दूर करे ।

ऐसे ही एकेक श्रोता विनयादिक गुणों से सम्पूर्ण भरे हुं हैं (तीन गुण सहित) १ गुणादिक को उपदेश सर्व धार कर रखे—किंचित् भूते नहीं २ स्वयं ज्ञान पाकर शीतल दया को प्राप्त हुं हैं व अन्य मध्य जीव को त्रिविध ताप उपसमा कर शीतल कावे हैं ३ मध्य जीव की सन्देह रूपी मलिनता को दूर करे । ऐसे श्रोता आदरने योग्य हैं ।

२ एक घड़े के पार्श्व भाग में काना (छेद युक्त) है इस में पानी भरे तो आधा पानी रहे व आधा पानी बाहर निकल जावे वैसे ही एकेक श्रोता वारुणानादि सुने तो आधा धार रखे व आधा भूत जावे ।

३ एक घड़ा नीचे में काना है इसमें पानी भरने में भरे पानी घड़े का निकल जावे किंचित् भी उसमें रहे

प्रमुख में टकरा कर फूट जावे वैसे एकेक थोता सद्गुरु की समा में व्याख्यान सुनने को बैठे परन्तु ऊँघ प्रमुख के योग से ज्ञान रूप पानी हृदय में आवे नहीं तथा अत्यन्त ऊँघ के प्रभाव से खराब ढाल रूप वायु से अथड़ावे (टकर खावे) जिससे समा में अपमान प्रमुख पावे तथा ऊँघ में पड़ने से अपने शरीर को नुकसान पहुँचावे ।

इति आठ घड़े के दृष्टान्त रूप दूसरे प्रकार का थोता का स्वरूप ।

३ चालणी-एकेक थोता चालणी के समान है । इस के दो प्रकार, एक प्रकार ऐसा है कि चालनी जब पानी में रखे तो पानी से सम्पूर्ण भरी हुई दीखे परन्तु उठा कर देखे तो खाली दीखे वैसे एकेक थोता व्याख्यानादि समा में सुनने को बैठे तो वैराग्यादि भावना से भरे हुवे दीखे परन्तु समा से उठ कर बाहर जावे तो वैराग्य रूप पानी किंचित् भी दीखे नहीं । ऐसे थोता छाँड़ने योग्य है ।

दूसरा प्रकार-चालनी गेहूँ प्रमुख का आटा चालने में आटा तो निकल जाता है परन्तु कट्टर प्रमुख कचराचर रह जाता है वैसे एकेक थोता व्याख्यानादि सुनने समय उपदेशक तथा श्रव के गगन तो निकलन देन परन्तु स्तब्धता प्रमुख अवगम्य रूप कचर का प्रमाण कर रहे । ऐसे थोता उठाना न्याय्य ।

४ परिपुण्य-सुधरी पक्षी के माला का दृष्टान्त । सुधरी पक्षी के माला से घी गालते समय घी घी निकल जावे परन्तु चींटी प्रमुख कचरा रह जाता है वैसे एकेक श्रोता आचार्य प्रमुख का गुण त्याग करके अवगुण को ग्रहण कर लेता है ऐसे श्रोता छांडवा योग्य हैं ।

५ हंस-दूध पानी मिला कर पीने के लिये देने पर जैसे हंस अपनी चोंच से (खटाश के गुण के कारण) दूध दूध पीवे और पानी नहीं पीवे वैसे विनीत श्रोता गुर्वादिक के गुण ग्रहण करे व अवगुण न लेवे ऐसे श्रोता आदरनीय हैं ।

६ मदिप-भैंसा जैसे पानी पीने के लिये जलाशय में जावे । पानी पीने के लिये जल में प्रथम प्रवेश करे पश्चात् मस्तक प्रमुख के द्वारा पानी डोलने व मल मूत्र करने के बाद स्वयं पानी पीवे परन्तु शुद्ध जल स्वयं नहीं पीवे अन्य दूध को भी पीने नहीं देवे वैसे कुशिष्य श्रोता व्याख्यानदिक में क्लेश रूप प्रश्नादिक करके व्याख्यान डोहले, स्वयं शान्ति युक्त सुने नहीं व अन्य मना जनों को शान्ति में मृत्ताने देवे नहीं । ऐसे श्रोता छांडने योग्य हैं ।

७ मेघ-बकरा जैसे पानी पीने को जलाशय प्रमुख में जावे तो किनारे पर ही पाव नाचे नमा कर के पानी पीवे, डोहले नहीं व अन्य दूध को भी निमेष जल पीने देवे ।

वैसे विनीत शिष्य व श्रोता व्याख्यानदिक नम्रता तथा शान्त रस से सुने, अन्य सभाजनों को सुनने देवे । ऐसे श्रोता आदरनीय हैं ।

८ मसग-इस के दो भेद प्रथम मसग अर्थात् चमड़े की कोथली में जव हवा मरी हुई होती है तब अत्यन्त फुली हुई दिखती है परन्तु तृपा समाये नहीं हवा निकल जाने पर खाली हो जाती है वैसे एकेक श्रोता अभिमान रूप वायु के कारण झानी वत् तड़ाक मारे परन्तु अपनी तथा अन्य की आत्मा को शान्ति पहुँचावे नहीं ऐसे श्रोता छोड़ने योग्य है ।

९ दूसरा प्रकार-मसग (मच्छर नामक जन्तु) अन्य को चटका मार कर परित्याग उपजावे परन्तु गुण नहीं करे वरन् तुक्सान उत्पन्न करे वैसे एकेक कुश्रोता गुर्वादिक को-ज्ञान अभ्यास कराने के समय अत्यन्त परिश्रम देवे तथा कुचचन रूप चटका मारे । परन्तु वैय्या-वृत्त्य प्रमुख कुत्थ भी न करे और मनमें असमाधि पैदा करे, यह छोड़ने योग्य है ।

१० जोंक इसके भेद २ हैं । पहिला जोंक जन्तु गाय बगरह के स्तन में लग जावे तब स्तन का पिये दूध को को नहीं पिये । इन्ही तरह में कोई अभिनया कृशिष्य श्रोता आचार्यदिक के पामरता तथा उनके दापों को देखे परन्तु अन्यदिक गुणों का प्रदर्शन नहीं करे यह भी त्यागने योग्य है ।

दूसरे प्रकार का-जोंक नामक जन्तु फोड़ा के ऊपर रखने पर उसमें चोट मारकर दुःख पैदा करता और बिगड़े हुए खून को पीता है बाद में शांति पैदा करता है । इसी तरह से कोई विनीत शिष्य श्रोता आचार्यादिक के साथ रहता हुआ पहिले तो वचनरूप चोट को मारे, समय असमय बहुत अभ्यास करता हुआ मेहनत करावे पीछे संदेह रूची मैल को निकाल कर गुरुओं को शांति उपजावे-परदेशी राजा के समान यह ग्रहण करने योग्य है ।

१० पिडाल-जैसे बिछी दूध के वर्तन को सींके से जमीन पर पटक कर उसमें मिली हुई धूल के साथ २ दूध को पीती है उसी तरह कोई श्रोता आचार्यादिक के पास से सूत्रादिक का अभ्यास करते हुए बहुत अविनय करे, और दूसरे के पास जाकर प्रण्य पृथ कर सूत्रार्थ को धारण करे परंतु विनय के साथ धारण नहीं करे इसलिए ऐसा श्रोता त्यागने योग्य है ।

११ जाहग-सहलो यह एक तिर्यच की जाति विशेष्य का जीव है यह पहले तो अपनी माता का दूध थोड़ा थोड़ा पीता है और फिर वह पचजाने पर और थोड़ा इस तरह थोड़े थोड़े दूध से अपना शरीर पुष्ट करता है पीछे बड़े भारी सर्प का मान भजन करता है । इसी तरह कोई श्रोता आचार्यादिक के पास में अपनी बुद्धि माफिक समय समय पर थोड़ा थोड़ा मंत्र अभ्यास करे और

अभ्यास करते हुए गुरुओं को अत्यंत संतोष पैदा करे। क्योंकि अपना पाठ बराबर याद करता रहे और उसे याद करने पर फिर दूसरी बार और तीसरी बार इस तरह थोड़ा थोड़ा लेकर पठाने बद्धुक्त हो कर मिथ्यात्वी लोगों का मान मर्दन करे। यह आदरने योग्य है।

१२ गाय-इसके दो प्रकार। प्रथम प्रकार-जैसे दूसरी गाय का एक शेठ हिली अपने पड़ोसी को सौंप कर अन्य गाँव जाये पड़ोसी चाँग पानी प्रवृत्त बराबर गाय को नहीं देखे त्रिमने गाय भूग्न तथा ये पीड़ित होकर दूध में प्रवृत्त लग जाती है व दुग्धी हो जाती है ऐसे ही एक भोला (अनिनीत) आहार पानी प्रवृत्त वैवाच्य नहीं करने में गुणादिक की देह म्लानि पावे व त्रिमने गुणादिक में पाटा पड़ने लगता है तथा अत्यंत के नाभी होते हैं।

द्वितीय प्रकार-एक भेड़ पड़ोसी को दूसरी गाय सौंप कर गाँव तथा पड़ोसी के पास पानी प्रवृत्त अद्वितीय देने में दूध में पीड़ित होने लगती है व अनेक बार बागी दूध देने एक निनीत आहार (अल्प), गुणादिक की आहार पानी प्रवृत्त (अल्प) व (अल्प) दूध गुणादिक की

को बजाने वाला पुरुष यदि राजा की आज्ञानुसार भेरी बजावे तो राजा सुखी होकर उसे पुष्कल द्रव्य देवे वैसे ही विनीत शिष्य-श्रोता-वीर्यर तथा गुर्वादिक की आज्ञानुसार नृयादिक की स्वाध्याय तथा ध्यान प्रमुख अंगीकार करे तो कर्म रूप रोग दूर होवे और सिद्ध गति में अनन्त लक्ष्मी प्राप्त करे यह आदरने योग्य है ।

दूसरा प्रकार-भेरी बजाने वाला पुरुष यदि राजा की आज्ञानुसार भेरी नहीं बजावे तो राजा कोपायमान होकर द्रव्य देवे नहीं वैसे ही अविनीत शिष्य (धोता) वीर्यर की तथा गुर्वादिक की आज्ञानुसार नृयादिक की स्वाध्याय तथा ध्यान करे नहीं तो उनका कर्म रूप रोग दूर होवे नहीं व सिद्ध गति का सुख प्राप्त करे नहीं यह छोड़ने योग्य है ।

१४ धानीरी- प्रथम प्रकार-धाभीर स्त्री पुरुष एक ग्राम से पास के शहर में गढ़वे में घी भर कर बेचने को गये । वहां बाजार में उतरते समय घी का भाजन-पर्वन फूट गया व जिनमें घी डल गया । पुरुष स्त्री को कुचन कह कर उपालम्भ देने लगा । स्त्री भी पुनः भर्ती के भासने कुचन करने लगी । इन दोष में भर घी निकल कर जमीन पर रहने लगा व भी पुरुष दोनों भाग करन लग । जमीन पर रहने लगा व भी पुरुष दोनों भाग करन लग । जमीन पर रहने लगा व भी पुरुष दोनों भाग करन लग ।

ले कर सायङ्काल को गाँव जाते समय चोरों ने उन्हें लूट लिया । अत्यन्त निराश हुये, लोगों के पृथ्नी पर सर्व वृत्तान्त कदा जिसे सुन कर लोगों ने उन्हें बहुत ही ठप्का दिया । वैसे ही गुरु के द्वारा न्यारुपान में दिये हुये उपदेश (सार धो) को लड़ाई भगडा करके ढोल दिया व अन्त में प्लेश करके दुर्गति को प्राप्त करे यह श्रोता छोड़ने योग्य है ।

दूसरा प्रकार-धी भर कर शहर में जाते समय चर्तन उत्तारने पर फूट गया, फूटत ही दोनों स्त्री पुरुषों ने मिल कर पुनः भाजन में धी भर लिया । बहुत लुकमान नहीं होने दिया । धी को बेचकर वैसे सीधे किये व अन्ध्रा संग करके गाँव में सुख पूर्वक अन्य सुत्र पुरुषों के समान पहोच गये, वैसे ही विनीत शिष्य (श्रोता) गुरु के पास से वाणी सुनकर व शुद्ध भान पूर्वक तथा अर्थ सूत्र को धार कर रखे; साँचे । अस्त्रलित को, विस्मृति हावे तो गुरु के पास से पुनः समा माँग कर धारे, पूछे परन्तु प्लेश भगडा को नहीं । गुरु उन पर प्रमत्त होवे, नयम ज्ञान की वृद्धि हावे, व अन्त में सद् गति पावे यह श्रोता आदर्शोप है ।

॥ इति श्रोता अधिकार सम्पूर्ण ॥

❧ ६८ बोल का अल्प बहुत्व ❧

सूत्र श्री पन्नवणाजी पद तीसरा ।

६८ बोल का अल्प बहुत्व ।

अनुक्रम	महा दण्डक	का जि	२४ गुण	२४ गुण	२४ गुण	२४ गुण	२४ गुण
१ गर्भव मनुष्य सर्व							
से कम	२,	१४,	१५,	१२,	६,		
२ मनुष्याणी संख्यात गु.	२,	१४,	१३,	१२,	६,		
३ बादर तजस काय							
पर्याप्त असंख्यात गुणा	१,	१,	१,	३,	३,		
४ पांच अनुत्तर विमान							
का देव असंख्यात गु.	२,	१,	११,	६,	१,		
५ ऊपर की त्रीक का देव							
संख्यात गुणा-	२,	२-३,	११,	६,	१,		
६ मध्य त्रीक का देव							
संख्यात गुणा-	२,	२-३,	११,	६,	१,		
७ नीचे की त्रीक का देव							
संख्यात गुणा-	२	२-३,	११,	६,	१,		
८ बारहवा देवलोक का							
देव संख्यात गुणा-	२,	४,	१,	२,	१,		

६	११ वां देवलोक का				
	देव संख्यात गुणा—	२,	४,	११,	६, १,
१०	दशवां देवलोक का देव				
	संख्यात गुणा—	२,	४,	११,	६, १,
११	नववां देवलोक का देव				
	संख्यात गुणा—	२,	४,	११,	६, १,
१२	सातवीं नरक का नेरिया				
	असंख्यात गुणा—	२,	४,	११,	६, १,
१३	छठी नरक का नेरिया				
	असंख्यात गुणा—	२,	४,	११,	६, १,
१४	आठवां देवलोक का				
	देव असंख्यात गुणा—	२,	४,	११,	६, १,
१५	सातवां देवलोक का देव				
	असंख्यात गुणा—	२,	४,	११,	६, १,
१६	पांचवीं नरक का नेरिया				
	असंख्यात गुणा—	२,	४,	११,	६, २,
१७	छठा देवलोक का देव				
	असंख्यात गुणा—	२,	४,	११,	६, १,
१८	चौथी नरक का नेरिया				
	असंख्यात गुणा—	२,	४,	११,	६, १,
१९	पांचवां देवलोक का देव				
	असंख्यात गुणा—	२,	४,	११,	६, १,

२० तीसरी नरक का नेरिया

असंख्यात गुणा— २, ४, ११, ६, २,

२१ चौथा देवलोक का देव

असंख्यात गुणा— २, ४, ११, ६, १,

२२ तीसरा देवलोक का देव

असंख्यात गुणा— २, ४, ११, ६, १,

२३ दूसरी नरक का नेरिया

असंख्यात गुणा— २, ४, ११, ६, १,

२४ संनृद्धि ननुप्य अग्नि-

यत असंख्यात गुणा— १, १, ३, ४, ३,

२५ दूसरे देवलोक का देव

असंख्यात गुणा— २, ४, ११, ६, १,

२६ दूसरे देवलोक की दे-

विये संख्यात गुणा— २, ४, ११, ६, १,

२७ पहले देवलोक का देव

असंख्यात गुणा— २, ४, ११, ६, १,

२८ पहले देवलोक की दे-

विये संख्यात गुणा— २, ४, ११, ६, १,

२९ नवम पति का देव अ-

संख्यात गुणा— ३, ४, ११, ६, १,

३० नवम पति की देवी

असंख्यात गुणा— २, ४, ११, ६, ४,

३१ पहिली नरक का नेरि-				
या असंख्यात गुणा	३,	४,	"	" १,
३२ ऐवर पुरुष तिर्यैच यो-				
नि असंख्यात गुणा	२,	५,	१३,	" ६,
३३ ऐवर की स्त्री				
संख्यात गुणी	२,	५,	"	" "
३४ स्तलचर पुरुष संख्या-				
त गुणा	२,	५,	"	" "
३५ स्थलचर की स्त्री				
संख्यात गुणी	"	"	"	" "
३६ जलचर पुरुष				
संख्यात गुणा	"	"	"	" "
३७ जलचर की स्त्री				
संख्यात गुणी	"	"	"	" "
३८ वायु ध्यन्तर का				
देव संख्यात गुणा	३,	४,	११,	" ४,
३९ वायु ध्यन्तर की				
देवी संख्यात गुणी	२,		"	" "
४० ज्वालिप का देव				
संख्यात गुणा				" १
४१ ज्वालिप की देवी				
संख्यात गुणी				" "

५३	प्रत्येक शरीरी वा.				
	वन. प. असं. गु. "	१,	१,	३,	"
५४	वाटर निगोद प.				
	का श. असं. गु. "	"	"	"	"
५५	वाटर पृथ्वी काय				
	पर्याप्त असं. गु. "	"	"	"	"
५६	वाटर अप काय पर्याप्त				
	असंख्यात गुणा	१,	१,	१,	३, ३,
५७	वाटर वायु काय पर्याप्त				
	असंख्यात गुणा	१,	१,	४,	३, ३,
५८	वाटर तैजस काय अ-				
	पर्याप्त असंख्यात गुणा	१,	१,	३,	३, ३,
५९	प्रत्येक शरीरी वाटर वन-				
	स्पति काय अ. अ. गुणा	१,	१,	३,	३, ४,
६०	वाटर निगोद अपर्याप्त				
	का शरीर असं. गुणा	१,	१,	३,	३, ३,
६१	वाटर पृथ्वी काय अप.				
	असंख्यात गुणा	१,	१,	३,	३, ४,
६२	वाटर अप काय अप.				
	असंख्यात गुणा	१,	१,	३,	३, ४,
६३	वाटर वायु काय अप.				
	असंख्यात गुणा	१,	१,	३,	३, ३,

६४ सूक्ष्म तेजस्काय अप.

असंख्यात गुणा १, १, ३, ३, ३,

६५ सूक्ष्म पृथ्वी काय अप.

विशेषाधिक १, १, ३, ३, ३,

६६ सूक्ष्म अप काय अप.

विशेषाधिक १, १, ३, ३, ३,

६७ सूक्ष्म वायु काय अप.

विशेषाधिक १, १, ३, ३, ३,

६८ सूक्ष्म तेजस्काय पर्याप्त

संख्यात गुणा १, १, १, ३, ३,

६९ सूक्ष्म पृथ्वी काय पर्याप्त

विशेषाधिक १, १, १, ३, ३,

७० सूक्ष्म अप काय पर्याप्त

विशेषाधिक १, १, १, ३, ३,

७१ सूक्ष्म वायु काय पर्याप्त

विशेषाधिक १, १, १, ३, ३,

७२ सूक्ष्म निर्गोद अपर्याप्त

का अर्गीर जनं गुणा १, १, १, ३, ३,

७३ सूक्ष्म निर्गोद पर्याप्त

का अर्गीर जनं गुणा १, १, १, ३, ३,

७४ सूक्ष्म निर्गोद अपर्याप्त

गुणा १, १, १, ३, ३,

७५ सम्यक् दृष्टि प्रति पाति				
अनन्त गुणा	१४,	१४,	१५,	२२, ६;
७६ सिद्ध अनन्त गुणा	०;	०;	०;	२; ०;
७७ बादर वनस्पति काय				
पर्याप्त अनन्त गुणा	१;	१;	१;	३; ३;
७८ बादर जीव पर्याप्त				
विशेषाधिक	६;	१४;	१४;	१२; ६;
७९ बादर वनस्पति काय				
अप. असंख्यात गुणा	१;	१;	३;	३; ४;
८० बादर जीव अपर्याप्त				
विशेषाधिक	६,	३,	५,	८।६, ६,
८१ समुच्चय बादर जीव				
विशेषाधिक	१२,	१४,	१५,	१२, ६,
८२ सूक्ष्म वनस्पति काय				
अपर्याप्त असंख्यात गु.	१,	१,	३,	३, ३,
८३ सूक्ष्म जीव अपर्याप्त				
विशेषाधिक	१,	१,	३,	३, ३,
८४ सूक्ष्म वनस्पति काय				
पर्याप्त संख्यात गुणा	१,	१,	१,	३, ३,
८५ सूक्ष्म जीव पर्याप्त				
विशेषाधिक	१,	१,	१,	३, ३,
८६ समुच्चय सूक्ष्म जीव				
विशेषाधिक	२,	१,	३,	३, ३,

औदारिक पने (औदारिक शरीर रह कर औदारिक योग्य जो पुद्गल ग्रहण करते हैं) वैक्रिय पने (वैक्रिय शरीर में रह कर वैक्रिय योग्य पुद्गल ग्रहण करे) तैजस आदि ऊपर कहे हुये सात प्रकार से पुद्गल जीव ने ग्रहण किये हैं व छोड़े हैं, ये भी सूक्ष्म पने और वादर पने लिये हैं और छोड़े हैं; द्रव्य से, क्षेत्र से काल से व भाव से एवं चार तरह से जीव ने पुद्गल परावर्त्त किये हैं।

इसका विवरण (खुलासा) नीचे अनुसार:-

पुद्गल परावर्त्त के दो भेद:-१ वादर २ सूक्ष्म ये द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से, भाव से,

१ द्रव्य से वादर पुद्गल परावर्त्त:-लोक के समस्त पुद्गल पूरे किये परन्तु, अनुक्रम से नहीं याने औदारिक पने पुद्गल पूरे किये बिना पहले वैक्रिय पने लेवे। व तैजस पने लेवे, कोई भी पुद्गल परावर्त्त पने बीच में लेकर पुनः औदारिक पने के लिये हुये पुद्गल पूरे करे एवं सात ही प्रकार से बिना अनुक्रम के समस्त लोक के सर्व पुद्गलों को पूरे करे इसे वादर पुद्गल परावर्त्त कहते हैं।

२ द्रव्य से सूक्ष्म पुद्गल परावर्त्त-लोक के सर्व पुद्गलों को औदारिक पने पूरे करे, फिर वैक्रिय पने फिर तैजस पने एवं एक के बाद एक अनुक्रम पूर्वक मान ही पुद्गल परावर्त्त पने पूरे करे उसे सूक्ष्म पुद्गल परावर्त्त कहते हैं।

३ चैत्र से यादर पुद्गल परावर्त्त-चौदह राजलोक के जितने आकाश प्रदेश हैं उन सर्व आकाश प्रदेश को प्रत्येक प्रदेश में मर मर कर अनुक्रम बिना तथा किसी भी प्रकार से पूर्ण करे ।

४ चैत्र से सूक्ष्म पुद्गल परावर्त्त:-चौदह राजलोक के आकाश प्रदेश को अनुक्रम से एक के बाद एक १-२ ३-४-५-६-७-८ ९-१० एवं प्रत्येक प्रदेश में मर कर पूर्ण करे उन में पहले प्रदेश में मर कर तीसरे प्रदेश में मरे अथवा पांचवें आठवें किसी भी प्रदेश में मरे तो पुद्गल परावर्त्त करना नहीं गिना जाता है, अनुक्रम से प्रत्येक प्रदेश में मर कर समस्त लोक पूर्ण करे ।

५ काल से यादर पुद्गल परावर्त्त—एक काल चक्र (जिसमें उत्तरपिंशी व श्रवणपिंशी सम्मिलित हैं) के प्रथम समय में मरे पश्चात् दूसरे काल चक्र के दूसरे समय में मरे अथवा तीसरे समय में मरे एवं तीसरे काल चक्र के किसी भी समय में मरे अर्थात् एक काल चक्र के जितने समय होवे उतने काल चक्र के एक २ समय मर कर एक काल चक्र पूर्ण करे ।

६ काल से सूक्ष्म पुद्गल परावर्त्त—काल चक्र के प्रथम समय में मरे, अथवा दूसरे काल चक्र के दूसरे समय में मरे, तीसरे काल चक्र के तीसरे समय में मरे,

चोथे काल चक्र के चोथे समय में मरे, बीचमें नियम के बिना किसी भी समय में मरे (यह हिसाब में नहीं गिना जाता) एवं एक काल चक्र के जितने समय होवे उतने काल चक्र के अनुक्रम से नियमित समय में मरे ।

७ भाव से चादर पुद्गल परावर्त—जीव के असंख्यात परिणाम होते हैं जिनमें से प्रथम परिणाम पर मरे पश्चात् ३-२ ५-४-७-६ एवं अनुक्रम के बिना प्रत्येक परिणाम पर मरे व मर कर असंख्यात परिणाम पूर्ण करे ।

८ भाव से सूक्ष्म पुद्गल परावर्त—जीव के असंख्यात परिणाम होते हैं उनमें से प्रथम परिणाम पर मरे पश्चात् बीच में कितना ही समय जाने बाद दूसरे परिणाम पर, व अनुक्रम से तीसरे परिणामें चोथे परिणामें एवं असंख्य परिणाम पर मर कर पूर्ण करे ।

❀ इति गुण द्वार ❀

३ त्रिसंख्या द्वार

१ पुद्गल परावर्त—सर्व जीवों ने कितने किये २ एक वचन में एक जीव ने २४ दंडक में कितने पुद्गल परावर्त किये ३ बहु वचन में सर्व जीवों ने २४ दंडक में कितने पुद्गल परावर्त किये ।

१ सर्व जीवों ने—आंदासिक पुद्गल परावर्त, वैक्रिय पुद्गल परावर्त, तैजस पुद्गल परावर्त, आदि ये माने पुद्गल परावर्त अनन्त अनन्त बार किये ७ ।

२ एक वचन से—एक जीव ने—एक नरक के जीव ने औदारिक पुद्गल परावर्त्त, वैक्रिय पुद्गल परावर्त्त आदि सातों पुद्गल परावर्त्त गत कालमें अनन्त अनन्त बार किये, भविष्य काल में कोई पुद्गल परावर्त्त नहीं करेंगे (जो मोक्ष में जावेंगे वो) कोई करेंगे वे जघन्य १-२-३ पुद्गल परावर्त्त करेंगे उत्कृष्ट अनन्त करेंगे एवं भवनपति आदि २४ दण्डक के एक १ जीव ने सात पुद्गल परावर्त्त गत कालमें अनन्त किये, कितने भविष्य काल में (मोक्ष में जाने से) करेंगे नहीं, जो करेंगे वो १-२-३ उत्कृष्ट अनन्त करेंगे सात पुद्गल परावर्त्त २४ दण्डक के साथ गिनने से १६८ (प्रश्न) हुवे ।

३ यह वचन से—सर्व जीवों ने—नरक के सर्व जीवों ने पूर्व काल में औदारिक पुद्गल परावर्त्त आदि सातों पुद्गल परावर्त्त अनन्त अनन्त किये भविष्य काल में अनेक जीव अनन्त करेंगे इसी प्रकार २४ दण्डक के बहुतसे जीवों ने ये अनन्त पुद्गल परावर्त्त किये व भविष्य काल में करेंगे इनके भी १६८ (प्रश्न) हाते हैं ।

$७ + १६८ + १६८ = ३४३$ (प्रश्न) होते हैं ।

४ त्रि स्थानक द्वार

४ एक जीव ने क्रिय २ स्थान २ पर कोन २ में पुद्गल परावर्त्त किये, कोन २ में पुद्गल परावर्त्त करेंगे २ बहुत जीवों ने क्रिय २ स्थान पर पुद्गल परावर्त्त किये

व करेंगे ३ सर्व जीवों ने किस २ दण्डक में कौन २ से पुद्गल परावर्त किये ।

१ एक वचन से—एक जीव ने नरकपने औदारिक पुद्गल परावर्त किये नहीं, करेगा नहीं, वैक्रिय पुद्गल परावर्त किये हैं व करेगा करेगा तो जयन्प-
१-२-३ उत्कृष्ट अनन्त करेगा । इसी प्रकार तैजस् पुद्गल परावर्त, कार्मण पुद्गल परावर्त यावत् आसोश्वास पुद्गल परावर्त किये हैं व आगे करेगा । ऊपर अनुसार । इसी प्रकार असुर कुमार पने पृथ्वी पने यावत् वैमानिक पने पूर्व काल में औदारिक पुद्गल परावर्त वैक्रिय पुद्गल परावर्त यावत् आसोश्वास पुद्गल परावर्त किये हैं व करेगा ।
(ध्यान में रखना चाहिये कि जिस दण्डक में जो २ पुद्गल परावर्त होवे वो करे और न होवे उन्हें न करे) ।
एक नेरिया जीव २४ दण्डक में रह कर सात सात (होवे तो हाँ और न होवे तो नहीं) पुद्गल परावर्त किये एवं $२४ \div ७ = १६ =$ हुवे । एवं २४ दण्डक का जीव २४ दण्डक में रह कर सात सात पुद्गल परावर्त करे । अतः $१६ \div २४ = ८०$ ३२ प्रश्न पुद्गल परावर्त के होते हैं ।

यद् वचनसे—सर्व जीवों ने नेरिये पने औदारिक पुद्गल परावर्त किये नहीं, करेंगे नहीं, वैक्रिय पुद्गल परावर्त व वन आसोश्वास पुद्गल परावर्त किया और करेंगे इसी प्रकार असुर कुमार पने पृथ्वी पने यावत् वैमानिक

जाने बाद होता है । सात पुद्गल परावर्त में अनन्त अनन्त काल चक्र चर्यात हो जाते हैं ।

॥ इति काल द्वार ॥

६ काल की थोपमाः—काल समझाने के लिये एक दृष्टान्त दिया जाता है । परमाणु यह सूक्ष्म से सूक्ष्म रज कण, यह अतीन्द्रिय (इन्द्रिय से अगम्य) होता है कि जिसका भाग व हिस्सा किसी भी शस्त्र से किंवा किसी भी प्रकार से हो सक्ता नहीं अत्यन्त बारीक सूक्ष्म से सूक्ष्म रज कण को परमाणु कहते हैं । इस प्रकार के अनन्त सूक्ष्म परमाणु से एक व्यवहार परमाणु होता है । २ अनन्त व्यवहार परमाणु से एक उष्ण स्निग्ध परमाणु होता है । ३ अनन्त उष्ण स्निग्ध परमाणु से एक शीत स्निग्ध परमाणु होता है । ४ आठ शीत स्निग्ध परमाणु से एक ऊर्ध्व रेणु होता है । ५ आठ ऊर्ध्व रेणु से एक त्रस रेणु । ६ आठ त्रस रेणु से एक रथरेणु । ७ आठ रथ रेणु से देव-उत्तर कुरु के मनुष्यों का एक बालाग्र । हरि-रम्यक वर्ष के मनुष्यों का एक बालाग्र ८ इन आठ बालाग्र से हेमवय हिरण्य वय मनुष्यों का एक बालाग्र ९ इन आठ बालाग्र से पूर्व विदेह व पश्चिम विदेह मनुष्यों का एक बालाग्र १० इन बालाग्र से भरत ऐमावत के मनुष्यों का एक बालाग्र ११ इन बालाग्र से भरत ऐमावत के मनुष्यों का एक बालाग्र १२ इन आठ बालाग्र से एक लीख १३ अष्ट लीख की एव जे. १४ आठ ज का एक

अर्ध जब १५ आठ अर्ध जब का एक उत्सेध अङ्गुल १
 छः उत्सेध अङ्गुलों का एक पैर का पहोल पना (चौदाई
 १७ दो पैर के पहोल पने का एक वेत १८ दो वेत ए
 हाथ दो हाथ एक कुचि १९ दो कुचि एक धनुष्य २०
 दो हजार धनुष्य का एक गाउ (कोस) २१ चार गा
 का एक योजन । कल्पना करो कि ऐसा एक योजन का
 लम्बा, चौड़ा, व गहरा कुवा हो उसमें देव-उत्तर २२
 मनुष्यों के बाल--एक २ बाल के असंख्य खण्ड करे--बाल
 के इन असंख्य खण्डों से तल से लगाकर ऊपर तक
 टूट २ कर वो कुवा भरा जावे कि जिसके ऊपर से, चक्र-
 वर्णों का लहरकर चला जावे परन्तु एक बाल नमे नहीं,
 नदी का प्रवाह (गङ्गा और सिन्ध नदी का) उस पर
 पड़ कर चला जावे परन्तु अन्दर पानी भिदा सके नहीं,
 अग्नि भी यदि लग जावे तो वो अन्दर प्रवेश कर सके
 नहीं । ऐसे कुवे के अन्दर से, सो सो वर्ष X के बाद
 एक बाल--खण्ड निकाले, एवं सो सो वर्ष के बाद एक २
 खण्ड निकालने से जब कुवा खाली हो जावे उतने समय
 को शस्य कार एक पन्योपम कहते हैं ऐसे दश क्रोड़ा

X असंख्य समय की एक आवालिखा, मन्थान आवालिखा का एक
 श्रास, मन्थान समय का एक निश्चय दो मिलकर एक मास मात श्रास
 का एक स्नेह (अल्प समय), मात स्नेह का एक जब (दो काष्ठ का
 माप) ३३ जब का एक मुहूर्त, तीस मुहूर्त एक अर्ध रात्रि ३४ अर्ध रात्रि
 का पक्ष, दो पक्ष एक मंड, चार मंड एक वर्ष ।

काद एव्य का एक मागरे दाना दे । २० कादा काद
मागरी का एक चानु चक दाना दे ।

॥ इति यत्तलोपमा द्वार ॥

ॐ फाल अन्व यदुत्त द्वारः—१ अनन्त काल
चक्र जाये तब एक कामेय पुद्गल परावर्त होये । २
अनन्त कामेय पुद्गल परावर्त जाये तब तैजस पुद्गल
परावर्त होये । ३ अनन्त तैजस पुद्गल परावर्त जाये तब
एक औदारिक पुद्गल परावर्त होये । ४ अनन्त औ-
पु० परा० जाये तब एक आसी आन पुद्गल परावर्त होये
५ अनन्त आ० पु० परा० जाये तब एक मन पुद्गल
परा० होये । ६ अनन्त मन पु० परा० जाये तब एक
वचन पु० परा० होये । ७ अनन्त वचन पु० परा० जाये
तब एक रक्तिच पु० परा० होये ।

॥ इति अल्प यदुत्त द्वार ॥

८ पुद्गल मध्य पुद्गल परावर्त द्वारः—१ एक
कामेय पुद्गल परावर्त में अनन्त काल चक्र जाये । २
एक तैजस पुद्गल परा० में अनन्त कामेय पु० परा० जाये
३ एक औदारिक पु० परा० में अनन्त तैजस पु० परा० जाये
४ एक आसी आन पु० परा० में अनन्त औदारिक पु०
परा० जाये । ५ एक मन पु० परा० में अनन्त आना पु० परा०
जाये । ६ एक वचन पु० परा० में अनन्त मन पु० परा० जाये

७ एक वैक्रिय पु० परा० में अनन्त वचन पु० परा० ज्ञा

॥ इति पुद्गल मध्य पुद्गल परावर्त द्वार ॥

८ पुद्गल परावर्त क्रिये उनका अरूप बहुत्वः—
 १ सर्व जीवों ने सर्व ॥ अन्व वैक्रिय पु० परा० क्रिये २ इस
 में वचन पु० परा० अनन्त गुणे अधिक क्रिये ३ इससे मन
 पु० परा० अनन्त गुणे अधिक क्रिये ४ इसमें आसो० पु०
 परा० अनन्त गुणे अधिक क्रिये ५ इससे आदारिक पु०
 परा० अनन्त गुणे अधिक क्रिये ६ इससे तैजस् पु० परा०
 अनन्त गुणे अधिक क्रिये ७ इससे कार्मण पु० परा०
 अनन्त गुणे अधिक क्रिये ।

॥ इति पुद्गल करण अरूप बहुत्व ॥

॥ इति पुद्गल परावर्त सम्पूर्ण ॥



३१ अधोलोक पुरुष वेद भाषक में	०	५	१	२५
३२ पद्म लेशी मिथ्र दृष्टि में	०	५	१५	१२
३३ पद्म लेशी वचन योगी में	०	५	१५	१३
३४ उर्ध्वलोक में एकांत मिथ्या. में	०	२८	०	६
३५ अवधिदर्शन औदारिक शरीर में	०	५	३०	०
३६ उर्ध्व लोक एकांत नपुंसक में	०	३६	०	०
३७ अधो लोक पंचेन्द्रिय नपुंसक में	१४	२०	३	०
३८ अधो लोक मन योगी में	७	५	१	२५
३९ अधो लोक एकांत असंज्ञी में	०	३८	१	०
४० औदारिक शुक्र लेशी में	०	१०	३०	०
४१ शुक्ललेशी सम्य. दृष्टि अभा. में	०	५	१५	२१
४२ शुक्र लेशी वचन योगी में	०	५	१५	२२
४३ उर्ध्व लोक मन योगी में	०	५	०	३८
४४ शुक्र लेशी देवताओं में	०	०	०	४४
४५ कर्म भूमि मनुष्यों में	०	०	४५	०
४६ अधो लोक के वचन योगी में	७	१३	१	२५
४७ शुक्र लेशी उर्ध्वलोक में अव. ज्ञान	०	५	०	४२
४८ अधो लोक में त्रय अम पद	७	१३	३	२५
४९ उर्ध्वलोक शुक्र लेशी अव. दर्शन	०	५	०	४४
५० ज्योतिर्षा की आगति में	०	५	०	०
५१ अधो लोक में औदारिक शरीर में	०	४८	३	०
५२ उर्ध्वलोक शुक्र लेशी सम्य. दृष्टि	०	१०	०	४२

५३ अधोलोक के एकांत नपुं. वेद में	१४	३८	१	०
५४ उर्ध्वलोक शुक्ल लेशों में	०	१०	०	४४
५५ अधोलोक बादर नपुंसक में	१४	३८	३	०
५६ तिर्यक् लोक मिथ्र दृष्टि में	०	५	१५	३६
५७ अधो लोक पर्याप्त में	७	२४	१	२५
५८ अधोलोक अपर्याप्त में	७	२४	२	२५
५९ कृष्ण लेशी मिथ्र दृष्टि में	३	५	१५	३६
६० अकर्म भूमि संज्ञा में	०	०	६०	०
६१ उर्ध्व लोक अनाहारिक में	०	२३	०	३८
६२ अधोलोक एकान्त मिथ्यास्त्री में	१	३०	१	३०
६३ उर्ध्व लोक तथा अधोलोक देव (मरनेवालों में	०	०	०	६३
६४ पद्म लेशी सम्यक् दृष्टि में	०	१०	३०	२४
६५ अधो लोक तेजो लेशी में	०	१३	२	५०
६६ पद्म लेशी में	०	१०	३०	२६
६७ मिथ्र दृष्टि देवता में	०	०	०	६७
६८ तेजो लेशी मिथ्र दृष्टि में	०	५	१५	४८
६९ उर्ध्व लोक बादर शाश्वत में	०	३१	०	३८
७० अधो लोक में अनापक में	७	३५	३	२५
७१ अधो लोक अवधि दर्शन में	०४	५	२	५०
७२ तिर्यक् लोक के देवताओं में	०	०	०	७२

७३ अधो लोक के बाहर मरने वालों में	७	३२	३	२५
७४ मिथ दृष्टि नो गर्भज में	७	०	०	६७
७५ उर्ध्व लोक में अवधि ज्ञान में	०	५	०	७०
७६ उर्ध्व लोक में देवताओं में	०	०	०	७६
७७ अधो लोक में चतु इन्द्रिय नो गर्भज में	१४	१२	१	५०
७८ उर्ध्व लोक में नो गर्भज सम्यक् दृष्टि में	०	२	०	७०
७९ उर्ध्व लोक में शान्त में	०	४१	०	३२
८० धातकी खरड में वस में	०	२६	५४	०
८१ सम्यक् दृष्टि देवताओं के पर्याप्त में	०	०	०	८१
८२ शुक्ल लेशी सम्यक् दृष्टि में	०	१०	३०	४२
८३ अधो लोक में मरने वालों में	७	४२	३	२५
८४ शुक्ल लेशी जीवों में	०	१०	३०	४४
८५ अधो लोक कृष्ण लेशी वस में	६	२६	३	५०
८६ उर्ध्व लोक पुरुष वेद में	०	१०	०	७६
८७ उर्ध्व लोक घ्राणन्द्रिय सम्यक् दृष्टि में	०	१७	०	७०
८८ उर्ध्व लोक सम्यक् दृष्टि में	०	१२	०	७०
८९ अधो लोक चतु इन्द्रिय में	१४	२२	३	५०

१३६ औदारिक शरीर नो गर्भज में	०	३८	१०१	०
१४० कृष्ण लेशी अमर में	३	०	८६	५१
१४१ अवधि दर्शन मरने वालों में	७	५	३०	६६
१४२ पंचेन्द्रिय सम्यग् दृष्टि मरने वालों में	६	१०	४५	८१
१४३ एकांत नपुंगक बादर में	१४	२८	१०१	०
१४४ नो गर्भज शाश्वत में	७	३८	०	६६
१४५ अपर्याप्त सम्यग् दृष्टि में	६	१३	४५	८१
१४६ प्रसन्न नो गर्भज एकांत मि. में	१	८	१०१	३६
१४७ लवण समुद्र के अभाषक में	—	३५	११२	—
१४८ स्त्री पेट पैक्रिय शरीर में	—	५	१५	१२८
१४९ संधी एकांत मिथ्यात्वी में	१	—	११२	३६
१५० त्रिषु लोक में वचन योभी में	—	१३	१०१	३६
१५१ त्रिषु लोक पंचेन्द्रिय नपु. में	—	२०	१३१	—
१५२ त्रिषु लोक पंचेन्द्रिय शाश्वत में	—	१५	१०१	३६
१५३ पञ्चान नपुंगक बाद में	१४	३८	१०१	—
१५४ त्रिषु लोक वचन योभी में	—	१३	१०१	३६
१५५ त्रिषु लोक पंचेन्द्रिय नपु. में	—	२०	१३१	—
१५६ त्रिषु लोक पंचेन्द्रिय शाश्वत में	—	१५	१०१	३६
१५७ पञ्चान नपुंगक बाद में	१४	३८	१०१	—
१५८ त्रिषु लोक वचन योभी में	—	१३	१०१	३६
१५९ त्रिषु लोक पंचेन्द्रिय नपु. में	—	२०	१३१	—
१६० त्रिषु लोक पंचेन्द्रिय शाश्वत में	—	१५	१०१	३६

१२२ कृष्ण लेशो वैक्रिय				
शरीर लो वेद में	०	५	१५	१०२
१२३ तीन औदारिक शास्त्र में	०	३७	८६	०
१२४ लक्षण समुद्र में प्राणेंद्रिय				
शास्त्र में	०	१२	११२	०
१२५ लक्षण समुद्र में तेजो लेशो में	०	१३	११२	०
१२६ मरने वाले गर्भज जीवों में	०	१०	११६	०
१२७ वैक्रिय शरीर मरने वालों में	७	६	१५	६६
१२८ देखियों में	०	०	०	१२८
१२९ एकान्त भगवती वादर में	०	२८	१०१	०
१३० लक्षण समुद्र तम विभ				
योगी में	०	१८	११२	०
१३१ मनुष्य नपुंसक वेदमें	०	०	१११	०
१३२ शास्त्र भिन्न योगी में	७	२१	१५	८५
१३३ मन योगी मरुतगु दृष्टि				
भगवत्यान अवस्थानों में	७	५	४५	७६
१३४ वादर औदारिक शास्त्र में	०	३३	१०१	०
१३५ प्रत्येक शरीरों में				
भगवती में	०	५	१	१
१३६ तीन भगवती शास्त्रों में	०	०	०	०
१३७ क्रिया वादर शास्त्र में	०	१	५१	८१
१३८ योगी मरुतगु दृष्टि	०	१	१	८१

१२२ कृष्ण लेशो वैक्रिय

शरीर स्त्री वेद में	०	५	१५	१०२
१२३ तीन औदारिक शाश्वत में	०	३७	८६	०
१२४ लवण समुद्र में प्राणेंद्रिय				
शाश्वत में	०	१२	११२	०
१२५ लवण समुद्र में तेजो लेशी में	०	१३	११२	०
१२६ मरने वाले गर्भव जीवों में	०	१०	११६	०
१२७ वैक्रिय शरीर मरने वालों में	७	६	१५	६३
१२८ देवियों में	०	०	०	१२८
१२९ एकान्त असंज्ञी वादर में	०	२८	१०१	०
१३० लवण समुद्र प्रस मिथ				
योगी में	०	१८	११२	०
१३१ भुष्ण नपुंसक वेदमें	०	०	१३१	०
१३२ शाश्वत मिथ योगी में	७	२४	१५	८५
१३३ मन योगी सम्यग् दृष्टि				
असंख्यात भववालों में	७	५	४५	७६
१३४ वादर औदारिक शाश्वत में	०	३३	१०१	०
१३५ प्रत्येक शरीरी एकान्त				
असंज्ञी में	८	३४	१०१	०
१३६ तीन लेश्या औदारिक शरीरमें	०	३५	१०१	०
१३७ क्रिया वादी अशाश्वत में	६	५	४५	८१
१३८ मन योगी सम्यग् दृष्टि में	७	५	४५	८१

१३८ औदारिक शरीर नो गर्भज में	० ३८	१०१	०
१४० कृष्ण लेशी अमर में	३ ०	८६	५१
१४१ अवधि दर्शन मरने वालों में	७ ५	३०	६६
१४२ पंचेन्द्रिय सम्यक् दृष्टि मरने वालों में	६ १०	४५	८१
१४३ एकांत नपुंसक बादर में	१४ २८	१०१	०
१४४ नो गर्भज शाश्वत में	७ ३८	०	६६
१४५ अपर्याप्त सम्यक् दृष्टि में	६ १३	४५	८१
१४६ व्रत नो गर्भज एकांत मि. में	१ ८	१०१	३६
१४७ लवण समुद्र के अभाषक में	— ३५	११२	—
१४८ स्त्री वेद वैक्रिय शरीर में	— ५	१५	१२८
१४९ संज्ञी एकांत मिथ्यात्वी में	१ —	११२	३६
१५० तिर्यक् लोक में वचन योगी में	— १३	१०१	३६
१५१ तिर्यक् लोक पंचेन्द्रिय नपुं. में	— २०	१३१	—
१५२ तिर्यक् लोक पंचेन्द्रिय शाश्वत में	— १५	१०१	३६
१५३ एकांत नपुंसक वेद में	१४ ३८	१०१	—
१५४ तेजो लेशी वचन योगी सम्यक् दृष्टि में	— ५	१०१	४८
१५५ तिर्यक् लोक में प्रत्येक—			
शर्गी बादर पर्याप्त में	— १८	१०१	३६
१५६ तिर्यक् लोक बादर पर्याप्त में	— १६	१०१	३६

१८४ मिथ्र योगी देवता वैक्रिय			
शरीर में	—	—	— १८४
१८५ कृष्ण लेशी सम्पद् दृष्टि में ५	१८	६०	७२
१८६ नील लेशी सम्पद् दृष्टि में ६	१८	६०	७२
१८७ अमापक मनुष्य एक			
संस्थानी में	—	—	१८७ —
१८८ विभंग ज्ञानी देवताओं में	—	—	— १८८
१८९ तिर्यक् लोक नो गर्भज व्रत में —	१६	१०१	७२
१९० लवण समुद्र चक्षु इन्द्रिय में —	२२	१६८	—
१९१ तिर्यक् लोक कृष्ण लेशी			
नो गर्भज में	—	३८	१०१ ५२
१९२ लवण समुद्र प्राखेन्द्रिय में —	२४	१६८	—
१९३ समुच्चय नहुंसक वेद में १४	७८	१३१	५२
१९४ लवण समुद्र व्रत जीवों में —	२६	१६८	—
१९५ सम्पद् दृष्टि वैक्रिय शरीर में १३	५	— १५	१६२
१९६ तेजो लेशी सम्पद् दृष्टि में —	१०	६०	६६
१९७ एक वेदी चक्षु इन्द्रिय में १४	१२	१०१	७०
१९८ एकांत मिथ्यात्वी अमापक में १	२२	१५७	१८
१९९ नो गर्भज वैक्रिय मिथ्र			
योगी में	१४	१	— १८४
२०० वचन योगी तीन शरीर में ७	८	८६	६६
२०१ एक वेदी व्रत में	१४	१६	१०१ ७०

२०२ नां गर्भज विमंग ज्ञानी मे	१४	-	-	१८८
२०३ नां गर्भज वैक्रिय शरीरी				
निध्यात्मी मे	१४	१	-	१८८
२०४ एकान्त निध्यात्व दृष्टि				
तीन शरीर मे	-	२८	१५७	१८८
२०५ एकान्त निध्यात्व दृष्टि				
मरने वालों मे	-	३०	१५७	१८८
२०६ तदय समुद्र बाहर मे	-	३८	१६८	-
२०७ मनयोगी निध्यात्मी मे	७	५	१०१	६४
२०८ अनेक भववाले अवाधि ज्ञान मे	१३	५	३०	१६०
२०९ समुच्चय संरुधात काल के				
अस मरने वालों मे	१	२६	१३१	५१
२१० एकान्त संतो निध्र योगी मे	१३	५	४५	१४७
२११ विरिक्त लोक नोर्गर्भ मे	-	३८	१०१	७२
२१२ मनयोगी जीवों मे	७	५	१०१	६८
२१३ एकान्त निध्यात्मी मनुष्य मे	-	-	२१३	-
२१४ निध्यात्मी वैक्रिय निध्र				
योगी मे	१४	६	१५	१७८
२१५ औदासिक नेत्रों से	-	१३	२०२	-
२१६ तदय समुद्र मे	-	४८	१६८	-
२१७ अवन योगी पवेन्द्रिय मे	७	१०	१०१	६८
२१८ अम वैक्रिय निध्र मे	१४	५	१५	१८८

२१६ वैक्रिय मिथ्र में	१४	६	१५	१८४
२२० वचन योगी में	७	१३	१०१	६६
२२१ अचरम बादर पर्याप्त में	३	१६	१०१	६४
२२२ पंचेन्द्रिय शाश्वत में	७	१५	१०१	६६
२२३ वैक्रिय मिथ्यात्वी में	१४	६	१५	१८८
२२४ चक्षु इन्द्रिय शाश्वत में	७	१७	१०१	६६
२२५ प्रत्येक शरीर बादर पर्याप्त में	७	२८	१०१	६६
२२६ औदारिक शरीरी अपर्याप्त में	—	२४	२०२	—
२२७ नोर्गर्भज बादर अमापक में	७	२०	१०१	६६
२२८ व्रस शाश्वत में	७	२१	१०१	६६
२२९ प्रत्येक शरीरी पर्याप्त में	७	२२	१०१	६६
२३० व्रस औदारिक शरीरी अमापक में	—	१३	२१७	—
२३१ पर्याप्त जीवों में	७	२४	१०१	६६
२३२ पंचेन्द्रिय औदारिक मिथ्र योगी में	—	१५	२१७	—
२३३ वैक्रिय शरीर में	१४	६	१५	१६८
२३४ औदारिक मिथ्र योगी प्रायेन्द्रिय में	—	१७	२१७	—
२३५ औदारिक मिथ्र योगी व्रम में	—	१८	२१७	—
२३६ मनुष्य की आगति नो गर्भज में	६	३०	१०१	६६
२३७ औदारिक शरीरी पंचेन्द्रिय मग्ने जानों में	—	२०	२१७	—

२३= प्रत्येक शरीरी वादर

शाश्वत में

७ ३१ १०१ ६६

२३६ समष्टि मिश्र योगी में

१३ १२ ६० १४२

२४० शाश्वत वादर में

७ ३३ १०१ ६६

२४१ प्रत्येक शरीरी नो गर्भज

मरने वालों में

७ ३४ १०१ ६६

२४२ वादर औदारिक मिश्र योगी में — २५ २१७ —

२४३ औदारिक एकान्त

मिथ्यात्वी में

— ३० २१३ —

२४४ तीन शरीर नो गर्भज मरने

वालों में

७ ३७ १०१ ६६

२४५ संमूर्द्धिम असंज्ञी वस्तु में

१ २१ १७२ ५१

२४६ प्रत्येक शरीरी शाश्वत में

७ ३६ १०१ ६६

२४७ अवधि दर्शन में

१४ ५ ३० १६२

२४८ तिर्यक पंचेन्द्रिय अपर्याप्त में — १० २०२ ३६

२४९ तिर्यक चक्षुःन्द्रिय

अपर्याप्त में

— ११ २०२ ३६

२५० नव्य सिद्धि शाश्वत में

७ ४३ १०१ ६६

२५१ तिर्यक वस्तु अपर्याप्त में

— १३ २०२ ३६

२५२ औदारिक अनापक में

— ३५ २१७ —

२५३ मिश्र योगी मरने वालों में ७ ३० १३१ २५

२५४ त्रि वेद मिश्र योगी में — १० ११६ १२२

२५५ पंचेन्द्रिय एकान्त मिथ्यात्वी में	१	५	२१३	३६
२५६ चक्षु इन्द्रिय एकान्त मिथ्यात्वी में	१	६	२१३	३६
२५७ घ्राणेन्द्रिय एकान्त मिथ्यात्वी	१	७	२१३	३६
२५८ द्रव्य एकान्त मिथ्यात्वी में	१	८	२१३	३६
२५९ धर्म देव की भागति के घ्राणेन्द्रिय में	५	२४	१३१	६६
२६० पंचेन्द्रिय तीन शरीरी सम्यक् दृष्टि में	१३	१०	७५	१६२
२६१ कृष्ण लेशी अशाश्वत में	१	५	२०२	५१
२६२ पुरुष वेदी सम्यक् दृष्टि में	—	१०	६०	१६२
२६३ प्रत्येक शरीरी समुच्चय असंज्ञी में	१	३६	१७२	५१
२६४ तिर्यक् लोक कृष्ण लेशी स्त्री-वेद में	—	१०	२०२	५२
२६५ औदारिक शरीर मरने वालों में	—	४८	२१७	—
२६६ पंचेन्द्रिय कृष्ण लेशी अनहारी में	३	१०	२०२	५१
२६७ चक्षु इन्द्रिय कृष्ण लेशी अनाहारी में	३	११	२०२	५१

२६८ एक दृष्टि प्रभु काय में	१	=	२१३ ४६
२६९ तिर्यक् कृष्ण लेशी प्रस मरने वालों में	—	२६	२१७ २६
२७० यादर एकान्त मिध्यात्वी में	१	२०	२१३ ३६
२७१ मनुष्य की आगति के मिध्यात्वी में	६	४०	१३१ ६४०
२७२ मनुष्य की आगति के प्रत्येक शरीरी में	६	३६	१३१ ६६
२७३ नील लेशी एकांत मिध्यात्वी में	०	३०	२१३ ३०
२७४ कृष्ण लेशी मिध्यात्वी में	१	३०	२१३ ३०
२७५ क्रिया वादी समोत्तरण में	१३	१०	६० १६२
२७६ मनुष्य की आगति में	६	४०	१३१ ६६
२७७ धार लेरया वालों में	०	३	१७२ १०२
२७८ तिर्यक् लोक यादर अनापक में	०	२४	२१७ ३७
२७९ चतुर्दश सम्प्रदाय अनेक भव वालों में	१३	१६	६० १६०
२८० चतुर्दश सम्प्रदाय दृष्टि में	१३	१४	६० १६२
२८१ चतुर्दश दृष्टि में	१३	१६	६० १६२
२८२ दश दृष्टि में	१३	१७	६० १६२
२८३ दश दृष्टि में	१६	१०	६० १६०
२८४ दश दृष्टि में	१०	१०	६० ६०
२८५ दश दृष्टि में	१०	१०	६० ६०
२८६ दश दृष्टि में	१०	१०	६० ६०
२८७ दश दृष्टि में	१०	१०	६० ६०
२८८ दश दृष्टि में	१०	१०	६० ६०
२८९ दश दृष्टि में	१०	१०	६० ६०
२९० दश दृष्टि में	१०	१०	६० ६०

२८६	प्रायेन्द्रिय एक संस्थान				
	भौदागिक में	०	१३	२७३	०
२८७	तिर्यक् तेषां लेशी में	०	१३	२०२	७२
२८८	तीन शरीरी मनुष्य में	०	०	२८८	०
२८९	ग्रस एक संस्थान भौदागिक में	०	१६	२७३	०
२९०	एक दृष्ट वाले जीवों में	१	३०	२१३	४३
२९१	तिर्यक् लोक कृष्ण लेशी				
	मरने वालों में	०	४८	२१७	२६
२९२	जपन्य अन्तर्गृह्य उत्कृष्ट	२			
	सागर १ संठाण्य मरने वालों में	२	३८	१८७	६५
२९३	चक्षु इन्द्रिय कृष्ण लेशी मरने				
	वालों में	३	२२	२१७	५१
२९४	नो गर्मत्र की आगति के				
	कृष्ण लेशी ग्रस में	०	२६	२१७	५१
२९५	प्रायेन्द्रिय कृष्ण लेशी				
	मरने वालों में	३	२४	२१७	५१
२९६	एकांत संज्ञी में	१३	५	१३१	१४७
२९७	ग्रस कृष्ण लेशी मरने वालों में	३	२६	२१७	५१
२९८	पंचेन्द्रिय पर्याप्त एक संस्थानी में	७	५	१८७	६६
२९९	चक्षु इन्द्रिय पर्याप्त एक संस्था में	७	६	१८७	६६
३००	स्त्री वेद पर्याप्त एक संस्थानी में	०	०	१७२	१२८
३०१	एक संस्थानी भौदागिक वादर में	२८	२७३		—

३०२ ब्राह्मेन्द्रिय एक संस्थानी				
अचरम मरने वालों में	७	१४	१२७	६४
३०३ मनुष्य में	—	—	३०३	—
३०४ नो गर्भज पंचेन्द्रिय मिथ				
योगी में	१४	५	१०१	१२४
३०५ सम्यक्० आगति कृष्ण				
लेशी बादर में	३	३४	२१७	५१
३०६ त्रियक् ब्राह्मेन्द्रिय मिथ योगी में०	१७	२१७	७२	
३०७ त्रियक् व्रत मिथ योगी में	—	१२	२१७	७२
३०८ अशाश्वत मिथ्यात्वी में	७	५	२०२	६४
३०९ सम्यक् आगति एक				
संस्थानी व्रत में	७	१६	१२७	६६
३१० औदारिक तीन शरीरी एक				
संस्थानी में	—	३७	२७३	—
३११ औदारिक एक संस्थानी में	—	३२	२७३	—
३१२ नो गर्भज की आगति कृष्ण				
तीन शरीरी	—	७३	२१७	५२
३१३ अशाश्वत में	७	५	२०२	६६
३१४ कृष्ण लेशी स्त्री वेद में	—	१०	२०२	१०२
३१५ प्र० तीन शरीरी कृष्ण.				
मरने वालों में	३	४४	२१७	५१
३१६ व्रत अनाहारी अचरम में	३	१३	२०२	६४

३१७ नो गर्भत्र प्राणो, मिथ्या, में	१४	१४	१०१	१८८
३१८ ओत्रेन्द्रिय अपर्याप्त में	■	१०	२०२	६६
३१९ कृष्ण लेखी मरने वालों में	३	४८	२१७	५१
३२० तीन शरीरी स्त्री वेद में	—	५	१८७	१२८
३२१ व्रत अपर्याप्त में	७	१३	२०२	६६
३२२ वादर अनाहारी अचरम में	७	१६	२०२	६४
३२३ नो गर्भत्र पंचेन्द्रिय में	१४	१०	१०१	१८८
३२४ तीन शरीरी व्रत मिथ्या, में	७	२१	२०२	६४
३२५ औदारिक चक्षु इन्द्रिय में	—	२२	३०३	—
३२६ मिथ्यास्त्री एक संस्थानी मरने वालों में	७	३८	१८७	६४
३२७ नो गर्भत्र प्राणेन्द्रिय में	१४	१४	१०१	१८८
३२८ वादर मभापक अचरम में	७	२५	२०२	६४
३२९ औदारिक व्रत में	—	२६	३०३	—
३३० औदारिक एकान्त मयधारणी देव	—	४२	२८८	—
३३१ नो गर्भत्र व दार मिथ्या, में	१४	२८	१०१	१८८
३३२ व्रत एकान्त मंथ्या काल की स्थिति वाले में	७	२४	२०२	६६
३३३ चक्षु इन्द्रिय एक संस्थानी	७	२०	२०७	६६
३३४ निर्यक्त अघो लोक की स्त्री में	—	१०	२०२	१२२
३३५ व जेन्द्रिय एक संस्थानी स्थिति वाले में	७	२०	२०७	६६

३५४ मिथ्या० एकान्त संस्था०

स्थिति में ७ ४३ २०७ ६४

३५५ तिर्यक् लोक पंचेन्द्रिय एक

संस्थानी — १० २७३ ७१

३५६ वादर मिथ्या० मरने वालों में ७ ३८ २१७ ६४

३५७ सम्य० आगति के वादर में ७ ३४ २१७ ६६

३५८ अभावक जीवों में ७ ३५ २१७ ६६

३५९ तिर्यक् प्राणेंद्रिय एक

संस्थानी में — १४ २७३ ७२

३६० " प्रस " ० १० २०२ १४८

३६१ ऊर्ध्व, तिर्यक्, पुरुष पद में ० १६ २७३ ७२

३६२ प्र, शरीरी मिथ्या, मरने

वालों में ७ ४४ २१७ ६४

३६३ सम्य, आगति में ७ ४० २१७ ६६

३६४ नो गर्भज की गति के

वादर तीन शरीर में २ ३२ २२८ १०२

३६५ ज, अं, उ, २६ सागर की

स्थिति के मरने वालों में ७ ४८ २१७ ६३

३६६ मिथ्या, मरने वालों में ७ ४८ २१७ ६४

३६७ प्र, शरीरी मरने वालों में ७ ४४ २१७ ६६

३६८ पुरुष एक संस्था, अनेक

भववालों में — — १७२ १६६

३६६ अधी, तिर्य, चक्षु, मिथ्र योगी में	१४	१६	२१७	१२२
३७० कृष्ण लेशी संख्या, स्थिति				
बालों में	३	४८	२१७	१०२
३७१ समुच्चय मरने वालों में	७	४८	२१७	६६
३७२ तिर्य, कृष्ण, तीन शरीरी				
बादर में	—	३२	२८८	५२
३७३ तिर्य, बादर एक संस्थानी में—	२८	२७३	७२	
३७४ अ, ति, बादर कृष्ण				
एकान्त भव धारणी देह	३	३२	२८८	५१
३७५ तिर्य, पंचेन्द्रिय कृष्ण लेशी में—	२०	३०३	५२	
३७६ एक संस्थानी मिथ्र योगी				
पंचेन्द्रिय अनेरियों में	—	५	१८७	१८४
३७७ तिर्य, चक्षु, कृष्ण लेशी में	—	२२	३०३	५२
३७८ बुद्धपर की गति के पंचे,				
तीन शरीरी	४	१०	२०२	१६२
३७९ तिर्य, प्राणेंद्रिय कृष्ण लेशी —	२४	३०३	५२	
३८० पुरुष तीन शरीरी अचरम में —	५	१८७	१८८	
३८१ तिर्य, वन कृष्ण लेशी में —	२६	३०३	५२	
३८२ " तीन शरीरी कृष्ण लेशी में —	४२	२८८	५२	
३८३ तिर्य, एक संस्थानी में	—	३८	२७३	७२
३८४ मर्त्री	११	—	१७२	११८
३८५ नागध्वज की गति के बादर में	२	३८	२४३	१०२

४१८ कृष्ण लेखी एक संस्थानी में	६ ३८	२७३	१०२
४१९ स्त्री गति कृष्ण, एक संस्थानी ४	३८	२७३	१०२
४२० मिथ्र योगी बादर एकान्त असंयम में	१४ २०	२०२	१८४
४२१ स्त्री गति अप्रशस्त लेखी प्र. शरीर एक संस्था,	१२ ३४	२७३	१०२
४२२ स्त्री गति के संज्ञी में	१२ १०	२०२	१६८
४२३ समुच्चय संज्ञी में	१४ २३	२०२	१८४
४२४ प्र. शरीरी मिथ्र योगी एकान्त असंयम में	१४ १०	२०२	१६८
४२५ मिथ्र योगी एकान्त अप्रचक्षुष्यी में	१४ २५	२०२	१८४
४२६ कृष्ण लेखी प्र. तीन शरीरी में	६ ३०	२८८	१०२
४२७ अप्रशस्त लेखी एक संस्थानी	१४ ३८	२७३	१०२
४२८ कृष्ण लेखी बादर तीन शरीरी	६ ३२	२८८	१०२
४३९ " " " एकान्त असंयम में	६ ३३	२८८	१०२
४३० स्त्री गति के प्रस मिथ्र अनेक मव बाले	१२ १८	२१७	१८३
४३१ " " " मिथ्र्या.	१२ १८	२१७	१८३
४३२ प्रस मिथ्र योगी संस्था मव बाले	१४ १८	२१७	१८३

४३३	" "	१४ १८	२१७ १८४
४३४	कृ.. प्र. तीन शरीरी में	६ ३८	२८८ १०२
४३५	मिश्र योगी वा. मिथ्या.	१४ २५	२१७ १८८
४३६	वा. तीन शरीरी अप्रशस्त लेशी	१४ ३२	२८८ १०२
४३७	वा. एकान्त अपच. अप्र. शस्त लेशी	१४ ३३	२८८ १०२
४३८	कृष्ण. तीन शरीरी	६ ४२	२८८ १०२
४३९	" एकान्त अपच.	६ ४३	२८८ १०२
४४०	मिश्र योगी वादर	१४ २५	२१७ १८४
४४१	अघो. ति. के चतु. तीन शरीरी में	१४ १७	२८८ १२२
४४२	प्र. तीन श. अप्रशस्त लेशी	१४ ३८	२८८ १०२
४४३	प्र. मिश्र योगी	१४ २८	२१७ १८४
४४४	प्र. एकान्त भव घा. देह अनेक भववाले	७ ३८	२८८ १११
४४५	अघो ति. तीन शरीरी वस मिश्रयोगी में	१४ २१	२८८ १२२
४४६	अप्र. लेश्या तीन शरीरी	१४ ४२	२८८ १०२
४४७	एकान्त अभयम अप्र- शस्त लेशी	१४ ४३	२८८ १०२
४४८	भव घा. देह अनेक भववाले	७ ४०	२८८ १११

४४६ स्त्री गति के एकान्त मव देह	६ ४२	२८८	११३
४४७ मव सिद्धि एकांत मव. देह	७ ४२	२८८	११३
४४८ ऊपर की गति कु० प्र०			
तीन शरीर	२ ४४	३०३	१०२
४४९ भुज पर गति अधो० ति०			
प्र० तीन शरीर	४ ३८	२८८	१२२
४५० स्त्री० गति कु० प्र० शरीरी	४ ४४	३०३	१०२
४५१ उर्ध्व ति० एकांत छद्म० पं०			
अनेक मव में	० २०	२८८	१४६
४५२ कुण्ड० प्र० शरीरी	६ ४४	३०३	१०२
४५३ अधो. ति. तीन शरीरी बादर	१४ ३२	२८८	१२२
४५४ अप्रशुस्त लेशी बादर	१४ ३८	३०३	१०२
४५५ उर्ध्व. ति. के एक संस्थानीमें	० ३८	२७१	१४८
४५६ " " एकांत छपत्य चक्षु०	२२	२८८	१४८
४५७ " " " " प्राण०	० २४	२८८	१४८
४५८ अधो. " के चक्षु	१४ २२	३०३	१२२
४५९ " " प्राण०	१४ २४	३०३	१२२
४६० " " बादर एकांत छ० में	१४ ३८	२८८	१२२
४६१ " " ब्रह्म	१४ २६	३०३	१२२
४६२ स्त्री गति के अधो० ति०			
तीन शरीरी	१२ ४२	२८८	१२२
४६३ अधो ति० तीन शरीरी	१४ ४२	२८८	१२२

४८६ भुज पर गति के तीन

शरीरी बादर

४ ३२ २८८ १६२

४८७ अधो. तिर्य. लोक में

१४ ४८ ३०३ १२२

४८८ खेचर " " "

६ ३२ २८८ १६२

४८९ उर्ध्व. तिर्य. बादर में

— ३८ ३०३ १४८

४९० स्थल चर " " "

८ ३२ २८८ १६२

४९१ खेचर गति पंचेन्द्रिय में

६ २० ३०३ १६२

४९२ उरपर " " "

१० ३२ २८८ १६२

४९३ उर्ध्व. " प्र. शरीरी अनेक

भव वालों में

— ४४ ३०३ १४६

४९४ खेचर " प्र. " "

६ ३८ २८८ १६२

४९५ " " " में

— ४४ ३०३ १४८

४९६ भुज पर गति के तीन शरीरी में

४२ २८८ १६२

४९७ खेचर " व्रत में

६ २६ ३०३ १६२

४९८ " " तीन शरीरी में

६ ४२ २८८ १६२

४९९ " " में

— ४८ ३०३ १४८

५०० स्थल चर " " "

८ ४२ २८८ १६२

५०१ व्रम एक भस्थानी में

१४ १६ २७३ १८८

५०२ उर पर गति तीन शरीरी में

१० ४२ २८८ १६२

५०३ " " पंचेन्द्रिय में

१४ २४ ३०३ १६२

५०४ खेचर " एकान्त अवस्थ में

६ ४८ २८८ १६२

५०५ निच. " व्रत में

१४ ०६ ३०३ १६२

५०६ संज्ञा वि. ,, तीन शरीरी में	१४	४२	२००	१६२
५०७ अन्तर्दीप के पर्याप्त के				
अलक्षित में	१४	४२	२४७	१६२
५०८ दरपर ,, एकान्त सङ्काय में	१०	४२	२००	१६२
५०९ स्थल चर ,, प्र. शरीरी				
बाहर में	=	३६	३०३	१६२
५१० विर्यधरी गति के एकान्त				
संयोगी में	१२	४२	२००	१६२
५११ एक संस्थान प्र. शरीरी				
बाहर में	१४	२६	२७३	१६२
५१२ विर्यधरी " " " "	१४	४२	२००	१६२
५१३ एक संस्थान मिश्रित में	१४	३०	२७३	१००
५१४ मध्य जीवों का स्वरूप करने				
बाले एकान्त दृष्ट चतु	१४	२२	२००	२६०
५१५ विर्यधरी गतिके बाहर में	१२	३०	३०३	१६२
५१६ " " " " " "				
" " " " " "	१४	२४	२००	१६०
५१७ " " " " " "				
बाहर में	१४	३०	३०३	१६२
५१८ विर्यधरी गतिके बाहर में	१२	३०	३०३	१६२
५१९ " " " " " "				
" " " " " "	१४	२४	२००	१६०
५२० " " " " " "				
बाहर में	१४	३०	३०३	१६२
५२१ विर्यधरी गतिके बाहर में	१२	३०	३०३	१६२
५२२ " " " " " "				
" " " " " "	१४	२४	२००	१६०
५२३ " " " " " "				
बाहर में	१४	३०	३०३	१६२
५२४ विर्यधरी गतिके बाहर में	१२	३०	३०३	१६२
५२५ " " " " " "				
" " " " " "	१४	२४	२००	१६०
५२६ " " " " " "				
बाहर में	१४	३०	३०३	१६२
५२७ विर्यधरी गतिके बाहर में	१२	३०	३०३	१६२
५२८ " " " " " "				
" " " " " "	१४	२४	२००	१६०
५२९ " " " " " "				
बाहर में	१४	३०	३०३	१६२
५३० विर्यधरी गतिके बाहर में	१२	३०	३०३	१६२

५२० पंचे० " " सकृपाय में	१४ २०	२८८	१६८
५२१ चक्षु " " अंतयम में	१४ १७	२८८	१६८
५२२ एकान्त सकृपाय चक्षु	१४ २२	२८८	१६८
५२३ " अनेक भव वालों में	१४ ३८	२७३	१६८
५२४ " " प्राण	१४ २४	२८८	१६८
५२५ पंचेन्द्रिय मिथ्यास्वी में	१४ २०	३०३	१८८
५२६ " " व्रत में	१४ २६	२८८	१६८
५२७ तिर्यच गति में	१४ ४८	३०३	१६२
५२८ एकान्त छत्र वा मिथ्या	१४ ३८	२८८	१८८
५२९ स्त्री गति के व्रत "	१२ २६	३०३	१८८
५३० उत्कृष्ट जीव का भेद			
वादर प्र० शरीर एकांत छत्र०	१४ ३६	२८८	१६२
५३१ " पंचे० संख्या० भव०	१२ २०	३०३	१६६
५३२ तीन शरीरी वादर में	१४ ३२	२८८	१६८
५३३ एकान्त अंतयम वादर में	१४ ३३	२८८	१६८
५३४ " छत्र० अभव्य० प्र०			
शरीरी	१४ ४४	२८८	१६८
५३५ पंचेन्द्रिय जीवों में	१४ २०	३०३	१६८
५३६ स्त्री गति के वा० एकान्त			
सकृपाय में	१२ ३८	२८८	१६८
५३७ " प्राणोन्द्रिय में	१२ २४	३०३	१६८
५३८ " तीन शरीरी में	१२ ४२	२८८	१६८

५३६ प्राणेन्द्रिय में	१४ २४	३०३	१८=
५४० एकान्त छद्म वादर में	१४ ३८	२८=	१८=
५४१ त्रस जीवों में	१४ २६	३०३	१८=
५४२ तीन शरीरी एकान्त छद्म.	१४ ४२	२८=	१८=
५४३ एकान्त अभेद्यम में	१४ ४३	२८=	१८=
५४४ प्र. श. एकान्त छद्म.	१४ ४४	२८=	१८=
५४५ सम्य. ति. अलद्विया में	१४ ३०	३०३	१८=
५४६ एकान्त छद्म. अनेक मववालों में	१४ ४८	२८=	१८६
५४७ त्रौ गति प्र. श. मिथ्या.	१२ ४४	३०३	१८=
५४८ एकान्त छद्मस्थ में	१४ ४८	२८=	१८=
५४९ मिथ्या. प्र. शरीरी में	१४ ४४	३०३	१८=
५५० सम्य. नरक के अलद्विया	१ ४८	३०३	१८=
५५१ त्रौ गति मिथ्या.	१२ ४८	३०३	१८=
५५२ एकेन्द्रिय पर्याप्त का अलद्विया	१४ ३७	३०३	१८=
५५३ मिथ्यात्वी	१४ ४८	३०३	१८=
५५४ नव प्रिय वेक पर्याप्त के अलद्विया	१४ ४८	३०३	१८=
५५५ जीवों के मध्य भेद स्पर्शन वाले	१४ ४८	३०३	१८=
५५६ नरक पर्याप्त के अलद्विया	३ ४८	३०३	१८=

❀ चार कषाय ❀

सूत्र श्री पन्नवणार्जी के पद चौदहवें में चार कषाय का थोकड़ा चला है उसमें श्री गौतम स्वामी वीर भगवान से पूछते हैं कि " हे भगवन् ! कषाय कितने प्रकार की होती है ? " भगवान कहते हैं कि ' हे गौतम ! कषाय १६ प्रकार की होती है ' १ अपने लिये २ दूसरे के निमित्त ३ तदुभया अर्थात् दोनों के लिये ४ खेत अर्थात् खुली हुई जमीन के लिये ५ वस्थु कहेतां ढंकी हुई जमीन के लिये ६ शरीर के निमित्त ७ उपाधि के लिये - निरर्थक ८ जानता १० अजानता ११ उपशान्त पूर्वक १२ अनुपशान्त पूर्वक १३ अनन्तानुबन्धी क्रोध १४ अप्रत्याख्यानी क्रोध १५ प्रत्याख्यानी क्रोध १६ संज्वालन का क्रोध एवं १६ वें समुच्चय जीव आश्री और ऐसेही चौबीस दण्डक आश्री दोनों का इस प्रकार गुणा करने से (१६×२५) ४०० हुवे, अब कषाय के दलिया कहते हैं, चणीया, उपचणीया, वान्ध्या, वेद्या, उदीरिया, निर्जया एवं ६ ये भूत काल वर्तमान काल और भविष्य काल आश्री एवं ६ और ३ का गुणाकार करने से (६×३) १८ हुवे ये १८ एक जीव आश्री और १८ बहु जीव आश्री ३६ हुए ये समुच्चय जीव आश्री और चौबीस दण्डक आश्री एवं (३६×२५) ९०० हुए ४०० ऊपर के और ९०० के

एवं १३०० क्रोध के, १३०० मान के, १३०० माया के,
और १३०० लोभ के एवं ५२०० होते हैं ।

॥ इति चार कपाय सम्पूर्ण ॥



ॐ श्वासोश्वास ॐ

सूत्र श्री पञ्चव्याजी के पद सातवें में श्वासोश्वास का धोक्का चला है उसमें गौतम स्वामी वीर प्रभु से पूछते हैं कि हे भगवन् ! नेरिये और देवता किस प्रकार श्वासो-श्वास लेते हैं ? वीर प्रभु उत्तर देते हैं कि हे गौतम ! नारकी का जीव निरन्तर धमण के समान श्वासोश्वास लेता है असुर कुमार का देवता जघन्य सात धोक उत्कृष्ट एक पच जाजेरा श्वासो-श्वास लेते हैं वाण व्यन्तर और नव-निकाय के देवता जघन्य सात धोक उत्कृष्ट प्रत्येक मुहूर्त में ज्योतिषी ज० उ० प्रत्येक मुहूर्त में पहला देवलोक का जघन्य प्रत्येक मुहूर्त में उ० दो पच में दूसरे देवलोक का ज० प्रत्येक मुहूर्त जाजेरा उ० दो पच जाजेरा तीसरे देव-लोक का ज० दो पच में उ० सात पच में चौथे देवलोक का ज० दो पच जाजेरा उ० सात पच जाजेरा पांचवें देवलोक का ज० सात पच में उ० दश पच में छठे देवलोक का ज० दश पच में उ० चौदह पच में सातवें देवलोक का ज० चौदह पच में उ० सतरह पच में आठवें देवलोक का ज० सतरह पच में उ० अठारह पच में नववें देवलोक का ज० अठारह पच में उ० उन्नीश पच में दशवें देवलोक का ज० उन्नीश पच में उ० बीस में इग्यारहवें देवलोक का ज० बीस पच में उ० एकवीश पच में बरहवें देवलोक का

ज० एकवींश पद्य में उ० बावींश पद्य में पहली त्रिक का
 ज० बावींश पद्य में उ० पच्चींश पद्य में दूसरी त्रिक का
 ज० पच्चींश पद्य में उ० अठावींश पद्य में तीसरी त्रिक
 का ज० अठावींश पद्य में उ० एकतींश पद्य में, चार
 अनुष्ठान विधान का ज० एकतींश पद्य में उ० तैतींश पद्य
 में सार्धं सिद्ध का ज० और उ० तैतींश पद्य में एव ३३
 पद्य में आग ऊँचा लेते हैं और ३३ पद्य में स्वास नीचे
 छोड़ते हैं ।

॥ इति आसो आस सम्पूर्ण ॥



प्रतिपदा (११) प्रातः काल (१२) संध्या काल (१३)
 मध्याह्न काल (१४) मध्य रात्रि (१५) अग्नि प्रकट
 होने पर समय, और (१६) आकाश में धूल चने का
 समय अर्थात् धूल से धर्म का प्रकाश मंद होजाये वह
 अस्वास्थ्य होती है ।

॥ इति अस्वास्थ्य सम्पूर्ण ॥



प्रतिपदा (११) प्रातः काल (१२) संध्या काल (१३)
 मध्याह्न काल (१४) मध्य रात्रि (१५) अग्नि प्रकट
 होने वह समय, और (१६) आकाश में धूल चड़े वह
 समय अर्थात् भूत में धूल का प्रकाश मंद होजावे वह
 अशुभवाय होती है ।

॥ इति अष्टाध्याय सम्पूर्ण ॥

ॐ ३२ सूत्रों के नाम ॐ

११ अङ्गों के नाम-१ आचाराङ्ग २ सूत्रकृताङ्ग
३ स्थानाङ्ग ४ समवायाङ्ग ५ भगवती (विगाइ प्रज्ञाति)
६ ज्ञाता (धर्म कथा) ७ उपासक दशाङ्ग = अन्तकृताङ्ग
(अन्तगङ्ग) ८ अनुचरोपपातिक ९ प्रश्न व्याकरण
दशाङ्ग ११ विपाक ।

१२ उपाङ्ग के नाम-१ उपसातिक (उववाई)
२ रात्रप्ररनीय ३ जीवान्निगम ४ प्रज्ञापना ५ जम्बू द्वीप
प्रज्ञाति ६ चन्द्र प्रज्ञाति ७ सूर्य प्रज्ञाति = निरया वल्लिका
८ कन्य वल्लिका ९ पुष्पिका ११ पुष्पवल्लिका १२
वृष्णि दशा ।

चार नृत्त सूत्र-१ दश वैकालिक २ उत्तरा ध्यान
३ नंदि ४ अनुयोग द्वार ।

चार वेद सूत्र-१ वृश् कन्य २ व्यवहार ३ दिगीय
४ दशाश्रुत स्तम्भ ।

वर्त्तमानां सूत्र-आवश्यक सूत्र ।

॥ इति ३२ सूत्रों के नाम सम्पूर्ण ॥



❧ अपर्याप्ता तथा पर्याप्ता द्वार ❧

शिष्य (विनय पूर्वक नमस्कार करके पूछता है)
हे गुरु ! जीव तत्त्व का बोध देते समय आपने कहा कि
जीव उत्पन्न होते समय अपर्याप्ता तथा पर्याप्ता कहलाता
है । तो यह कैसे ? कृपा करके मुझे यह समझाइये ।

गुरु-हे शिष्य ! जीव यह राजा है । आहार शरीर,
इन्द्रिय, आसो आस, माया और मन ये ६ प्रजा हैं और
ये चारों गति के जीवों को लगू रहने से ५६३ भेद माने
जाते हैं । इनमें पहली आहार पर्याप्ति लगू होती है ।
यह इस प्रकार से है कि जब जीव का आयुष्य पूर्ण होवे
तब वह शरीर छोड़ कर नई गति की योनि में उत्पन्न
होने को जाता है । इसमें अविग्रह गति अर्थात् सीधी व
सरल बन्धन का आया हुआ होवे वो जीव जिस समय
आया हुआ होवे उसी समय में आकर उत्पन्न होता है
उस जीव को आहार का अन्तर पड़ता नहीं इस प्रकार
का बन्धन वाला जीव " सीए आहारिण " अर्थात्
सदा आहारिक कहलाता है । ऐसा मगरती सूत्र का
न्याय है ।

अब दूसरा प्रकार विग्रह गति का बन्धन बन्धन कर
आने व ले जीवों का कहा जाता है । इनके तीन प्रकार
कितनेक जीव शरीर छोड़ने के बाद एक समय के अन्तर

रूप फूल में सुगन्ध की तरह जीद रह सकते हैं । यह दूसरी शरीर पर्याप्ति कहलाती है इस आकृति को बान्धने में एक अन्तर्मुहूर्त लगता है (२) इस शरीर के दृढ बन जाने पर उसमें इन्द्रियों के अवयव प्रगट होते हैं । ऐसा होने में अन्तर्मुहूर्त का समय लगता है यह तीसरी इन्द्रिय पर्याप्ति कहलाती है । (३) उक्त शरीर तथा इन्द्रिय दृढ होने पर प्रथम रूप से एक अन्तर्मुहूर्त में पवन की धमण शुरू होती है यही सं उस जीव के आयुष्म की गणना की जाती है यह चौथी आयुष्म पर्याप्ति कहलाता है (४) पश्चात् एक अन्तर्मुहूर्त में नाद पैदा होता है । यह पाँचवीं भाषा पर्याप्ति कहलाती है (५) उपरोक्त पाँच पर्याप्ति के समय पर्यन्त मन अक भी मचलती होती है । उनमें से मन स्फुरण हो कर सुगन्ध की तरह बाहर आता है उसमें से शरीर की स्थिति के प्रमाण में सूजन रीति में अशुभ वृद्धियों के सब कण आकर्षित करने योग्य शक्ति प्राप्त होती है । यह छठा मन पर्याप्ति कहलाती है (६) उक्त रीति से ६ अन्तर्मुहूर्त में ६ पर्याप्ति का बन्ध होता है यह मन का स्थिति का सूझा देती है कि आग्रहार ६ पर्याप्ति का बन्ध होने में एक अन्तर्मुहूर्त चलता है यह कैसे ?

गुरु-देव-मः नामा सुहृन् दा यकी का होता है ।

इस ०६ की बट है । अन्तर् अन्तर्मुहूर्त के अन्तर् अन्तर्मुहूर्त में १-६२ ०६ १११ बट है दा समय में जवा का

कर रहे तब उसे लब्धि पर्याप्ता कहते हैं । एवं करण तथा लब्धि पर्याप्ता के चार भेद होते हैं ।

शिष्य-हे गुरु ! जो जीव मरता है वो अपर्याप्ता में मरता है अथवा पर्याप्ता में ?

गुरु-हे शिष्य ! जब तीसरी इन्द्रिय पर्या पान्ध कर जीव करण पर्याप्ता होता है तब मृत्यु प्राप्त कर सकता है । इस न्याय से पर्याप्ता हो कर मरण पाता है । परन्तु करण अपर्याप्ता होने कोई जीव मरण पावे नहीं । वैसे ही दूसरे प्रकार से अपर्याप्ता होने का मरण कहने में आता है यह लब्धि अपर्याप्ता का मरण समझना । यह इस तरह से कि चार वाला तीसरी, पांच वाला तीसरी चौथी, और छः वाला तीसरी चौथी और पांचवी पर्या पूरी बन्धने के बाद मरण पाते हैं । अब दूसरे प्रकार से अपर्याप्ता व पर्याप्ता इसे कहते हैं कि जिस जीव को जितनी पर्या प्राप्त हुई अर्थात् बन्धी उस को उतनी पर्या का पर्याप्ता कहते हैं । और जो बन्धना बाकी रही उसे उसका अपर्याप्ता अर्थात् उतनी पर्या की प्राप्ति नहीं हो सकती यह भी कह सकते हैं ।

ऊपर बताये दूरे अपर्याप्ता और पर्याप्ता के भेदों का अर्थ समझ कर गर्भज, नो गर्भज और एकेन्द्रिय आदि असंख्य पंचन्द्रिय जीवों को ये भेद लागू करने से जीव तत्त्व के

५३३ मेद अवधार नव मे गितने मे आते हैं और वे सब
 के विनाश के अंत हैं इसमें जीवों की २४ तब योनियों
 का प्रवाह होता है । योनियों में बार बार उत्पन्न होना,
 जन्म लेना व मरण पाना आदि को संसार समुद्र के लान
 से समझाते हैं और है यह सब समुद्रों से अनन्त गुणा बड़ा
 है । इस संसार समुद्र के पार करने के लिये बने रूपा नाव
 है, व इसके नाविक (नाव को चलाने वाले) ब्राह्मण
 हैं । इनका नाव उत्कृष्ट, अद्भुत, विचार कर प्रवृत्त
 करने वाला नाविक नन्द इन्द्रादयः सर्वे देवता ये हैं
 विन्दवः (जीव) की सार्वभौम शक्त कर सक्रिय हैं । इसी
 प्रकार अन्य भी आचरण करना योग्य है ।

॥ इति अपर्याया तथा पयोजा द्वार संपूर्ण ॥



❀ गर्भ विचार ❀

गुरु-हे शिष्य ! पञ्च वषा मगवति सूत्र का तथा ग्रंथकारों का अभिप्राय देखने पर, सर्व जन्म और मृत्यु के दुखों का मुख्यतः चौथा मोहनीय कर्म के उदय में समावेश होता है । मोहनीय में ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय और अन्तराय कर्म एवं तीन का समावेश होता है । ये चार ही कर्म एकांत पाप रूप हैं इनका फल असाठा और दुख है इन चारों ही कर्मों के आकर्षण से आयुष्य कर्म बन्धता है व आयुष्य शरीर के अन्दर रह कर भोगा जाता है भोगने का नाम वेदनीय कर्म है इस कर्म में साठा तथा असाठा वेदनीय का समावेश होता है और इस कर्म के साथ नाम तथा गोत्र कर्म जुड़ा हुआ है और ये आयुष्य कर्म के साथ सम्बन्ध रखते हैं ये चार कर्म शुभ तथा अशुभ एवं दो परिणामों में बन्धते हैं अतः इन्हें मिश्र कहते हैं इनके उदय से पुण्य तथा पाप की गणना की जाती है ।

इस प्रकार आठ कर्मों का बन्ध होता है और ये जन्म मरण रूप क्रिया के द्वारा भोगे जाते हैं । मोहनीय कर्म सर्व कर्मों का राजा है आयुष्य कर्म इसका दीवान है इज्जी मेवर है जो मोह राजा के आदेशानुसार नित्य कर्मों का संचय करके बन्ध बान्धता है । ये सब

पञ्चगुणात्री सूत्र में कर्म प्रकृति पद से समझना । मन सदा चंचल व चपल है और कर्म संचय करने में अप्रमादी व कर्म छोड़ने में प्रमादी है इस से लोक में रहे हुए वह चैतन्य रूप पदार्थों के साथ, राग द्वेष की मदद से, यह मिल जाता है । इस कारण उसे " मन योग " कह कर पुकारते हैं । मन योग से नवीन कर्मों की आवक आती है । जिसका पांच इन्द्रियों के द्वारा भांगोपभोग किया जाता है । इस प्रकार एक के बाद एक विषाक का उदय होता है । सबों का मूल मोह है, तद्वत्तु मन, फिर इन्द्रिय विषय और इन से प्रमाद की वृद्धि होती है कि जिसके वश में पड़ा हुआ प्राणी, इन्द्रियों को पोषण करने के रस सिवाय, रसत्रयात्मक अभेदानन्द के आनन्द की लहर का रसीला नहीं हो सका किन्तु उलटा ऊँच नीच कर्मों के आकर्षण से नरक आदि चार गति में जाता व आता है । इनमें विशेष करके देव गति के सिवाय तीन गति के जन्म अशुचि से पूर्ण हैं । जिसमें से नरक कुण्ड के अन्दर तो केवल मल मूत्र और मांस रुधिर का कादा (कीचड़) भरा हुआ है व जहाँ छेदन भेदन आदि का भयङ्कर दुख होता है जिसका विस्तार सुयगडांग सूत्र से जानना ।

यहां से जीव मनुष्य या तिर्यच गति में आता है यहाँ एकांति अशुचि तथा अशुद्धि का भण्डार रूप गर्भावाप्त

में आकर उत्पन्न होता है पायस्थान से भी अधिक यह नित्य अखूट कीच से मरा हुआ है यह गर्भावास नरक के स्थान का भान कराता है व इसी प्रकार इस में उत्पन्न होने वाला जीव नेरिये का नमूना रूप है । अन्तर केवल इतना ही है कि नरक में ज्वेदन, मेदन, ताड़न, तर्जन, खण्डन, पीसन और दहन के साथ २ दश प्रकार की घेन वेदना होती है वह गर्भ में नहीं परन्तु गति के प्रमाण में भयङ्कर बह और दुख है ।

उत्पन्न होने की स्थिति तथा गर्भ स्थान का विवेचन ।

शिष्य-हे गुरु ! गर्भस्थान में आकर उत्पन्न होने वाला जीव वहां कितने दिन, कितनी रात्रि, तथा कितने महर्ष तक रहता है ? और उतने समय में कितने श्वासो-श्वास लेता है ?

गुरु-हे शिष्य ! उत्पन्न होने वाला जीव २७७॥ अर्ध रात्रि तक रहता है । वास्तविक रूप से देखा जाय तो गर्भ का काल इतना ही होता है । जीव ८, १२५ महर्ष गर्भस्थान में रहता है । और १४, १०, २२५ श्वासो श्वास लेता है । इसमें भी कमी-बेसी होती है ये सब कर्म विपाक का व्यापात समझना । गर्भ स्थान के लिये यह समझना चाहिये कि माता के नाभि मंडल के नीचे फूल के आकार वत् दो नाडियें हैं । इन दोनों के नीचे उंचे फूल के आकार

की तरह आकर मर जाते हैं । कर्म योग से उनके कश्चित् गर्भ रह जाता है तो जितने पुरुषों के रजकण आये हूँ वे सर्व पुरुष उम जीव के पिता तुल्य माने जाते हैं । एक साथ दस हजार तक गर्भ रह सकता है । ॥ पर मच्छी तथा सर्पनी माता का न्याय है । मनुष्य के अधिक से अधिक तीन सन्तान हो सकती हैं शेष मरण पा जाते हैं । एक ही समय नव लाख उत्पन्न हो कर यदि मर जावे तो वह श्री ब्रह्म पर्यन्त बाँझ रहती है । दूसरी तरह श्री श्री बानान्ध वन कर अनिषमित रूप से विषय का सेवन कर अथवा व्यभिचारिणी वन कर मर्यादा रहित पर पुरुष का सेवन करे तो वो श्री बाँझ होती है । उसके गर्भ नहीं रहता । ऐसी श्री के शरीर में ऋषी (उद्गी) जीव उत्पन्न होते हैं कि जिनके टङ्ग में विद्यार्थी की वृद्धि होती है व इससे वह श्री देव गुरु धर्म व कृत मर्यादा तथा शिष्य ब्रत के लायक नहीं रह सकती । ऐसी श्री का स्वभाव निर्दय तथा अमन्यकारी होता है । जो श्री दवानु तथा मत्परादी होती है वो अपने शरीर को यात्रा काता है । कामयाबना वह कबू रखती है । आनी प्रज्ञा की रक्षा के निमित्त सांसारिक सुखों के अनुगम की मर्यादा करती है । इन कारण से ऐसी श्री पुत्र पुत्री का अन्धा कृत प्राप्त करती हैं । केवल रुचि म या केवल सिद्ध में प्रज्ञा प्राप्त नहीं हो सकती वन ही अनु के रुचि निराव अन्य रुचि प्रज्ञा-

प्राप्ति के निमित्त काम नहीं आसक्ता एक ग्रन्थकार कहते हैं कि सूक्ष्म रीति से सोलह दिन पर्यन्त श्रुतुत्ताव होता है । यह रोगी स्त्री के नहीं परन्तु निरोगी स्त्री के शरीर में होता है । और यह प्रजाप्राप्ति के योग्य कहा जाता है ।

उक्त दिनों में से प्रथम तीन दिनों का ग्रन्थकार निषेध करते हैं । यह नीति मार्ग का न्याय है और इस न्याय को पुण्यात्मा जीव स्वीकार करते हैं । अन्य मतानुसार चार दिन का निषेध है । क्योंकि चौथे दिन को उत्पन्न होने वाला जीव अन्य समय तक ही जीवन धारण कर सकता है । ऐसा जीव शक्ति हीन होता है व माता पिता को भार रूप होता है । पाँचवें से सोलहवें दिन तक नीति शास्त्रानुसार गर्भाधारण संस्कार के उपयुक्त माने जाते हैं । पश्चात् एक के बाद एक (दिन) का बालक उत्तरोत्तर तेजस्वी बलवान्, रूपवान्, बुद्धिवान्, और अन्य सर्व संस्कारों में श्रेष्ठ दीर्घायुश्च वाला तथा कुटुम्ब पालक निवहता है (होता है) इनमें से छठी, आठवीं, दशवीं, बारहवीं, चौदहवीं एवं सम (बेकी की) रात्रि विशेष करके पुत्री रूप फल देती है । इस में विशेषता यह है कि पाँचवीं रात्रि को उत्पन्न होने वाली पुत्री कालान्तर में अनेक पुत्रियों की माता बनती है । पाँचवीं, सातवीं, नववीं, द्वादशवीं, तेरहवीं, पन्द्रहवीं एवं विषम एकी की रात्रि का बालक पुत्र रूप में उत्पन्न होता है और वे उत्तर-

कहे गुणवाला निकलता है । दिन का संयोग शास्त्र द्वारा निषेध है । इतने पर भी अगर होवे (सन्तान) तो वो कुटुम्ब की तथा व्यवहारिक सुख व धर्म की दानि करने वाला निकलता है ।

गर्भ में पुत्र या पुत्री होने का कारण:-वीर्य के रज कण अधिक और रुधिर के थोड़े होवें तो पुत्र रूप फल की प्राप्ति होती है । रुधिर अधिक और वीर्य कम होवे तो पुत्री उत्पन्न होती है । दोनों समान परिमाण में होवे तो नपुंसक होता है । (अब इनका स्थान कहते हैं) माता के दाहिनी तरफ पुत्र, बांयी कुक्षि में पुत्री और दोनों कुक्षि के मध्य में नपुंसक के रहने का स्थान है । गर्भ की स्थिति मनुष्य गर्भ में अंकुष्ट सारह वर्ष तक जीवित रह सकता है । बाद में मर जाता है । परन्तु शरीर रहता है, जो चौबीस वर्ष तक रह सकता है । इस छत्ते शरीर के अन्दर चौबीसवें वर्ष नया जीव उत्पन्न होवे तो उसका जन्म अत्यन्त कठिनाई से होता है यदि नहीं जन्मे तो माता की मृत्यु होती है । संक्षी विर्यच आठ वर्ष तक गर्भ में जीवित रहता है । अब आहार की रीति कहते हैं योनि कमल में उत्पन्न होने वाला जीव प्रथम माता पिता के मिले हुये मिश्र पुद्गलों का आहार करके उत्पन्न होता है इसका अध प्रजा द्वार म जानना विशेष इतना है कि यह अ हर माता पिता का पुद्गल कहनाता है । इस आहार

से सात धातु उत्पन्न होती हैं । इनमें—१ रसी (राघ)
 २ लोही ३ मांस ४ हड्डी ५ हड्डी की मज्जा ६ चर्म ७ वीर्य
 और नसा जाल एवं सात मिल कर दूसरी शरीर पर्या
 अर्थात् सूक्ष्म पुतला कहलाता है । छः पर्या वंशने के बाद
 यह घोञ्क (वीर्य) सात दिवस में चावल के धोवन
 समान तोलदार हो जाता है । चौदहवें दिन जल के
 परपोटे समान आकार में आता है । इकवीस दिन में
 नाक के श्लेष्म के समान और अठावीस दिन में अड़ता-
 लीश मासे वजन में हो जाता है । एक महिने में धेर की
 गुठली समान अथवा छोटे आम की गुठली समान हो
 जाता है । इसका वजन एक करखल कम एक पल का
 होता है पल का परिमाण—शोलह मासे का एक करखल
 और चार करखल का एक पल होता है । दूसरे महिने
 कधी केरी समान, तीसरे महिने पक्षी केरी (आम)
 समान हो जाता है । इस समय से गर्भ प्रमाणे माता को
 उछोला (दोहद-भाव) उत्पन्न होने लगता है । और यह
 कर्म कलानुसार फलता है । इस के द्वारा गर्भ अच्छा है
 या बुरा इसकी परीक्षा होती है । चौथे महिने कणक के
 पिण्ड के समान हो जाता है इस से माता के शरीर की
 पुष्ट होन लगती है । पाचवे महिने में पाच अंगुल लम्बे हैं
 तिनने में दो इंच दो पाँच, पाँचवा मन्त्र, छठे महिने लघि,
 सातवा अंगुल केरी का इंच होन लगता है हुन दो।

क्रोड़ रोम होते हैं । जिनमें से दो क्रोड़ और एकान्न लाख गले ऊपर व नवान्न लाख गले के नीचे होते हैं । दूसरे मत से—इतनी संख्या के रोम गाढर के कहलाते हैं यह विचार उचित (वाज्वकी) मालूम होता है । एकेक रोम के उगने की जगह में १॥॥ से कुछ विशेष रोग भरे हुए हैं । इस हिसाब से पीने छः करोड़ से अधिक रोग होते हैं । पुण्य के उदय से ये ढंके हुए होते हैं । यहीं में रोम आहार की शुरुआत होने की सम्भावना है ' तत्त्वं तु सर्वज्ञ गम्यं ' । यह आहार माता के रुधिर का समय समय लेने में आता है और समय समय पर गमना दे । सातवें महिने सात सो सिराएँ अर्थात् रसहरणी नाड़ियाँ पन्धती हैं । इनके द्वारा शरीर का पोषण होता है । और इसमें गर्भ को पुष्टि मिलती है । इनमें से सी को ६७० (नाड़ियों) नर्तुमरु को ९८० और पुरुष का ७०० पूरी होती है । पाँचमो मांस की पेशियाँ पन्धती हैं । जिनमें से श्री के तीस और नर्तुमरु के बीस कम होती हैं इनमें हड्डियाँ ढंभी हुई रहती हैं । हाड में सवे निजाकर ३३० महि (जोड़) होते हैं । एकेक जोड़ पर आठ आठ मर्म के स्थान हैं । इन मर्म स्थानों पर एक टखोर लगने पर मरण पाता है । अन्य मान्यता में एक भी साठ महि और १७० मर्म—स्थान होने हैं । उपगन्त मर्म १७५ । सुही में ६० मर्म माने हैं । जिनमें में मात्र सोही,

और मस्तक की मज्जा (भेजा) ये तीन अन्न माता के और दही हाड़ की मज्जा और नख केश रोम ये त्रि-अन्न पिता के हैं । आठवें महीने सर्व अन्न उपाज्ज पृ-हो जाते हैं । इस गर्भ को लघु नीत बड़ी नी-श्लेष्म, उधरस, छोरु, आंझई पादि कुछ नहीं होता वो-जिस २ आहार को खेंचता है उस आहार का रस इन्द्रियों को पुष्ट करता है । हाड़, हाड़ की मज्जा, चाची नख, केश की वृद्धि होती है । आहार लेने की दूसरी रीति यह है कि माता की तथा गर्भ की नाभि व ऊपर की रसहरणी नाडी ये दोनों पास-पर वाले (नदरु) के आंटे के समान धीरे धीरे हैं । इसमें गर्भ की नाडी का मुँह माता की नाभि में जुड़ा हुआ होता है । माता के कोठे में पड़ले जो आहार का कवल पड़ता है वो नाभि के पाँच अटक जाता है व इसका रस बनता है जिससे गर्भ अपनी जुड़ी हुई रसहरणी नाडी से खेंच कर पुष्ट होता है । शरीर के अन्दर ७२ कोठे हैं जिनमें से पाँच बड़े हैं । शीयाले में दो कोठे आहार के और एक कोठा जल का व गर्भा में दो कोठे जल के और एक कोठा आहार का तथा चौमासे में दो कोठे आहार के और दो कोठे जल के माने जाते हैं । एक कोठा हमेशा खाली रहता है । स्त्री के छठा कोठा विशेष होता है । कि जिसमें गर्भ रहता है । पुरुष के दो कान, दो चक्षु दो नासिका (छेद), मुँह, लघुनीत, बड़ी नी-

आदि नव द्वार अपवित्र और सदा काल बहते रहते हैं । और स्त्री के दो धन (स्तन) और एक गर्भ द्वार ये तीन मिल कर कुल चारह द्वार सदाकाल बहते रहते हैं ।

शरीर के अन्दर अठारह पृष्ठ दण्डक नागकी पाँचलियें हैं । जो गर्भवास की करोड़ के साथ जुड़ी हुई है । इनके सिवाय दो बाँसे की चारह कंडक पाँचलियें हैं कि जिनके ऊपर सात पुड़ चमड़े के चढ़े हुये होते हैं । छाती के पड़दे में दो (कलेजे) हैं जिनमें से एक पड़दे के साथ जुड़ा हुआ है और दूसरा कुछ लटकता हुआ है । पेट के पड़दे में दो अंतस (नल) हैं जिनमें से स्थूल नल मल-स्थान है और दूसरा सूक्ष्म लघु नीत का स्थान है । दो प्रणय स्थान अर्थात् भोजन पान पर गमाने (पचाने) की जगह हैं । दक्षिण पर गमे तो दुःख उपजे व बाँये पर गमे तो सुख । सोलह आँता है, चार आँगुल की ग्रीवा है । चार पल की जीम है, दो पल की आँखें हैं, चार पल का मस्तक है । नव आँगुल की जीम है, अन्य मान्यतानुसार सात आँगुल की है । आठ पल का हृदय है पक्षीय पल का कलेजा है । अब सात धातु का प्रमाण व माप कहते हैं शरीर के अन्दर एक आड़ा (टेढ़ा) रुधिर का और आधा आड़ा मांस का होता है । एक पाधा मस्तक का मेजा, एक आड़ा लघुनीत, एक पाधा बड़ी नीत का है । कफ, पित्त, और श्लेष्म इन तीनों का एकेक कलत्र और

यथा मिलती है । ये नाड़ियों वहाँ तक रक्त पहुँचा कर शरीर मादि को आरोग्य रखती हैं । नाड़ों में रुकसान होने से संधि, पक्षा घात (लकड़ा) वेर आदि का हटना, कलन, तोड़ काट, मस्तक का दुखना व आधा-शीर्षा आदि रोगों का प्रक्षेप हो जाता है ।

तीसरी १६० नाड़ी नाभी से तिर्यक् गई हुई है । ये दोनों हाथों की अंगुलियों तक चली गई है । इतना भाग इन नाड़ियों में मजबूत रहता है । रुकसान होने से पांसा शूल, पेट के दर्द, घेरे के व दाँतों के दर्द आदि रोग उत्पन्न होने लगते हैं ।

चौथी १६० नाड़ी नाभी से नीचे मध्य स्थान पर फैली हुई है । जो स्थान द्वार तक गई हुई है । इनकी शक्ति द्वारा शरीर का सम्भार रहा हुआ है । इनके मन्दर रुकसान होने पर लघु नीच बड़ी नीच आदि की कषति-वह (कटाट) मन्त्रा मानिमानि मूत्र होने लग जाती है । सभी प्रकार का लघु हनि प्रक्षेप, उदर भिन्न, अग्नि पांसी वनद वानगैड पांशु गैग, वज्रोदर, कटोदर, वगैरह, मंघ्र-हर्षा आदि का प्रक्षेप होने लग जाता है ।

पाँचवीं १७० रोग नाड़ी द्वार की ओर मध्य द्वार तक गई हुई है । जो मध्य की नाड़ी का पृष्ठ जाती है । इन रुकसान होने पर मध्य, नीच व का गैग हो जाता है मन्द रोग नाड़ी इनो मध्य का द्वार निग

बुद्धि रख कर कुशील (मैथुन) का सेवन करती है तो यदि गर्भ में पुत्रो होवे तो उनके माता पिता दुष्ट में दुष्ट, पापी में पापी और सौ सौ नरक के अधिकारी बनते हैं । गर्भ भी अधिक दिनों तक जीवित नहीं रहता यदि जिन्दा रहे भी तो वो काना, कुबड़ा, दुर्बल, शक्ति हीन तथा खराब डीलडोल का होता है । क्रोधो, चलेगी, प्रपंची और खराब चाल चलन वाला निकलता है । ऐसा समझ कर प्रजा (सन्तति) की हितइच्छने वाली जो माताएं गर्भ-काल में शील बन्ती रहती हैं । वे धन्य हैं ।

विशेष में उपरोक्त गर्भावास के स्थानक में महा कष्ट तथा पीड़ा उठानी पड़ती है । इस पर एक दृष्टान्त दिया जाता है—जिस मनुष्य का शरीर कोढ़ तथा पित्त के रोग से गलता होवे ऐसे मनुष्य के शरीर में साढ़ातीन फोड़ छईयें अग्नि में गरम करके साढ़ेतीन रोमों के अन्दर पिरोवे । पुनः शरीर पर निमक तथा चूने का जल छीटकर शरीर को गीले चमड़े से मढ़े व मढ़ कर धूर के अन्दर रखे सूखने (शरीर का चमड़ा) पर जो अत्यन्त कष्ट उठे होता है उस (दुष्ट) को मित्राय भोगने वाले के और सर्वज्ञ के अन्य कोई नहीं जान सकता । इस प्रकार वेदना पहिले महीने गर्भ का होती है दूसरे महीने दुगनी एवं उत्तरोत्तर नववें महीने नव गुणी वेदना होती है । गर्भ वास की जगह छोटी है और गर्भ का शरीर (स्थूत्र) बड़ा है

सकते हैं ? क्या नहीं देख सकते ।

गर्भ का जीव माता के दुख से दुखी व सुख से सुखी होता है । माता के स्वभाव की छाया गर्भ पर गिरती है । गर्भ में से पाइर आने के बाद पुत्र पुत्री का स्वभाव, आचार, विचार आहार व्यवहार आदि सर्व माता के स्वभावानुसार होता है । इस पर से माता पिता के ऊँच नीचे गर्भ की तथा यश अपयश आदि की परीक्षा सन्तति रूप फोटू के ऊपर से विवेकी स्त्री पुरुष कर सकते हैं । कारण कि सन्तति रूप चित्र (फोटू) माता पिता की प्रकृति अनुसार खिंचा हुआ होता है । माता धर्म ध्यान में, उपदेश भवण करने में तथा दान पुण्य करने में और उत्तम भावना भावने में संलग्न होवे तो गर्भ भी वैसे ही विचार वाला होता है । यदि इस समय गर्भ का मरण होवे तो वो मर कर देवलोक में जा सकता है । ऐसे ही यदि माता आर्त और रौद्र ध्यान में होवे तो गर्भ भी आर्त और रौद्र ध्यानी होता है । इस समय गर्भ की मृत्यु होने पर वो नरक में जाता है । माता यदि उस समय महाकपट में प्रवृत्त हो तो गर्भ उस समय मर कर तिर्यच गति में जाता है । माता महा भद्रिक तथा प्रपञ्च रहित विचारों में लगी हुई होवे तो गर्भ मर कर मनुष्य गति में जाता है एवं गर्भ के अन्दर से ही जीव चारों गति में जा सकता है । गर्भ काल जब पूर्ण होता है तब माता तथा गर्भ की नामी की

ॐ नक्षत्र और विदेश गमन ॐ

शिष्य नमस्कार करके पूछता है कि हे गुरु ! नक्षत्र कितने ? तारे कितने ? इनका आकार कैसा ? वे नक्षत्र ज्ञान शक्ति बढ़ाने में क्या मददगार हैं ? उन नक्षत्रों के समय विदेश गमन करने पर किस पदार्थ का उपभोग करके चलना चाहिये व उस से किस फल की प्राप्ति होती है ?

गुरु—(एक साथ छः ही सवाल्यों का जवाब देते हैं)

हे शिष्य ! नक्षत्र अठारवींश है, जिन मणों के आकार अलग अलग हैं । ये आकार इन नक्षत्रों के ताराओं की संख्या के ऊपर से समझे जा सकते हैं । इन के आधार से स्वाध्याय, ध्यान करने वाले मुनि रात्रि की पेंसियों का माप अनुमान कर आत्मस्मरण में प्रवृत्त हो सकते हैं । इन में से दश नक्षत्र ज्ञान शक्ति में वृद्धि करने वाले हैं । ज्ञान शक्ति वाले महात्मा अपने संयम की वृद्धि निमित्त तथा भव्य जीवों पर उपकार करने के लिए विदेश में विचरते हैं जिससे अनेक लाभ होने की संभावना है । अतः इन नक्षत्रों का विचार करके गमन करने पर धर्म वृद्धि का कारण होता है । यही नक्षत्रों का फल है । चलने के समय भिन्न भिन्न पदार्थों का उपभोग करने में आता है । उन पदार्थों के साथ मनोभावनाओं का रस मिल कर मिश्रित

खाकर दक्षिण मिवाय दिशाओं में जाने से भय की संभावना रहती है । (५) पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र के दो तारे हैं । इसका आकार अर्ध वाक्य के समान है । इससे योग पर करेलेकी शाक खाकर चलने पर लड़ाई होवे परन्तु इससे धानशुद्धि की संभावना भी है । (६) उत्तराभाद्र-पद नक्षत्र के दो तारे हैं । इसका आकार भी पूर्वाभाद्र-पद के समान होता है । इस में वायकपूर (बंशलेखन) खाकर पिछले पहर चलने से सुख होता है । यह नक्षत्र दीर्घा के योग्य है । (७) रेवती नक्षत्र के बत्तीस तारे हैं । इसका आकार नाव समान है । इन के समय स्वच्छ जल का पान करके चलने से विषय मिलती है । (८) मघनी नक्षत्र के तीन तारे हैं । घोड़े के बन्ध लेना आकार है । मटर (बटले) की फली का शाक खाकर चलने से सुख शान्ति प्राप्त होती है । (९) मर्या नक्षत्र के तीन तारे हैं । और इसका आकार खी के मर्मस्थान वत् है । सेल, चायत खाकर चलने पर सकलता मिलती है । (१०) कृत्तिका नक्षत्र के छः तारे होते हैं । जिसका ज़ाई की पेटी समान आकार होता है । गन्धक-दूध पीकर चलने पर मौसम की शुद्धि होती है तथा मरकार मिलता है । (११) रोहिणी नक्षत्र के पाँच तारे होते हैं । व गाँव के ऊँट समान इसका आकार होता है । इस समय इस मृग या ऊँट चलने पर मार्ग में पानी के सम्यक् से वायव्य अक्षर वायव्य में प्राप्त हो जाती

है यह नक्षत्र दीक्षा देने योग्य है । (१२) मृग शीर्ष नक्षत्र के तीन तारे होते हैं । इसका आकार हिरण्य के सिर समान होता है । इलायची खाकर चलने पर अत्यन्त लाभ होता है । यह नक्षत्र नये विद्यार्थी की तथा नये शास्त्रों का अभ्यास करने वालों की ज्ञानवृद्धि करने वाला है । (१३) आर्द्रा नक्षत्र का एक ही तारा है । इसका रुधिर के बिन्दु समान आकार है । इस समय नवनीत (माखन) खाकर चलने से मरण, शोक, संताप तथा भय एवं चार फल की प्राप्ति होती है । परन्तु ज्ञान अभ्यासियों को सत्वर उत्तम फल देने वाला निकलता है व वर्षा ऋतु के मेघ-बादल की अस्वाध्याय दूर करता है । (१४) पुनर्वसु नक्षत्र के पांच तारे हैं । इसका आकार तराजू के समान है । घृत शकर खाकर चलने पर इच्छित फल मिलते हैं (१५) पुष्य नक्षत्र के तीन तारे हैं । जिसका आकार ब्रधमान (दो जुड़े हुये रामपात्र) समान होता है । खीर खाएँ खाकर चलने से अनियमित लाभ की प्राप्ति होती है । व इस नक्षत्र में क्रिये हुये नये शास्त्र का अभ्यास भी बढ़ता है । (१६) अश्लेषा नक्षत्र के छः तारे हैं । इसका आकार घञ्जा समान है । इस समय सीताफल खाकर चले तो प्राणान्त भय की सम्भावना होती है परन्तु यदि कोई ज्ञान अभ्यास, हुन्नर, कला, शिष्य शास्त्र आदि के अभ्यास में प्रवेश करे तो जल तथा तेल के बिन्दु समान

उस के ज्ञान का विस्तार होता है । (१७) मघा नक्षत्र के सात तारे होते हैं जिनका आकार गिरे हुए कित्ते की दोवार समान है केसर खाकर चलने पर तुरी तरह से आकास्मिक मरण होता है । (१८) पूर्वा फाल्गुनी नक्षत्र के दो तारे होते हैं । इनका आकार भावे पलङ्ग जैसा होता है इस समय कोठिवड़े (फल) की शाक खाकर चलने से विरुद्ध फल की प्राप्ति होती है परन्तु शास्त्र अभ्यासी के लिए भेष्ट है । (१९) उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र के भी दो तारे होते हैं और आकार भी भावे पलङ्ग जैसा होता है इस समय कड़ा नामक वनस्पति की फली की शाक खाकर चलने पर सहज ही जंश मिलता है । यह नक्षत्र दीक्षा लायक है । (२०) हस्त नक्षत्र के पाँच तारे हैं । इसका आकार हाथ के पंजे समान है लिंगोड़े खाकर उत्तर दिशा सिवाय अन्य तरफ चलने से अनेक लाभ हैं व नये शास्त्र अभ्यासियों को अत्यन्त शक्ति देने वाला है । (२१) चित्रा नक्षत्र का एक ही तारा है खिले हुए फूल जैसा उसका आकार है । दो पहर दिन चढ़ने बाद मृग की दाल खाकर दक्षिण दिशा सिवाय अन्य दिशामों में जाने पर लाभ होता है व ज्ञान वृद्धि होती है (२२) स्वाति नक्षत्र का एक तारा है इसका आकार नाग फनी समान होता है आम खाकर जाने पर लाभ लेकर कुशल घेम पूर्वक जन्दी घर लौट आमके हैं । (२३) विशाखा

नक्षत्र के पांच तारे होते हैं जिसका आकार घोड़े की लगाम (दामणी) जैसा है इस योग पर अलसी फल खाकर जाने से विकट काम सिद्ध हो जाते हैं । (२४) अनुराधा नक्षत्र के चार तारे हैं । इसका आकार एकावली हार समान होता है । चावल मिथी खाकर जाने से दूर देश यात्रा करने पर भी कार्य सिद्धि कठिनता से होती है । (२५) जेष्ठा नक्षत्र के तीन तारे हैं इनका आकार हाथी के दांत जैसा है इस समय कलधी की शाक अथवा कोल कुट (चोर कुट) खाकर चलने से शीघ्र मरण होता है । (२६) मूल नक्षत्र के इग्यारह तारे हैं इसका बीछे जैसा आकार है मूला के पत्र की शाक खा कर जाने से कार्य सिद्धि में बहुत समय लगता है । इस नक्षत्र को बीछीड़ा भी कहते हैं । ज्ञान अभ्यासियों के लिये तो यह अच्छा है । (२७) पूर्वाषाढ नक्षत्र के चार तारे हैं । हाथी के पाँव समान इसका आकार है इस समय खीर आँवला खाकर जाने से ज़ेरा कुसम्भ व अशान्ति प्राप्त होती है परन्तु शास्त्र अभ्यासियों को अच्छी शक्ति देने वाला होता है (२८) उत्तराषाढ नक्षत्र के चार तारे होते हैं इसका घेठे हुवे सिद्ध समान आकार है । इस समय पके हुवे बीली फल खाकर जाने से नव माघन महिन कार्य सिद्धि होती है यह नक्षत्र दीक्षित करने योग्य है ।

उत्तर बताये हुवे अष्टादश नक्षत्रों में से पाँचवां, बारहवां, तेरहवां, पन्द्रहवां, सोलहवां, अट्ठाहवां, बीसवां,

एकवींशवां, छत्तीसवां, और सत्तावींशवां एवं दश नववां में से अधिक नक्षत्र चन्द्र के साथ योग जोड़ कर गमन करते होंगे व उन दिन गुरुवार होंगे तब उस समय मिथ्या-मिमान दूर कर के विनय भक्ति पूर्वक गुरुनन्दन को व आज्ञा प्राप्त करके शास्त्राध्ययन करने में तथा वाचन लेने में प्रवृत्त होंगे ऐसा करने से सर्वत्र ज्ञान वृद्धि होती है परन्तु याद रखना चाहिये कि छः बार छोड़ कर गुरुवार लेवे दो अष्टमी, दो चउदश, पूर्णिमा, अमावस्या और दो एकम ये भी तिथि छोड़ कर शेष अन्य तिथियों में अर्घ्य चैषडिया देख कर सूर्य-गमन में प्रारम्भ करे।

विशेष में गणपद (आचार्य), वापक पद (उपाध्याय) अथवा पढ़ी दीक्षा देने के शुभ प्रसंग में दो चौथ, दो छठ, दो अष्टमी, दो नवमी, दो बारस, दो चउदश, पूर्णिमा, तथा अमावस्या आदि चौदह तिथियाँ निषेध हैं। इन के सिवाय की अन्य तिथि अथवा बार, नक्षत्र योग्य है। ऐसे काल के लिए गणपति विधि प्रकरण ग्रंथ का न्याय है। अष्टमी को प्रारम्भ करने पर पढ़ाने वाला भरे अथवा विषोम पड़े अमावस्या के दिन प्रारम्भ करने पर दोनों भरे और एकम के दिन प्रारम्भ करने में विद्या की नाश होवे। ऐसा मनन कर निविहार नक्षत्र चैषडिया देण्ड का गुरु सम्मुख ज्ञान लेना चाहिये। यदयेय वा कारण है।

ॐ इति नक्षत्र और विदेश गमन सम्पूर्ण ॐ

❀ पांच देव ❀

(भगवती सूत्र. शतक १२ उद्देश ६)

गाथा

नाम गुण उवाए, ठी वीथु चवण संचीठणा,
अन्तर अष्पा बहुयं च, नव भए देव दाराए ।१।

१ नाम द्वार, २ गुण द्वार, ३ उववाय द्वार
४. स्थिति द्वार ५ अद्भि तथा विष्णुवणा द्वार ६ चवत द्वार
७ संचिठण द्वार ८ अन्तर द्वार ९ अन्त बहुत्व द्वार ।

१ नाम द्वार:- १ भवि द्रव्य देव २ नर देव ३ धर्म
देव ४ देवाधि देव ५ भाव देव ।

२ गुण द्वार:- मनुष्य तथा तिर्यक् पंचेन्द्रिय में से
जो देवता में उत्पन्न होने वाले हैं उन्हें भवि द्रव्य देव
कहते हैं २ चक्रवर्ती की अद्भि भोगने वालों को नर देव
कहते हैं ।

चक्रवर्ती की रिद्धि का वर्णन—

नव निधान, चौदह रत्न, चौगसी लाख हाथो,
चौरासी लाख घोड़े, चौगसी लाख गध, छन्नु क्रोड़ पाय-
दल, बत्तीश हजार मुकुट बन्ध राजे, बत्तीश हजार मामा-
निक राजे, मोलड़ हजार देवता नेवर, चौपठ हजार स्त्री,
तीन में माठ रमोइये, बत्तीश हजार मोना के अंगर अदि

३ धर्म देव के गुणः—आठ प्रवचन माता का सेवन करने वाले, नववाह विशुद्ध ब्रह्मचर्य का पालन करने वाले, दशविध यति धर्म का पालन करने वाले, बारह प्रकार की तपस्या करने वाले, सतरह प्रकार के संयम का आचरण करने वाले, बाबीस परिपह को सदन करने वाले, पचावीस गुण सहित, तेतीस अशातना के टालने वाले, छत्तु दोष रहित आहार पानी लेने वाले, को धर्म देव कहते हैं ।

४ देवाधिदेव के गुणः—चौतीस अतिशय सहित विराजमान पैंतीस वचन (वाणी) के गुण सहित, चौसठ इन्द्र के द्वाग पूज्यनीक, एक हजार और अष्ट उच्च लक्षण के धारक अठारह दोष रहित व बारह गुणों सहित होते हैं उन्हें देवाधि देव कहते हैं । अठारह दोषों के नामः—१ अज्ञान २ क्रोध ३ मद ४ मान ५ माया ६ लोभ ७ रति ८ अरति ९ निद्रा १० शोक ११ असत्य १२ चोरी १३ भय १४ प्राणि वध १५ मत्सर १६ राग १७ क्रीड़ा—प्रसंग १८ हास । १२ गुणों के नामः—१ जहां २ भगवन्त खड़े रहें, बैठें समोसरे वहां २ दश बोलों के साथ भगवन्त से बारह गुणा ऊंचा सत्काल अशोक वृक्ष उत्पन्न हो जाता है और भगवन्त के मस्तक पर छाया करता है । २ भगवन्त जहां २ समोसरे वहां २ पांच वर्ष के अचेत फूलों की वृष्टि होती है जो गिरकर घुटने के बराबर ढेर लगा देते हैं । ३ भगवन्त की योजना पर्यन्त वाणी फैल कर सबों के

त्रिय और संज्ञी मनुष्य इन दो स्थान के आकर उत्पन्न होते हैं ।

४ स्थिति द्वारः—१ भविद्रव्य देवकी स्थिति जपन्य अन्तर्बहुते की उत्कृष्ट तीन पन्य की । २ नर देव की जपन्य सातवीं वर्ष की उत्कृष्ट चौराथी लघु पूर्व की ३ धर्म देव की जपन्य अन्तर्बहुते की उत्कृष्ट देश उणी (न्यून) पूरे कोइ की ४ देवाधि देव की जपन्य ७२ वर्ष की उत्कृष्ट ८४ लघु पूर्व की ५ भावदेव की जपन्य दश हजार वर्ष की उत्कृष्ट ३३ सामरोपम की ।

५ श्रद्धा तथा विकृषणा द्वारः—भवि द्रव्य देव में जिन्हें वैकिप उत्पन्न होते वो, नर देव को तां होती ही है, धर्म देव में मे जिन्हें हांवे तो और भाव देव के वो होती ही है एवं वे भागों वैकिप रूप को तो जपन्य १, २, ३, उत्कृष्ट मंल्याता रूप को, शक्ति तो असंख्यता रूप करने की है । पान्तु को नहीं देसाधि देव की शक्ति अत्यन्त है पान्तु को नहीं ।

६ वचन द्वारः—१ भवि द्रव्य देव भर कर देखा होते २ नर देव भर कर नरक जाते ३ धर्म देव भर कर देसाधि में तथा मोक्ष में जाते ४ देसाधिदेव मोक्ष में जाते ५ भाव देव भर कर पृथ्वी मय, अनस्तानि साक्षर में और वचन मनुष्य निर्जन में जाते ।

७ संनिटणा द्वारः—मानटणा अयोग्य क्या ? देव

का देवपने रहे तो कितने काल तक रह सकता है । भवि द्रव्य देव की संचिठणा जघन्य अन्तर्गृहृत की उत्कृष्ट ३ पण्योपम की । नर देव की जघन्य सातसो वर्ष की उत्कृष्ट २४ लक्ष पूर्व की । धर्म देव की परिणाम आश्री एक समय प्रवर्तन आश्री जघन्य अन्तर्गृहृत की उत्कृष्ट देश उणी पूर्व क्रोड़ की देवाधि देव की जघन्य ७२ वर्ष की उत्कृष्ट २४ लक्ष पूर्व की । भाव देव की जघन्य दश हजार वर्ष की उत्कृष्ट ३३ सागरोपम की ।

२ अन्तर द्वारः—भवि द्रव्य देव में अन्तर पड़े तो जघन्य दश हजार वर्ष और अन्तर्गृहृत अधिक । उत्कृष्ट अनन्त काल का । नर देव में जघन्य एक सागर जालेरा उत्कृष्ट अर्ध पुद्गल परावर्तन में देश न्यून धर्म देव में अन्तर पड़े तो जघन्य दो पण्य जालेरा उत्कृष्ट अर्ध पुद्गल परावर्तन में देश न्यून । देवाधि देव में अन्तर नहीं पड़े भाव देव में अन्तर जघन्य अन्तर्गृहृत का उत्कृष्ट अनन्त काल का ।

६ अल्प बहुत्व द्वारः—१ सर्व से कम नर देव २ उनसे देवाधि देव संख्यात गुणा ३ उनसे धर्मदेव संख्यात गुणा ४ उनसे भवि द्रव्य देव असंख्यात गुणा और ५ उनसे भाव देव असंख्यात गुणा ।

॥ इति पांच देव का थोकड़ा सम्पूर्ण ॥

ॐ आराधिक विराधिक ॐ

(श्री भगवतीजी सूत्र, शतक पहिला, उद्देश दूसरा)

१ असंजति मध्य द्रव्यदेव जपन्य मवनपति उत्कृष्ट नव ग्रीयवेक तक जावे ।

२ आराधिक साधु जपन्य पहले देवलोक तक उत्कृष्ट सर्वार्थ सिद्ध विमान तक जावे ।

३ विराधिक साधु ज० मवन पति उत्कृष्ट पहले देवलोक तक जावे ।

४ आराधिक भावक जपन्य पहले देवलोक तक उत्कृष्ट चारहवें देवलोक तक जावे ।

५ विराधिक भावक जपन्य मवनपति उत्कृष्ट ज्योतिषी तक जावे ।

६ असंजति तिर्यच ज० मवनपति उत्कृष्ट वाण व्यन्तर तक जावे ।

७ तापस के मतवाले ज० मवनपति उत्कृष्ट ज्योतिषी तक जावे ।

८ कंदर्पीया साधु जपन्य मवनपति उत्कृष्ट पहला देवलोक तक जावे ।

९ अंबड सन्यासी के मतवाले जपन्य मवनपति उत्कृष्ट पाँचवें देवलोक तक जावे ।

❀ तीन जाग्रिका (जागरण) ❀

श्री वीर भगवन्त को गौतम स्वामी पूछने लगे कि हे भगवन् ! जाग्रिका कितने प्रकार की होती है ?

भगवान्—हे गौतम ! जाग्रिका तीन प्रकार की होती है १ धर्म जागरण २ अधर्म जागरण ३ सुदसु जागरण ।

१ धर्म जागरण के चार भेद—१ आचार धर्म २ क्रिया धर्म ३ दया धर्म ४ स्वभाव धर्म ।

१ आचार धर्म के पाँच भेदः—१ ज्ञानाचार २ दर्शनाचार ३ चारित्राचार ४ तपाचार ५ वीर्याचार इन में से ज्ञानाचार के ८ भेद, दर्शनाचार के ८ भेद, चारित्राचार के ८ भेद, तपाचार के १२ भेद, वीर्याचार के ३ भेद एवं ३६ भेद हुवे ।

१ ज्ञानाचार के ८ भेद—१ ज्ञान सीखने के समय ज्ञान सीखे २ ज्ञान लेने के समय विनय करे ३ ज्ञान का बहु मान करे ४ ज्ञान पढ़ने के समय यथा शक्ति तप करे ५ अर्थ तथा गुरु को गोपे (छिपावे) नहीं, ६ अक्षर शुद्ध ७ अर्थ शुद्ध ८ अक्षर और अर्थ दोनों शुद्ध ।

२ दर्शनाचार के ८ भेदः—१ जैन धर्म में शङ्का हीं करे २ पाखण्ड धर्म की बाँझा नहीं करे ३ करणी के ल में संदेह नहीं रखे ४ पाखण्डों के आढम्बर देख कर

साधु की चारह पांडिमा, ५ पांच इन्द्रिय निग्रह, २५ प्रकार की पढोलेहना, ३ गुप्ति, ४ अग्निग्रह एवं ७० ।

३ दया धर्म के आठ भेदः—१ स्वदया अर्थात् अपनी आत्मा को पाप से बचावे २ पर दया याने अन्य जीवों की रक्षा करे ३ द्रव्य दया याने देखा देखी दया पाले अथवा लज्जा से जीव की रक्षा करे तथा कुल आचार से दया पाले ४ भाव दया अर्थात् ज्ञान के द्वारा जीव को आत्मा जान कर उस पर अनुकम्पा लावे व दया लाकर जीव की रक्षा करे ५ व्यवहार दया भावक को जैसी दया पालने के लिए कहा है वो पाले पर के अनेक काम काज करने के समय यतना रखे ६ निश्चय दया याने अपनी आत्मा को कर्म बन्ध से छुड़ावे । विवेचनः—पुद्गल पर वस्तु है । इनके ऊपर से ममता हटा कर उसका परिचय छोड़े, अपने आत्मिक गुण में लीन रहे, जीव का कर्म रहित शुद्ध स्वरूप प्रगट करे, यह निश्चय दया है । चौदह गुणस्थानक के अन्त में यह दया पाई जाती है । ७ स्वरूप दया अर्थात् किसी जीव को मारने के लिये उसे (जीव को) पहिले अच्छी तरह से खिलावे हैं व शरीर पुष्ट करते हैं, सार संभाल लेते हैं । यह दया ऊपर की तथा दीखावा मात्र है । परन्तु पीछे से उस जीव को मारने के परिणाम है । यह उच्चाध्ययन सूत्र के सातवें अध्ययन में बकरे के अधिकार से समझना ।

चतुर्दश को जाग्रिता । यह भावक को होती है कारण कि
सम्यक् ज्ञान, दर्शन मदिन धन कुटुम्बादिह तथा विषय
व्याय को सराय जानता है । देख से निवृत्त हुआ है, उदय
भाव से उदासीन पने है, तीन मनोरथ का निवृत्त करता
है । इसे हृदय जाग्रिता करते हैं ।

॥ इति तीन जाग्रिता संपूर्ण ॥



ॐ अवधि पद ॐ

(सूत्र श्री पञ्चवक्त्राजी पद तैत्तिरीयां)

इसके दश द्वार-१ भेद द्वार २ विषय द्वार ३ संठाः द्वार ४ ग्राम्यन्तर और वाह्य द्वार ५ देश धकी व सर्व धकी ६ अनुगामी ७ हायमान वर्धमान ८ अवधीया ९ पड़वाई १० अपड़वाई ।

१ भेद द्वार-नेरिये व देव भव प्रत्ये देखे अर्थात् उत्पन्न होने के समय से ही उन्हें अवधि ज्ञान होता है तिर्यच व मनुष्य चयोपशम भाव से देखे ।

२ विषय द्वारः—पहेली नरक का नेरिया जघन्य साढ़े तीन गाउ देखे उत्कृष्ट चार गाउ, दूसरी नरक का नेरिया जघन्य तीन गाउ उत्कृष्ट साढ़े तीन गाउ, तीसरी नरक का नेरिया जघन्य अढ़ाई गाउ उत्कृष्ट तीन गाउ, चौथी नरक का नेरिया जघन्य दो गाउ उत्कृष्ट अढ़ाई गाउ, पाँचवी नरक का जघन्य डेढ़ गाउ उत्कृष्ट दो गाउ, छठी नरक का जघन्य एक गाउ उत्कृष्ट डेढ़ गाउ, सातवीं नरक का जघन्य आधा गाउ उत्कृष्ट एक गाउ देखे । भवन पति जघन्य पचीस योजन तक देखे उत्कृष्ट तीन प्रकार से देखे ऊँचा-पहेले दूमेरे देवलोक तक, नीचे-तीसरी नरक के तले तक और तीर्छा-पल के आयुष्य वाले संख्यात द्वीप समुद्र देखे व सागर के आयुष्य वाले असं-

देव लो० के देवता गुरुदेव के आभार बत देते, नरसीयों के देवता कुलों की चंगेरी समान देते, और अनुत्तर विमान के देवता कुंजारी कन्या की कंचुकी समान देते ।

४ आभ्यन्तर-बाह्य द्वार-नेत्रिये व देव आभ्यन्तर देखे, तिर्यच बाह्य देखे मनुष्य आभ्यन्तर और व ॥ दोनों देखे काण्ड कि तीर्थरुतों में अवधिज्ञान जन्म से ही होता है ।

५ देश और सर्व धकी-नारकी, देवता और तिर्यच देश धकी और मनुष्य सर्व धकी ।

६ अनुगामी और अनानुगामी-नारकी देवता का अवधि ज्ञान अनुगामी (अर्थात् साथ २ रहने वाला) अवधि ज्ञान होता है । तिर्यच और मनुष्य का अनुगामी तथा अनानुगामी दोनों प्रकार का होता है ।

७ हायमान पर्थमान और ८ अवठीया द्वारः- नारकी देवता का अवधि ज्ञान अवठीया होवे (न तो पटे और न पड़े, उतना ही रहता है) मनुष्य और तिर्यच का हायमान, पर्थमान तथा अवठीया एवं तीनों प्रकार का अवधि ज्ञान होता है ।

६-१० पड़वाई और अपड़वाई द्वारः-नारकी देवता का अवधि ज्ञान अपड़वाई होता है और मनुष्य व तिर्यच का अवधि ज्ञान पड़वाई तथा अपड़वाई दोनों प्रकार का होता है ।

॥ इति अवधि पद सम्पूर्ण ॥

जाति सरखादिक ज्ञान से श्रुत सहित चारित्र्य धर्म करने की रुचि उत्पन्न इसे निसर्ग रुई कहते हैं ।

३ सूक्त रुई—इसके दो भेद—१ अंग पविठ । २ अंग साहिर । आचारांगमादि १२ अंग अंगपविठ इनमें से ११ अंग कालिक और बारहवां अंग साष्टवाद यह उत्कालिक । अंग साहिर के दो भेद—१ आवश्यक २ आवश्यक व्यतिरिक्त । आवश्यक-सामायकादिक छ अध्येयन उत्कालिक तथा उत्तराध्येयनादिक कालिक सूत्र । उपवाई प्रमुख उत्कालिक सूत्र सुनने की तथा पढ़ने की रुचि उत्पन्न होने उसे सूत्र रुचि कहते हैं ।

४ उपपत्तरुई—मज्झान द्वारा उपाजित कर्मों को ज्ञान द्वारा खपावे, ज्ञान से नये कर्म न बान्धे, मिथ्यात्व द्वारा उपाजित कर्मों को समकित द्वारा खपावे, समकित के द्वारा नवीन कर्म नहीं बान्धे । अग्रत से कंधे हुवे कर्मों को व्रत द्वारा खपावे व व्रत से नये कर्म न बान्धे । प्रमाद द्वारा उपाजित कर्मों को अप्रमाद से खपावे और अप्रमाद के द्वारा नये कर्म न बान्धे । कषाय द्वारा बन्धे हुये कर्मों को अकषाय द्वारा खपावे व अकषाय के द्वारा नये कर्म न बान्धे । अशुभ योग में उपाजित कर्मों को शुभ योग में खपावे व शुभ योग के द्वारा नये कर्म न बान्धे । पाँच एतद्वय के बाद कब आश्रय में उपाजित कर्म नष्ट रूप में रहें

“ अशुभ योग नष्ट रूप में रहें व नवीन कर्म न बान्धे,

अतः अज्ञानादिक आश्रय मार्ग का त्याग करके ज्ञानादिक संवर मार्ग का आराधन करें एवं तीर्थंकरों का उपदेश सुनने की रुचि उपजे । इसे उपदेश रुचि (उचएस रुचि) तथा उगाढ रुचि भी कहते हैं ।

धर्म ध्यान के चार अवलम्बन-वायणा, पूछणा, परिचट्टणा और धर्म कथा ।

१ वायणा-विनय सहित ज्ञान तथा निर्जरा के निमित्त सूत्र के व अर्थ के ज्ञाता गुर्वादिक के समीप सूत्र तथा अर्थ की वाचनी लेवे उसे वायणा कहते हैं ।

२ पूछणा-अपूर्व ज्ञान प्राप्त करने के लिए तथा जैन मत दीवाने के लिए, संदेह दूर करने लिए अथवा अन्य की परीक्षा के लिए यथा योग्य विनय सहित गुर्वादिक से प्रश्न पूछे उसे पूछणा कहते हैं ।

३ परिचट्टणा-पूर्व पठित जिन भाषित सूत्र व अर्थों को अस्खलित करने के लिए तथा निर्जरा निमित्त शुद्ध उपयोग सहित शुद्ध अर्थ व सूत्र की बारंबार स्वाध्याय करे उसे परिचट्टणा कहते हैं ।

४ धर्म कथा-जैसे भाव वीतराग ने परुषे हैं वैसे ही भाव मयं अंगीकार करके विशेष निश्चय पूर्वक शङ्का, कंखा, वित्तिगच्छा रहित अपनी निर्जरा के लिए व पर-उपकार निमित्त सभा के अन्दर वे भाव वैसे ही परुषे, उसे धर्म कथा कहते हैं । इस प्रकार की धर्म कथा कहने वाले तथा

शक्तिवन्त इन्द्रादिक लोक पाल प्रमुख रूपवान देदीप्य-
वान् वंछित भोग संयोग में प्रवर्त हुआ जघन्य १० हजार
वर्ष उत्कृष्ट ३१ सागरोपम एवं अनन्ती बार भोगा । इन्द्र
महाराज के रूप में एक मय के अन्दर ७ पन्योपम की
देवी, बावीश क्रोड़ा क्रोड़, पिच्चाशी लाख क्रोड़, एकोत्तर
हजार क्रोड़, चार से अठावीश क्रोड़, सत्तावन लाख
चौदह हजार दोसो अठ्ठावीश ऊपर पाँच पन्य की ८
इतनी देवियों के साथ भोग करने पर भी तृप्ति न हुई ।
मनुष्य के अन्दर स्त्री पुरुष रूप में हुआ । देव कुरु उच्च
कुरु के अन्दर युगल युगलानी हुआ जहाँ महामनोहर रूप
मनवंचित सुख भोगे । दश प्रकार के कन्य वृक्षों से सुख
भोगे । स्त्री पुरुष का वय मात्र के लिये भी वियोग नहीं
पड़ा । ३ पन्योपम तक निरन्तर सुख भोगे । इरिवासरम्यक
वास में २ पन्योपम, हेमवय हिरण्य वय लेश के अन्दर
१ पन्य तक, छप्पन अन्तरदीपा के अन्दर पन्योपम का
असंख्यतातर्वा भाग, युगल युगलानी रूप में अनन्ती बार
स्त्री पुरुष के रूप में खेला परन्तु आत्म तृप्ति नहीं हुई ।
चक्रवर्ती के घर स्त्री रत्न के रूप में लक्ष्मी समान रूप
अनन्ती बार यह जीव पाकर खेला, परन्तु तृप्त नहीं हुआ ।
वासुदेव भंडारीक राजा व प्रधान व्यवहारीया के घर स्त्री
रूप में मनोमय सुखों में पूर्व क्रोडादिक के आयुष्य पने
प्रवर्त हुआ । यही जीव मनुष्य के अन्दर कुरुपवान, दुर्भागी

नीच कुल, दारिद्री भर्तार की स्त्री रूप में, अलक्ष रुद्र दुर्भागिणी पने और नष्ट पने प्रवर्त हुआ । तभी मनुष्य पने स्त्री पुरुष के अवतार पुरे नहीं हुवे । तिर्यच पंचन्द्रिय जलचरादि के अन्दर स्त्री वेद से प्रवर्त हुआ । वो जीव सात नरक में, पांच एकेन्द्रिय में, तीन विकलेन्द्रिय तथा असंज्ञी तिर्यच मनुष्य के अन्दर नियमा नपुंसक वेद से तथा संज्ञी तिर्यच मनुष्य के अन्दर भी जीव नपुंसक वेद से प्रवर्त हुआ परमार्थे लागठ स्त्री वेद से प्रवर्त हुआ । उत्कृष्ट ११० पन्थ और पृथक् पूर्व क्रोढ़ तक स्त्री वेद में खेला जघन्य आयुष्य भोगने के आधी अन्तर्मुहूर्त, पुरुष वेद में उत्कृष्ट पृथक् सो सागर जाजेरा तक खेला । जघन्य आयुष्य भोगने के आधी अन्तर्मुहूर्त, नपुंसक वेद उत्कृष्ट अनन्त काल चक्र असंख्यात पुद्गल परावर्तन तक खेला । जहां गया वहां अकेला पुद्गल के संयोग से अनेक रूप परावर्तन किये । यह सर्व रूप व्यवहार नय से जानना । इस प्रकार के परिभ्रमण को मिटाने वाले थी जैन धर्म के अन्दर शुद्ध श्रद्धा सहित शुद्ध उद्यम पराक्रम करे तब ही आत्मा का साधन होवे व इस समय आत्मा के सिद्ध पद की प्राप्ति होती है । इसमें निश्चय नय में एक ही आत्मा जानना चाहिये । जब शुद्ध व्यवहार में प्रवर्त हो कर अशुद्ध व्यवहार को दूर करे तब सिद्ध गति प्राप्त होती है । इस प्रकार की मेरी एक आत्मा है । अपर परिवार स्वार्थ

रूप है । और पतंगसा मीससा और बीससा पुद्गल ये पर्वत
करके जैसे स्वभाव में हैं वैसे स्वभाव में नहीं रहते हैं अतः
अशाश्वत है । इस लिये अपनी आत्मा को अपने कार्य का
साधक व शाश्वत जानकर अपनी आत्मा का साधन करे ।

२ अणुच्छाणुप्पेहा-क्यों पुद्गल की अनेक प्रकार
से यत्न करने पर भी ये अनित्य हैं । नित्य केवल एक
थी जैन धर्म परम सुख दायक है । अपनी आत्मा को
नित्य जान कर समकित्वादिक संवर द्वारा पुष्ट करे । यह
दूसरी अणुप्पेहा है ।

३ असंख्यणुप्पेहा-इस प्रकार के अन्दर वं पर लोक
में जाते हुये जीव को एक समाकेत पूर्वक जैन धर्म विना
जन्म जरा मरण के दुःख दूर करने में अन्य कोई शरण
समर्थ नहीं ऐसा जान कर श्री जैन धर्म का शरण लेना
चाहिये जिससे परम सुख की प्राप्ति होवे यह तीसरी
अणुप्पेहा है ।

४ संसाराणुप्पेहा-स्वार्थ रूप संसार समुद्र के
अन्दर जन्म जरा मरण संयोग वियोग शारीरिक मानसिक
[सु, कषाय मिथ्यात्व, तृष्णारु अनेक अल कष्टोत्थादिक
दि तरंगों से चार गति चौबीस दण्डक के अन्दर
परिभ्रमण करते हुये जीव को श्री जैन धर्म रूप द्वीप का
प्राधार है और मंगम रूप नाव को शुद्ध समकित रूप
नेत्रात्मक नाविक (नाव चलाने वाला) है ऐसी नावों के

❀ छ लेख्या ❀

(श्री उत्तराध्ययन सूत्र, ३४ वां अध्ययन)

छ लेख्या के ११ द्वारः—१ नाम २ वर्ण ३ रस ४ गंध ५ स्पर्श ६ परिणाम ७ लक्षण = स्थानक ८ स्थिति ९ गति ११ चवन ।

१ नाम द्वार—१ कृष्ण लेख्या २ नील लेख्या ३ कापोत लेख्या ४ तेजो लेख्या ५ पद्म लेख्या ६ शुक्ल लेख्या ।

२ वर्ण द्वारः—कृष्ण लेखा का वर्ण जल सदित मेघ समान काला, तथा भंस के सिंग समान काला, अरीठे के बीज समान, गाड़ी के खंजन (काजली) समान और आँख की कीकी समान काला । इनसे भी अनंत गुणा काला ।

नील लेख्याः—मशोक धूव, चास पच्ची की पांख और वैडूर्य रत्न से भी अनंत गुणा नीला इस लेख्या का वर्ण होता है ।

कापोत लेख्या—अलशी के फूल, कोयल की पांख, कवूतर की गर्दन कुछ लाल कुछ काली आदि । इनसे भी अनंत गुणा अधिक कापोत लेख्या का वर्ण होता है ।

तेजो लेख्या—उगता हुआ सूर्य, तोते की चोंच,

४ गंध द्वार-गाय, कुचा, सर्प आदि के मूत्र से भी अनन्त गुणी अधिक अग्रशस्त गन्ध प्रथम तीन लेख्या की होती है । कपूर, केवड़ा, प्रमुख घोटने के समय जैसी सुगन्ध निकलती है उस से भी अनन्त गुणी अधिक प्रशस्त सुगन्ध पिछती लेख्याओं की होती है ।

५ स्पर्श द्वार-करव की धार, गाय की जीम, घुंघ (ज) का तथा बांस का पान, आदि से भी अनन्त गुणा लक्षण अग्रशस्त लेख्या का स्पर्श होता है पुर नामक वनस्पति, मक्खन, सरसव के फूल व मखमल से भी अनन्त गुणा अधिक कोमल प्रशस्त लेख्याओं का स्पर्श होता है ।

६ परिणाम द्वार-लेख्या तीन प्रकारे प्रथमे-जघन्य, मध्यम, और उत्कृष्ट तथा नव प्रकारे परिणामे ऊपर के तीन प्रकार के पुनः एक एक के तीन भेद होते हैं जैसे जघन्य का जघन्य, जघन्य का मध्यम, और जघन्य का उत्कृष्ट एवं इरेक के तीन तीन करते, नव भेद हवे । ऐसे ही नव के सचावीश, सचावीश के एकाशी और एकाशी के दो सौ तेतालीश भेद होते हैं । इतने भेदों से लेख्या परिणमती है ।

७ लक्षण द्वारः-कृष्ण लेख्या के लक्षण-पांच आश्रव का सेवन करने वाला, अगुप्तिवन्त, अकाय जीव का हिंसक, आरम्भ का तीव्र परिणामी व द्वेषी, पाप करने में साह-

सिक, निष्ठुर परिणामी, जीव हिंसा, सुन्या रहित करने वाला और अजितेन्द्रो आदि लक्षण कृष्ण लेश्या के हैं। नील लेश्या के लक्षणः—ईर्ष्यावन्त, अमृपावन्त, तप रहित, मायावी पाप करने में शर्माये नहीं, गृवी, धृतारा, प्रमादी रस-लोलुपी, माया का गवेपी, आरंभ का अत्यागी, पाप के अन्दर साहसिक ये लक्षण नील लेश्या के हैं। कापोत लेश्या के लक्षणः—वक्र भापी, वक्र कार्य करने वाला, माया करके प्रसन्न होवे, सरलता रहित, मुँह पर कुङ्कु और पीठ पीछे कुङ्कु, मिथ्या व मृपा भापी, चोरी मत्सर का करने वाला, आदि। तेजो लेश्या के लक्षणः—मर्यादा वन्त, माया रहित, चलता रहित, कुतुहल रहित, विनय वन्त, जितेन्द्रो, शुभ योग वन्त, उपध्यान तप सहित, दृढ धर्मी, प्रिय धर्मी, पार-से डरने वाला आदि। पद्म लेश्या के लक्षणः—क्रोध मान माया लोभ को जिसने पतले (कम) किये हैं, प्रगाँव चित्त, आत्म निग्रही, योग उपध्यान सहित, अल्प भापी, उपगाँव, जितेन्द्रो। शुक्ल लेश्या के लक्षणः—आर्त्त ध्यान, रौद्र ध्यान, से सर्वथा रहित, धर्म ध्यान, शुक्ल ध्यान सहित, दश प्रकार की चित्त समाधि सहित, आत्मनिग्रही, आदि।

२ लेश्या स्थानक द्वारः—असंख्यात उत्सर्पिणी अवसर्पिणी के जितने समय होते हैं तथा असंख्यात लोक के जितने आकाश प्रदेश होते हैं उनसे लेश्या के स्थानक जानना।

परिणमते समय कोई जीव उपजता व चरता नहीं तथा
 लेखा के अन्त समय में कोई जीव उपजता व चरता
 नहीं । परभव में कैसे चरे ? इसका वर्णन-लेखा पर
 मव की आई हुई अन्तर्दृष्टि गये बाद शेष अन्तर्दृष्टि
 व्याप्य में पाकी रहने पर जीव परमव के अन्दर जावे ।

॥ इति भी लेखा का थोकड़ा सम्पूर्ण ॥





यदुत्त्वः--सर्व से कम मिथ्र योनीया--उपसे अचेत योनीया
 असंख्यात गुणा और उस से सचित्त योनीया अनन्त गुणा ।
 योनी तीन प्रकार की--संघुड़ा विषदा और संघुड़ाविषदा
 संघुड़ा अर्थात् ढंली हुई विषदा याने सुती (उघाड़ी)
 हुई और संघुड़ा विषदा याने कुछ ढंली हुई और कुछ
 सुती हुई पांच स्थावर देवता और नारही की योनी एक
 संघुड़ा, तीन विकलेन्द्रिय, समुच्चय तिर्यक् और मनुष्य में
 तीनों ही योनी पावे । संज्ञी तिर्यक् और संज्ञी मनुष्य में
 योनी एक संघुड़ाविषदा । इनका अन्त यदुत्त्व सर्व से कम
 संघुड़ा विषदा उनसे विषदा योनीया असंख्यात गुणा ।
 उनसे अपोनीया अनन्त गुणा । उनसे संघुड़ा योनीया
 अनन्त गुणा । योनी तीन प्रकार की है--संख्या अर्थात्
 शंख के आकार समान । कच्छा याने कछुओ के आकार
 समान और घंटा पचा कहता बांस के पत्र के समान ।
 चक्रवर्ती की स्त्री स्तन की योनी शंख पत्र । ऐसी योनी
 वाली स्त्री के संतान नहीं होती है ५४ सहास्र पृष्ठा की
 माता की योनी काचये (कछुआ) के आकार समान
 होवे और सर्व मनुष्यों की माता की योनी बांस के पत्र
 के आकार समान होती है ।

❀ इति श्री योनी पत्र सम्पूर्ण ❀







करे (२) सिद्ध का विनय करे (३) आचार्य का विनय करे (४) उपाध्याय का विनय करे (५) स्वधिर का विनय करे (६) गण (बहुत आचार्यों का समूह) का विनय करे (७) कुल (बहुत आचार्यों के शिष्यों का समूह) का विनय करे (८) स्वधर्मों का विनय करे (९) संघ का विनय करे (१०) संभोगी का विनय करे एवं दत्त का बहुत मान पूर्वक विनय करे जैन शासन में विनय मूल धर्म कहते हैं। विनय करने से अनेक सद्गुणों की प्राप्ति होती है।

(४) शुद्धता के तीन भेदः—(१) मन शुद्धता मन से अरिहंत-देव-किं ओं ३४ अतिराग, ३५ वाणी, = महा प्रतिहार्य सहित, १८ दूषण सहित १२ गुण सहित हैं वे ही अमर देव व सच्चे देव हैं। इनके सिवाय हजारों कष्ट पड़े तो भी सरागी देवों को मनसे स्मरण नहीं करे (२) वचन-शुद्धता-वचन से गुण कीर्तन ऐसे अरिहंत देव के करे व इनके सिवाय सरागी देवों का नहीं करे। (३) काया शुद्धता-काया से अरिहंत सिवाय अन्य सरागी देवों को नमस्कार नहीं करे।

५ लक्षण के पाँच भेदः—(१) सम, शत्रु मित्र पर समभाव रखे (२) संवेग-वैराग्य भाव रखे और संसार असारे है, विषय व कषाय से अनन्त काल पर्यन्त भ्रम प्रमथ होता है, इस मय में अच्छों सामग्री मिली है अतः इस का आगमन करना चाहिये, इत्यादि नित्य चिंतन



सन्देह करे इसका फल होवेगा या नहीं ? वर्तमान में तो कुछ फल नजर नहीं आता आदि इस प्रकार का सन्देह करे (४) पर पाखण्डी से नित्य परिचय रखे (५) पर-पाखण्डियों की प्रशंसा करे । एवं समकित के पांच दृष्टियों को अवश्य दूर करना चाहिये ।

(८) प्रभावना = (१) जिस काल में जितने सूत्र होते हैं उन्हें गुरु गम से जाने यह शासन का प्रभावक बनता है (२) बड़े आडम्बर से धर्म कथा व्याख्यान आदि के द्वारा शासन के ज्ञान की प्रभावना करे (३) महान विकट तथ्यवा करके शासन की प्रभावना करे (४) तीन काल अथवा तीन मत का ज्ञाता होवे (५) तर्क, विवरण, हेतु, वाद, युक्ति, न्याय तथा विद्यादि बल से वादियों को शास्त्रार्थ में पराजय करके शासन की प्रभावना करे (६) पुरुषार्थी पुरुष दीक्षा लेकर शासन की प्रभावना करे (७) कविता करने की शक्ति होवे तो कविता करके शासन की प्रभावना करे (८) बलवर्ध आदि कोई पद प्रव लेना होवे तो पदुत से मनुष्यों की समा में लेवे कारण कि इससे लोकों को शासन पर भद्रा अथवा प्रतादि लेने की रुचि बढ़े । अथवा दुर्बल स्वधर्मी भाइयों को महायता करे । यह भी एक प्रकार की प्रभावना है परन्तु आजकल चामामे में अमन्य वस्तु की अथवा तद् आदि की प्रभावना करते हैं । दीर्घ दृष्टि से विचार करने योग्य है कि इस प्रभावना से क्या



गाथा

जीव गइन्द्रिय काण जोए वेद कसाय लेसाय ।

सम्मत णाय दंसण संयम उचओग आहारे ॥१॥

भासगयं परित्त पज्जस सुहम सघो भवत्ति ।

गरिभेय एतेसित पदाणं कायडिई दोइ णायव्या ॥२॥

क्रम मार्गणा जयन्त कायस्थिति उत्कृष्टं कायस्थिति

१ समुद्रय जीरही सायता सायता

२ नाही की १० हजार वर्ष ३२ सागरोपम

३ देता की " "

४ देही की " ५५ पलही

५ निर्देव की अनन्तपूर्व अनन्त काल (वन)

६ निर्देवकी की " २५ वर्ष और ५० कोड़ वर्ष

७ मनुष्य की " " "

८ मनुष्यकी की " " "

९ बिहु नमगान् की सायता सायता

१० मयया नाही की अनन्तपूर्व अनन्तपूर्व

११ " देता की " "

१२ " देही की " "

१३ " निर्देव की " "

१४ " निर्देवकी की " "

१५	"	मनुष्य की	"	"
१६	"	मनुष्यनी की	"	"
१७	पर्याप्ताना	की	१० हजार वर्ष	३३ सागर में अनन्त- में अंतर्मुहूर्त न्यून मुहूर्त न्यून
१८	"	देवता	"	भव स्थिति में "
१९	"	देवी	"	४५ पक्ष में "
२०	"	तिर्यच	अन्तर्मुहूर्त	३ पक्ष में "
२१	"	तिर्यचनी	"	" "
२२	"	मनुष्य	"	" "
२३	"	मनुष्यनी	"	" "
२४	महन्द्रिय	०	अनादि अनन्त अना.सा	
२५	एकेन्द्रिय	अंतर्मुहूर्त	अनन्त काल (वन)	
२६	द्वेन्द्रिय	"	संख्यात वर्ष	
२७	तेन्द्रिय	"	"	
२८	चन्द्रिय	"	"	
२९	पंचेन्द्रिय	"	१००० सागर साधि	
३०	अनिन्द्रिय	०	सादि अनन्त	
३१	तत्कार्या	०	अ० अनन्त, अ० सां	
३२	पृथ्वी काय	अन्तर्मुहूर्त	असंख्यात काल	
३३	अर	"	"	
३४	अर	"	"	

३५ वाउ काय	अन्तर्मुहूर्त	असंख्यात काल
३६ वनस्पति काय	"	अनन्त काल (वन०)
३७ व्रस काय	"	२००० सागर और सं० वर्ष
३८ अकाय	सादि अनन्त	सादि अनन्त
३९ से ४५, ३१ से ३७ का अवर्षासा	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त
४६ से ५० ३२ से ३६ का पर्यासा	"	संख्यात वर्ष
५१ सकाय	"	प्रत्येक सो सागर
५२ व्रस काय पर्यासा	"	" "
५३ समुच्चय बादर	"	असं० काल असं० दि० तने लोकाकाश प्रदेश
५४ बादर वनस्पति	"	"
५५ समुच्चय निगोद	"	अनन्त काल
५६ बादर व्रस काय	"	२००० सागर जावेरी
५७ से ६२ बादर गू० अ०, ते०, वा०, प०, व०, वा० निगोद.	"	७० कोड़ा कोड़ा सागर
६३ से ६९ समुच्चय शुद्धम गू०, अ०, ते०, वा०, वन०, निगोद	"	असंख्यात काल



११० नपुंसक वेद	१ समय	अनन्त काल (वन०)
१११ अवेदी	सादि अनन्त सा. सा., ज. १ स. उ.	अं. मु.
११२ सकपायी सादि	अ. अ., अ.	
सांव	सां. सादि सांव देश न्यून अर्ध पुद्गत	
११३ क्रोध कपायी	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त
११४ मान	"	"
११५ माया	"	"
११६ लोभ	१ समय	"
११७ अकपायी	सा. अ., सा. सां, ज. १ समय, उ. अं. पु.	
११८ सलेशी	०	अ. अ. अ. सां.
११९ कृष्ण लेशी	अन्तर्मुहूर्त	१३ सागर अं. मु. प०
१२० नील	"	१० " अन्य असं भाग अधिक
१२१ कपोत	"	३ " "
१२२ तेजो	"	२ " "
१२३ पद्म	"	१० " अं. मु. अधिक
१२४ शुक्ल	"	३३ " "
१२५ अलेशी	"	सादि अनन्त
१२६ समकित दष्टि	"	सा. अं, सा. स' ६६ सा. सा
१२७ विध्या	अ. अ., अ. मां,	अनन्त काल

૧૨૮ મિથ્યા દષ્ટિ	અં. ૬.	સા. ગાં, (અથ. પુ.)
સાદિ સાંત		
૧૨૯ મિથ્ર દષ્ટિ	,,	અં. ૬.
૧૩૦ હાયક સમક્ષિત	૦	સાદિ અનન્ત
૧૩૧ હયોપશમ	અં. ૬.	૬૬ સાગર અધિક
૧૩૨ સાસ્ત્રાદાન	૧ સમય	૬ આવલિકા
૧૩૩ ઉપશમ	,,	અન્તર્પ્રહર્ત
૧૩૪ વેદક	,,	,,
૧૩૫ સનાળી	અન્તર્પ્રહર્ત	સા. અ., સા. સાં
		૬૬ સાગર
૧૩૬ મતિ જ્ઞાની	,,	૬૬ સાગર અધિક
૧૩૭ શ્રુત	,,	,,
૧૩૮ અવધિ	૧ સમય	,,
૧૩૯ મનઃપર્યવ	,,	દેશ ન્યૂન ક્રોધ પૂર્વ
૧૪૦ કેવલ	૦	સાદિ અનન્ત
૧૪૧ અજ્ઞાની	અં. અં, અં. સાં,	(સાં સાંત
૧૪૨ મતિ અ.	સાં. સાં. કી	{ યુ. ઉ. અર્ધ પુ.
૧૪૩ શ્રુત	જં. અં.	{
૧૪૪ વિભંગ જ્ઞાની	૧ સમય	૩૩ સાગર અધિક
૧૪૫ ચક્ષુ દર્શની	અન્તર્પ્રહર્ત	પ્રત્યેક હજાર સાગર
૧૪૬ અચક્ષુ	૦	અં. અ, અં. સાં
૧૪૭ અવધિ	૧ સમય	૧૩૨ સાગર સાધિક

१४८ केवल	०	सादि अनन्त
१४९ संयती	१ समय	देश न्यून क्रोध पूर्व
१५० असंयती	अ० सु०	अ.अ, आस., मा.सां.
१५१ सादि सांत	॥	अनन्त काल (अर्ध पु.)
१५२ संयता संयत	॥	देशन्यून क्रोध पूर्व
१५३ नोसंयत नोअसंयत	०	सादि अनन्त
१५४ सामायिक चारित्र	१ समय	देशन्यून क्रोध पूर्व
१५५ छेदोपस्थानीय	अन्तर्मुहूर्त	॥
१५६ परिहार विमुद्ध	॥ १८ माह	॥
१५७ सूक्ष्म संपराय	१ समय	अन्तर्मुहूर्त
१५८ यथाख्यात	॥	देशन्यून क्रोध पूर्व
१५९ साकार उपयोग	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त
१६० अनाकार	॥	॥
१६१ आहारक छयस्थ	२ समय न्यून	असंख्यातो काल
१६२ केवली	अन्तर्मुहूर्त	देशन्यून क्रोध पूर्व
१६३ अनाहारी छयस्था	१ समय	२ समय
१६४ केवलीसयोगी ३	॥	३ ॥
१६५ अयोगी ५ हस्त अचर	॥	उच्चारण काल
१६६ सिद्ध	०	सादि अनन्त
१६७ मापक	१ समय	अन्तर्मुहूर्त
१६८ अमापक सिद्ध	०	सादि अनन्त
१६९ समानी	अन्तर्मुहूर्त	अनन्त काल

१७० काय परत	अन्तर्मुहूर्त असं० काल
१७१ संसार परत	" अर्ध पु०
१७२ काय अपरत	" अन० काल (व०)
१७३ संसार "	० अ० अ०, अ०
१७४ नो परतापरत	० सादि अनन्त
१७५ पर्याप्ता	अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक सो सा०
१७६ अपर्याप्ता	" अन्तर्मुहूर्त
१७७ नो पर्याप्तापर्याप्ता	० सादि अनन्त
१७८ सूक्ष्म	अन्तर्मुहूर्त असं० काल (पु०)
१७९ वादर	" (लोकाकाश)
१८० नो सूक्ष्म वादर	० सादि अनन्त
१८१ संज्ञी	अन्तर्मुहूर्त प्र० सो सागर साधिक
१८२ असंज्ञी	" अनन्त काल (वन०)
१८३ नो संज्ञी-असंज्ञी	० सादि अनन्त
१८४ भव सिद्धिया	० अनादि सांव
१८५ अभव सिद्धिया	" अनन्त
१८६ नो भव सिद्धिया अनव.वि०	सादि "
१८७ से १८१ पांच अस्ति	० अनादि अनंत
काय स्थित	" नाव
१८८ चनं	० अ० अ०, ना० अ०
१८९ अवर्ध	

। इति काय स्थिति सन्तर्प ।

❧ योगों का अल्प बहुत्व ❧

(श्री भगवती सूत्र सतक २५ उद्देश्य १ ला में)

जीव के आत्म वदेष्टों में अप्यवसाय उत्पन्न होते हैं । अप्यवसाय से जीव शुभाशुभ कर्म (पुद्गल) के प्रवृत्ति करता है यह परिणाम है और यह घटन है । परिणामों की प्रेरणा से लेखा होता है । और लेखा की प्रेरणा से मन, वचन, काय का योग होता है ।

योग दो प्रकार का १ जघन्य योगः=१४ जीवों के भेद में सामान्य योग संचार २ उत्कृष्ट योग, (तारवन्धता) अनुसार उनका अल्प बहुत्व नीचे अनुसार—

(१) सर्व से कम सूक्ष्म एकेन्द्रिय का अपर्याप्ता का

जघन्य योग उन से

(२) वादर एकेन्द्रिय का अपर्याप्ता का ज० योग असं=गुणा,

(३) वे इन्द्रिय " " " "

(४) त इन्द्रिय " " " "

(५) चौरिन्द्रिय " " " "

(६) असंज्ञी पंचेन्द्रिय का " " " "

(७) संज्ञी " " " "

(८) सूक्ष्म एकेन्द्रिय का पर्याप्ता का " " " "

(९) वादर " " " "

(१०) सूक्ष्म " अपर्याप्ता का उ० योग " "

(११) वादर	"	"	"	"	"
(१२) सूक्ष्म	"	पर्याप्ता का	"	"	"
(१३) वादर	"	"	"	"	"
(१४) वे इन्द्रिय का	"	३० उ० योग	"	"	"
(१५) ते इन्द्रिय	"	"	"	"	"
(१६) चौरिन्द्रिय का	"	"	"	"	"
(१७) असंज्ञी पंचेन्द्रिय का	"	"	"	"	"
(१८) संज्ञी	"	"	"	"	"
(१९) वे इन्द्रिय का अपर्याप्ता का उ०	"	उ० योग	"	"	"
(२०) ते इन्द्रिय	"	"	"	"	"
(२१) चौरिन्द्रिय का	"	"	"	"	"
(२२) असंज्ञी पंचेन्द्रिय का	"	"	"	"	"
(२३) संज्ञी	"	"	"	"	"
(२४) वे इन्द्रिय का पर्याप्ता का	"	"	"	"	"
(२५) ते इन्द्रिय	"	"	"	"	"
(२६) चौरिन्द्रिय का	"	"	"	"	"
(२७) असंज्ञी पंचेन्द्रिय का	"	"	"	"	"
(२८) संज्ञी	"	"	"	"	"

॥ इति योगों का अल्प बहुत्व ॥

ॐ पुद्गलों का अल्प बहुत्व ॐ

(श्री भगवती जी सूत्र शतक २५ उद्देशा बोधा)

पुद्गल परमाणु, संख्यात प्रदेशी, असंख्यात प्रदेशी और अनन्त प्रदेशी स्कन्धों का द्रव्य, प्रदेश और द्रव्य प्रदेशों का अल्प बहुत्वः—

(१) सर्व से कम अनन्त प्रदेशी स्कन्ध का द्रव्य, उनमें

(२) परमाणु पुद्गल का द्रव्य अनन्त गुणा "

(३) संख्यात प्रदेशी का " संख्यात " "

(४) असंख्यात " " असंख्यात "

प्रदेशापेक्षा अल्प बहुत्व भी ऊपर के द्रव्यान्तर।

द्रव्य और प्रदेश दोनों का एक साथ अल्प बहुत्वः—

(१) सर्व से कम अनन्त प्रदेशी स्कन्ध का द्रव्य, उनमें

(२) अनन्त प्रदेशी स्कन्ध का प्रदेश अनन्त गुणा "

(३) परमाणु पुद्गल का द्रव्य प्रदेश " "

(४) संख्यात प्रदेशी स्कन्ध का द्रव्य संख्यात गुणा "

(५) " " " प्रदेश " "

(६) असंख्यात " " द्रव्य असंख्यात गुणा "

(७) " " " प्रदेश "

ॐ चैत्र अपेक्षा अल्प बहुत्व ॐ

(१) सर्व से कम एक आद्यग प्रदेश अस्मादा द्रव्य उनमें

" संख्यात प्रदेश अस्मादा द्रव्य संख्यात गुणा "

- (१) सर्व से कम अनंत गुणा काला का द्रव्य उनसे
 (२) अनंत गुणा काला प्रदेश अनंत गुणा ॥
 (३) एक गुण काला द्रव्य और प्रदेश अनंत गुणा ॥
 (४) संख्यात प्रदेश काला पुद्गल द्रव्य संख्यात ॥ ॥
 (५) " " " " प्रदेश " " ॥
 (६) असं० " " " द्रव्य असं० " ॥
 (७) " " " " प्रदेश " " ॥

एवं ५ वर्ण; २ गन्ध, ५ रस, ४ स्पर्श, (शीत;
 उष्ण; तिग्ध; रुच) आदि १६ बोलों का विस्तार काले
 वर्ष अनुसार तीन तीन अल्प बहुत्व करना ।

कर्कश स्पर्श का अल्प बहुत्व ।

- (१) सर्व से कम एक गुण कर्कश का द्रव्य उनसे
 (२) सं० गुण कर्कश का द्रव्य सं० गुणा ॥
 (३) असं० गु० " " असं० " ॥
 (४) अनंत गु० " " अनंत " ॥

कर्कश स्पर्श प्रदेशापेक्षा अल्प बहुत्व ।

- (१) सर्व से कम एक गुण कर्कश का प्रदेश उनसे
 (२) सं० गुणा कर्कश का प्रदेश असंख्यात गुणा ॥
 (३) असं० " " " " " ॥
 (४) अनंत " " " अनंत " ॥

कर्कश द्रव्य प्रदेशापेक्षा अल्प बहुत्व

(१) सर्व से कम एक गुण कर्कश का द्रव्य प्रदेश उनसे



ॐ आकाश श्रेणी ॐ

(श्री भगवती सूत्र शतक २५ उ० ३)

आकाश प्रदेश की पंक्ति को, श्रेणी कहते हैं समुच्चय आकाश प्रदेश की द्रव्यापेक्षा, श्रेणी, अनन्ती है। पूर्वादि ६ दिशाओं की और अलोकाकाश की भी अनन्ती है।

द्रव्यापेक्षा लोकाकाश की तथा ६ दिशाओं की, श्रेणी असंख्याती प्रदेशापेक्षा समुच्चय आकाश प्रदेश तथा ६ दिशा की श्रेणी अनन्ती है।

प्रदेशापेक्षा लोकाकाश आकाश प्रदेश तथा ६ दिशा की श्रेणी असं० है प्रदेशापेक्षा अलोकाकाश आकाश की श्रेणी संख्याती, असंख्याती, अनन्ती है पूर्वादि ४ दिशा में अनन्ती है और ऊँची नीची दिशा में तीन ही प्रकार की।

समुच्चय श्रेणी तथा ६ दिशा की श्रेणी अनादि अनन्त है। लोकाकाश की श्रेणी तथा ६ दिशा की श्रेणी सादि मान्त है। अलोकाकाश की श्रेणी स्वात् सादि सान्त स्यात् सादि अनन्त स्यात् अनादि सान्त और स्यात् अनादि अनन्त है।

(१) सादि मान्त—लोक के व्याघात में

(२) सादि अनन्त—लोक के अन्तमें अलोक की भाँति है परन्तु अन्त नहीं।



❀ वल का अल्प बहुत्व ❀

पूर्वाचार्यों की मार्चीन प्रति के आधार से—

(१)	सर्वे से कम सूक्ष्म निमोद के अपर्याप्ता का बल, उनसे				
(२)	वाटर निमोद के अपर्याप्ता का बल असंख्यात गुणा				
(३)	सूक्ष्म " पर्याप्ता	"	"	"	"
(४)	वाटर " "	"	"	"	"
(५)	सूक्ष्म पृथ्वी काय के अपर्याप्ता	"	"	"	"
(६)	" " पर्याप्ता	"	"	"	"
(७)	वाटर " अपर्या०	"	"	"	"
(८)	" " पर्याप्ता	"	"	"	"
(९)	" " वनस्पति के अपर्याप्ता	"	"	"	"
(१०)	" " पर्याप्ता	"	"	"	"
(११)	तनु पाय का	"	"	"	"
(१२)	घन(दधि	"	"	"	"
(१३)	घन पायु	"	"	"	"
(१४)	कुंधया	"	"	"	"
(१५)	छाँख	"	पाँच	गुणा	"
(१६)	जूँ	"	दश	"	"
(१७)	खींटी मकोड़े	"	बीस	"	"
(१८)	मक्खी	"	पाँच	"	"
(१९)	दश मच्छर	"	दश	"	"
(२०)	भंवरे	"	बीस	"	"
(२१)	तीक	"	पचास	"	"
(२२)	चकली	"	साठ	"	"
(२३)	कचूतर	"	पन्द्रह	"	"
(२४)	कौवे	"	सौ	"	"



-
- (५१) वैमानिक " " " "
- (५२) " " इन्द्र " " " "
- (५३) तीनों ही काल के इन्द्रों से भी तीर्थंकर की कनिष्ठ
अंगुली का बल अनन्त गुण है । (तस्य केवली गम्य)

❀ इति बल का अल्प बहुत्व ❀



ॐ समकित के ११ द्वार ॐ

१ नाम २ लक्षण ३ आवन (आगति) ४ पावन
५ परिणाम ६ उच्छेद ७ स्थिति ८ अन्तर ९ निान्तर १०
आगेश ११ चय स्पर्शना और अन्न बहुत्व ।

१ नाम द्वार-समकित के ४ प्रकार । चायक, उप-
शन, चयोपशम और वेदक समकित ।

२ लक्षण द्वार:-७ प्रकृति [अनंतानुबन्धी क्रोध
मान, माया, लोभ और ३ दर्शन मोहनीय] का मूल
से चय करने से चायक समकित व ६ प्रकृति उपशमावे
और समकित मोहनीय वेदे तो वेदक समकित होता है
अनंतानु० चोक का चय करे और तीन दर्शन मोह को
उपशमावे उसे चयोपशम समकित कहते हैं ।

३ आवन द्वार-चायक सम० केवल मनुष्य भव में
आवे शेष तीन समकित चार गति में अवे ।

४ पावन द्वार-चार ही समकित गति में पावे ।

५ परिणाम द्वार-जयक समकित अनन्ता [मिदु
क श्र] उप शन समकित वाला अनन्त्यान जीव

६ उच्छेद द्वार-जयक समकित का उच्छेद कर्मा
न श्रव । शेष तीन की भजना

७ स्थिति द्वार जयक समकित मारि अनन्त

उपशम समकित ज० उ० अ० मृ०, चयोप० और वेदक की स्थिति ज० अ० मृ०, उ० दक्ष सागर जाजेरी ।

८ अन्तर द्वार-चायक समकित में अन्तर नहीं पड़े । शेष २ में अन्तर पड़े तो ज० अ० उ० अनन्त काल यावत् देश न्यून [उष्ण] अर्ध पुद्गल परावर्त्तन ।

९ निरन्तर द्वार:-चायक समकित निरन्तर आठ समय तक आगे शेष २ समकित आगलिहा के असं० में भाग जितने समय निरन्तर आवे ।

१० आगरेण द्वार-चायक समकित एक बार ही आवे । उपशम समकित एक भवमें ज० १ बार उ० २ बार आवे और अनेक भव आधी ज० २ बार आवे शेष २ समकित एक भव आधी ज० १ बार उ० असंख्य बार और अनेक भव आधी ज० २ बार उ० असंख्य बार आवे ।

११ क्षेत्र स्पर्शना द्वार:-चायक समकित समस्त लोक स्पर्श [केवली सम० आधी] शेष २ सम० देश उष्ण मान राजू लोक स्पर्श ।

१२ अक्षय चान्द्र द्वार:-मय में कम उपशम सम० बाला, उनमें वेदक समकित बाला अनेक्यात गुण, उनमें चयोप० सम० बाला अनेक्यात गुणा, उनमें चायक सम० राजा अनन्त गुणा । (सिद्धिवा) ।

इति समकित के १२ द्वार सम्पूर्ण ॥



४ महा हेमवन्त पर्वत	=	४२१०-१०
५ हरिवास क्षेत्र	१६	=४२१-१
६ निषिध पर्वत	३२	१६=४२-२
७ महा विदेह क्षेत्र	६४	३३६=४-४
८ नीलवंत पर्वत	३२	१६=४२-२
९ रम्यकू वास क्षेत्र	१६	=४२१-१
१० रूपी पर्वत	=	४२१०-१०
११ हिमशाय क्षेत्र	४	२१०५-५
१२ शिखरी पर्वत	२	१०५२-१२
१३ ऐरावत क्षेत्र	१	५२६-६
	<u>१६०</u>	<u>१०००००-०</u>

१६ कला का १ योजना समझना

पूर्व पश्चिम का १ जाल्य योजना का माप

नं०	क्षेत्र का नाम	योजना
१	मेठ पर्वत की चौड़ाई	१००००
२	पूर्व मद्रशाल वन	२२०००
३	भाट विजय	१७७०२
४	चार बच्चार पर्वत	२०००
५	तीन झन्जर नदी	३७५
६	मीनामूल वन	७६२३
७	पश्चिम मद्रशाल वन	२२०००
	कुल १३३५	१७७०२



योजन ऊँची, ५०० घनुष्य चौड़ी है दानों तरफ नाले पत्तों के मध्य हैं जिन पर सुन्दर पुतलियों और मोती की मालाएँ हैं । मध्य भाग के अन्दर पञ्चवर वेदिका के दो भाग किये हुये हैं । [१] अन्दर के विभाग में एक बाति के घुँघो का बन्दरूण्ड है जिसमें ५ वर्ष का स्तन मय तृण है । वायु के संचार से जिसमें ६ राग और ३१ रागानिर्घे निकलती हैं । इसमें अन्य वायुद्विधियाँ और पर्वत हैं, अनेक आसन है जहाँ अन्तर देवी-देवता क्रीड़ा करते हैं [२] बाहर के विभाग में तृण नहीं है । शेष रचना अन्दर के विभाग समान है ।

मेरु पर्वत से चार ही दिशा में ४५-४५ हजार योजन पर चार दरवाजे हैं । पूर्व में विजय, दक्षिण में विजय-वन्त, पश्चिम में जयन्त और उत्तर में अपराजित नामक हैं अत्यन्त दरवाजा = योजन ऊँचा ४ योजन चौड़ा है । दरवाजे के ऊपर नव भूमि और सफेद पुषट, [गुम्बज] छत्र, चामर, ध्वजा तथा ८-८ मंगलौक हैं । दरवाजों के दोनों तरफ दो दो चौतरे हैं जो प्रासाद, तोरण चन्दन, वलश, झारी, धूप, कढ़वा और मनोहर पुतलियों से सुशोभित हैं ।

क्षेत्र का विस्तार

[१] भरत क्षेत्र मेरु के दक्षिण में अर्धचन्द्राकार है मध्य में वैतात्य पर्वत आने से भरत के दो भाग हो



का मद्रशाल वन है । दक्षिण में निपिध तक देव कुरु और उत्तर में नीलवन्त तक उत्तर कुरु है । ये दोनों दो गजदन्त के करण अर्धचन्द्राकार हैं । इस क्षेत्र में युगल मनुष्य ३ गाउ की अवगाहना उल्लेख आश्रुल के और ३ पन्थ के आयुष्य वाले रहते हैं । देव कुरु में कुरु शान्मली वृक्ष, चित्र विचित्र पर्वत १०० कंचन गिरि पर्वत और ५ द्रव हैं । इसी प्रकार उत्तर कुरु में भी हैं । परन्तु ये जम्बू सुदर्शन वृक्ष हैं ।

निपिध और महाहिमघन्त पर्वत के मध्य में हरिवास क्षेत्र है । तथा नीलवन्त और रूपी पर्वत के बीच में रम्यकू वास क्षेत्र है । इन दो क्षेत्रों में २ गाउ की अवगाहना और २ पन्थ की स्थिति वाले युगल मनुष्य रहते हैं ।

महाहिमघन्त और शूल हेमघन्त पर्वत के बीच में हेमवाय क्षेत्र और रूपी तथा शिखरी पर्वत के मध्य में द्विगुवाय क्षेत्र है इन दोनों क्षेत्रों में १ गाउ की अवगाहना वाले और १ पन्थ का आयुष्य वाले युगल मनुष्य रहते हैं ।

क्षेत्र	उ० उ० चौड़ाई	घाट	जीवा	धनुष कीट	
	यो० कला	यो० कला	यो० कला	यो० कला	
दक्षिण	भरत	२३८ ३	०	६३४८ १२	६३५९ १
उत्तर	"	"	१८६२ ३४	१४४३१ ५	१४४२८ १३
हेमवाय	क्षेत्र	२१०४ ४	६३४२ ३	३३५३४ १६	३८३४० १०
हरिवास	"	८४३१ १	१४३५१ ६	३३६०१ १३	५४०१६ ४
महाविदेह	"	३३८८४ ४	३३३५३ ३	१०००००	१४८११३ १६

(चूत हेमवन्त, महा हेमवन्त, निषिध, नीलवन्त, रूरी और शिखरी) पर्वत हैं ।

४ गज दंता पर्वत—देव कुरु उत्तर कुरु और विजय के बीच में आये हुये हैं । नाम—गंधमर्दन, मालवन्त, विष्णुप्रभा और सुमानस ।

५ वृत्तल वैताल्य—हेमराय, दिग्गवाय, हरिवास, सम्यक्वास के मध्य में हैं । नाम—सदाबाई, वयदाबाई, गन्धाबाई, मालवन्ता ।

४ पित विनितादि निषिध पर्वत के पास सीता नदी के दोनों तट पर पित और विचिन पर्वत हैं । तथा नीलवन्त के पास सीतोदा के दो तट पर जमग और समग दो पर्वत हैं ।

१ जम्बू द्वीप के चराचर मध्य में भेरु पर्वत है ।

पर्वत के नाम ऊँचाई गहराई विस्तार
 २०० कंचन गिरि पर्वत १०० यो. २५ यो. १०० यो.
 ३४ दीर्घ वैताल्य " २५ यो. २५ गाउ ५० यो.
 १६ वच्चार " ५०० यो. ५०० गाउ ५०० यो.

यो. कला

चूल हेमवन्त और शिखरी १०० यो. २५ यो. १०५२-१२
 महा हेमवन्त और रूरी २०० यो. ५० यो. ४२१० १०
 निषिध और नीलवन्त ४०० यो. १०० यो. १६=४२-२
 ४ गजदंता पर्वत ० यो. १२५ यो. ३०२०२ ६

योजन ऊँचा मूल में ५०० यो. मध्य में ३७५ यो. और ऊपर २५० यो. विस्तार वाला है । अनेक पुष्प, गुच्छा गुमा, बेली, तृण से शोभित है । विद्याधरो और देवताओं का क्रीड़ा स्थान है ।

२ नन्दन वन-मद्रशाल से ५०० यो. ऊँचे भेरु पर बलयाकार है । ५०० योजन विस्तार है घंटिका वन-गण्ड, ४ मिद्धायनन, १६ बावहिये, ४ ग्रामाद पूर्ववत् है । ६ कूट है । नन्दन वन कूट, भेरु कूट, निपिष कूट, हेमवान्त कूट, भजित कूट, रुचित, मागरचित, वज्र और पल कूट, ८ कूट, ५०० यो. ऊँचे हैं आठों ही पर १ पद्म वाली ८ देवियों के भवन हैं नाम-मेघकरा, मेघवती, सुमेधा, हेममालिनी, सुवच्छा, वच्छामिश्रा, वज्रहेना, पल-हका देवी । वन कूट १००० योजन ऊँचा, मूल में १००० यो. मध्य में ७५० यो. ऊपर ५०० यो. विस्तार है । वन देवता का महल है । शेष मद्रशाल वन समान सुन्दर और विस्तार वाला है ।

(३) मृमानस वन-नन्दन वन में ६०० यो. ऊँचा है ५०० यो. विस्तार वाला मूल के चारों ओर है । घंटिका वनमण्ड, १६ बावहिये, ४ मिद्धायनन, शक्र-द्र देव-मन्द क महल आदि प्रधान है ।

४ पांडव वन-मृमानस वन में ३६००० यो. ऊँचा ३६००० यो. विस्तार वाला है । ३६०० यो. घंटी आकार वन है । भेरु

महा हेमवन्त	"	=	"	"	"
निषिध	"	६	"	"	"
नीलवन्त	"	६	"	"	"
रूपी	"	८	"	"	"
शिवरी	"	११	"	"	"
वैताल्य ३४×६=	३०६	२५	गाउ	२५	गाउ १२॥ गाउ
वहार १६×४=	६४	५००		५००	२५०
विष्णुप्रभा गजदंता पर ६	"		"	"	"
मालवन्ता	"	६	"	"	"
सुमानस	"	७	"	"	"
शंघमाल	"	७	"	"	"
मेरु के नंदन वनमें	६	"	"	"	"
	४६७				
मद्रशाल	"	=	"	"	"
देव कुरु में	८	८	यो०	८	यो० ४ यो
उत्तर कुरु में	८	"	"	"	"
चक्र पर्वों के विजय में ३४	"		"	"	"
	५२५				

गज दंता के २ और नंदन वन का १ फूट और
१००० यो० ऊंचा, १००० यो० मूल में और ऊंचा ५००
योजन का विस्तार समझना ।

७६ कूट (१६ वहार, ८ उत्तर कुरु ३४ वैताल्य)
पर जिन गृह हैं ।

सुकच्छ	„ सुवच्छ	„ सुवच-	„ सुविमा	„
महा कच्छ	„ महा वच्छ	„ महा पच	„ महा विमा	„
कच्छ वती	„ वच्छ वती	„ पञ्चवती	„ विमावती	„
आग्रता	„ रमा	„ संवा-	„ वग्गु	„
भंगला	„ रमक	„ कुमुदा	„ सुवग्गु	„
पुरकला	„ रमसीक	„ निर्लीका	„ गन्धीला	„
पुष्कलावती	„ भंगलावती	„ सलीलावती	„ गन्धीलाव	„

प्रत्येक विजय १६५६२ यो० रकजा दक्षिणेश्वर लम्बी और २२२॥ यो. पूर्व पश्चिम में चौड़ी है । ये ३२ तथा १ मरत क्षेत्र, १ ऐरावत क्षेत्र-एवं ३४ गङ्गवती हो सकते हैं । ॥ ३४ विजयों में ३४ दीर्घ वैशाख पर्वत, ३४ समत गुफा, ३४ खण्ड पमा गुफा, ३४ राजधानी ३४-नगरी ३४ कृत माली देव, ३४ नट माली देव, ३४ श्रवण कूट, ३४ गंगा नदी, ३४ सिन्धु नदी ये सब शायत हैं ।

(६) द्रव द्वा-६ वषधर पर्वतों पर छे, छे, ५ देव-कुरु में और ५ उत्तर कुरु में हैं ।

द्रव के नाम दिस पर्वत लम्बाई चौड़ाई महाराई
(कुंड) पर हैं यो. यो. देवी कमल
पद्म द्रव पूत हेमवन्त १०००, ५००, १० श्री. १२०५०१२०
महा पद्म, महा हेमवन्त २०००, १०००, १० ल. २४१००२४०
तिगच्छ, निषिध ५०००, २०००, १० धृति ४२२००४२०
शरी, नीलवन्त „ „ „ वृद्धि „

प्रत्येक नदी ऊपर बताये हुए पर्वत-तथा कुंड से निकल कर आगे बढ़ती हुई गंगा प्रमास सिन्धु प्रमास आदि कुंड में गिरती हैं। यहाँ से आगे जाने पर आगे परिवार जितनी नदियाँ मिलती हैं जिनके साथ बीच में आगे हुए पहाड़ों को तोड़ कर आगे बढ़ती हैं जहाँ आगे परिवार की नदियाँ मिलती हैं जिनके साथ बढ़ कर जम्बूद्वीप की जगहों से बाहर लवण सपुद्र में मिलती हैं।

गंगा प्रमास आदि कुंड में गंगा द्वीप आदि नामक एकेक द्वीप हैं जिनमें इसी नाम की एकेक देवी सपरिवार रहती हैं इन कुंड, द्वीप और देवियों के नाम शायत हैं।

यन्त्र के अनुसार ४८००० नदियाँ और उन की परिवार की (मिलने वाली) १४५६००० नदियाँ हैं इस उपरान्त महाविदेह के ३२ विंध्यों के २८ अंग हैं जिन में पहले लिखे हुए १६ अक्षर पर्वत और शेष १२ अक्षर में १२ अक्षर नदियाँ हैं इनके नामः—गुडवन्ती, द्रवन्ती, पंकवन्ती, संत जला, मंत जला, उगमजला श्रीरोदा, सिंह सोता, अंतो बहनी, उगमालनी, केममालनी और गंभीर मालनी। ये प्रत्येक नदियाँ १२५ यो. चौड़ी, २॥ यो. ऊँची (गहरी) और १६५६२ यो. २ कला की लम्बी हैं एवं कल नदियाँ १४५६०६० हैं। विशेष विस्तार जम्बू द्वीप प्रवृत्ति सूत्र में जानना।

॥ इति स्वयंदा ज्ञापना (ना) सम्पूर्ण ॥

) जिसके पास से धर्म की प्राप्ति हुई-होवे उसका उपकार कभी भी नहीं भूलें और समय आने पर उपकारी के प्रति प्रत्युत्कार करने वाला होवे ।

ते धर्म के सम्मुख होने के १५ कारण सम्पूर्ण ॥



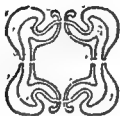
ॐ मार्गानुसारी के ३५ गुण ॐ

१ न्याय संपन्न द्रव्य प्राप्त करे २ सात कुव्यमन का त्याग करे ३ अभिरुचि का त्यागी होवे ४ गुण परीक्षा से सम्बन्ध (वस्त्र) जोड़े ५ ग-प-भीरु ६ देश दिन कर वर्तन वाला ७ पर निन्दा का त्यागी ८ अति प्रसन्न, अति गुप्त तथा अनेक द्वार वाले मकान में न रहे ९ सद्गुणी की संगति करे १० बुद्धि के आठ गुणों का धारक ११ कदा-ग्रही न होवे (सरल हाँसे) १२ सेवाभावी होवे १३ विनयी १४ भय स्थान त्यागे १५ आय-व्यय का हिसाब रखे १६ उचित (सम्य) वस्त्राभूषण पहिने १७ स्वाध्याय करे (नित्य नियमित धार्मिक वाचन, श्रवण करे) १८ अजीर्ण में भोजन न करे १९ योग्य समय पर (भूख लगने पर मित, पथ्य नियमित) भोजन करे २० समय का सदुपयोग करे २१ तीन पुरुषार्थ (धर्म, अर्थ, काम) में विवेकी २२ समयज्ञ (द्रव्य, घेन, काल, मास का ज्ञाता) होवे २३ शान्त प्रकृति वाला २४ ब्रह्मचर्य को ध्येय समझने वाला २५ सत्यव्रत धारी २६ दीर्घदर्शी २७ दयालु २८ परीक्षणी २९ कृतघ्न न होकर कृतज्ञ होवे अपकृति पर भी उपकार करे ३० आन्म प्रशमा न इच्छे, न करे न करे ३१ विवेकी ३२ योग्यायोग्य का भेद समझने वाला होवे ३३ अज्ञान होवे ३४ धैर्यवान होवे ३५ परमात्मा के ध,

माया, लोभ, राग, द्वेष) का नाश करे ३५ इन्द्रियों को जीते (जितेन्द्रिय होवे) ।

इन ३५ गुणों को धारण करने वाला ही नैतिक धार्मिक जैन जीवन के योग्य हो सकता है ।

❀ हते मार्गानुसारी के ३५ गुण सम्पूर्ण ❀

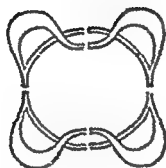


* जल्दी मोक्ष जाने के २३ बोल *

१ मोक्ष की अभिलाषा रखने से २ उग्र तपश्चर्या करने से ३ गुरु मुख द्वारा सूत्र सिद्धान्त सुनने से ४ आंगम सुन कर वैसी ही प्रवृत्ति करने से ५ पाँच इन्द्रियों को दमन करने से ६ छत्राय जीवों की रक्षा करने से ७ भोजन करने के समय साधु साधियों की भाषना-भाषने से ८ मद्भजन सीखने व सिखाने से ९ निपाखा रहित एक कोटी से घन में रहना हुआ नव कोटी से घन प्रत्याख्यान करने से १० दश प्रकार की वैयाधूर्य करने से ११ कंपास को पनले लकड़े निर्मल करने से १२ शंखे होते हुये घना करने से १३ लगे हुये पापों की तुल्य आलोचना करने से १४ लिये हुये वस्त्रों को निर्मल पालने से १५ भ्रमपदान सुपात्र दान देने से १६ शुद्ध मन से शीपल (मग्नवर्ष) पालने से १७ निर्वय (पाप रहित) मयूर वचन बोलने से १८ प्रदण किये हुये समय मार को अलपट पालने से १९ घने शुक्र ध्यान ध्यान से २० महीने ६-६ रोपक करने से २१ दोनों समय अवस्था (प्रतिक्रमण) करने से २२ पञ्चनी रात्रि में धर्म जागृत करते हुये तीन मन गथादि बिनकर से २३ मृ-पु मनस आलोचनादि से शुद्ध साक्षर समाधि पण्डित मग्न करने से ।

इन २३ बोलों को सम्यक् प्रकार से जान कर सेवन करने से जीव जल्दी मोक्ष में जावे ।

॥ इति जल्दी मोक्ष जाने के २३ बोल सम्पूर्ण ॥



तीर्थंकर गोत्र (नाम) वान्धने के २० कारण

(श्री ज्ञाता-सूत्र, आठवां-अध्यायन)

१ श्री अविर्हित भगवान् के गुण कीर्तन करने से-

२ श्री सिद्ध " " " "

३ आठ प्रवचन (५ समिति, ३ गुप्ति) का आराधन करने से ।

४ गुणवंत गुरु के गुण कीर्तन करने से ।

५ स्थविर (बृद्ध मुनि) के गुण कीर्तन करने से ।

६ बहुश्रुत के " "

७ तपस्वी " " "

८ सीखे हुये ज्ञान को बारंबार धितवाने से ।

९ समकित निर्मल पालने से ।

१० विनय (७-१०-१३४ प्रकारके) करने से ।

११ समय समय पर आवश्यक करने से ।

१२ लिये हुये व्रत प्रत्याख्यान निर्मल पालने से ।

१३ शुभ (धर्म-शुक्ल) ध्यान ध्याने से ।

१४ बारह प्रकार की निर्जरा (तप) करने से ।

१५ दान (अमय दान-मुपात्र दान) देने से ।

१६ वैयाघ्रन्य (१० प्रकार की भेगा) करने से ।

- १७ चतुर्विध संघ को शान्ति-समाधि (सेवा-शोभा) देने से
 १८ नया २ अपूर्व तत्त्व ज्ञान पढ़ने से ।
 १९ सूत्र सिद्धान्त को भाषित (सेवा) करने से ।
 २० मिथ्यात्व नाश और समाकित उद्योत करने से ।

जीव अनंतानंत कर्मों को खपाते हैं । इन सत्कार्यों को करते हुवे उत्कृष्ट रसायण (भावना) भावे तो तीर्थंकर गोत्र कर्म बान्धे ।

॥ इति तीर्थंकर गोत्र बान्धने के २० कारण ॥



ॐ परम कल्याण के ४० वोल ॐ

गुण	दृष्टान्त	सूत्र की साक्षी
१ समकित परम कल्याण भेदिक महाराज	ठाणांग सूत्र	
निर्मल पालने से होवे		
२ नियाणा रहित	॥ तामली तापस	मगवती ॥
तपश्चर्या से		
३ तीन योग निश्चल	॥ गजसुकुमाल मुनि, अंतगड	॥
करने से		
४ समभाव सहित	॥ अर्जुन माली	॥ ॥
धृमा करने से		
५ पांच महाव्रत निर्मल	॥ गौतम स्वामी	मगवती ॥
पालने से		
६ प्रमाद छोड़ अप्र-	॥ शैलंग राजर्षि	ज्ञाता ॥
मादी होने से		
७ इन्द्रिय दमन करने से	॥ हरकेशी मुनि	उ.प्यान ॥
८ मित्रों में माया	॥ मल्लिनाथ प्रभु	ज्ञाता ॥
कपट न करने से		
९ धर्म चर्चा करने से	॥ केशी गौतम	उ.प्ययन.
१० सत्य धर्म पर थढ़ा	॥ वरुण नाग नतुये का.	मगवती, मित्र
करने से		
११ जीवों पर करुणा	॥ मेष कुमार(दायी के)	ज्ञाता ॥
करने से	॥ मध मे	

- १२ सत्य वात निशङ्कता ,, आनन्द श्रावक उपाशकद
पूर्वक कहने से
- १३ कष्ट पढ़ने पर भी ,, अंशु और ७०० उववाई
व्रतों की दृढ़ता से ,, शिष्य
- १४ शुद्ध मन से शीघ्र ,, सुदर्शन श्रेष्ठ सुदर्शन
पालने से चरित्र
- १५ परिग्रह की ममता ,, कपिल ब्राह्मण उत्तराध्यय.
छोड़ने से सूत्र
- १६ उदारता से सुपात्र ,, सुमुख गाथा- विपाक सूत्र
दान देने से, पति
- १७ व्रत से ढिगते हुवे ,, राजमती उत्तराध्य-
को स्थिर करने से यन सूत्र
- १८ उग्र तपस्या करने से ,, धन्ना मुनि अ. सूत्र
- १९ अग्लानि पूर्वक ,, पंथक मुनि ज्ञाता ,,
वैयावच्च करने से
- २० सदेव अनित्य ,, भरत चक्रवर्ती जम्बूद्वीप
भावना भावने से प्र. ,,
- २१ अशुभ परिणाम ,, प्रसन्नचन्द्र श्रेणिक-
कने से राजर्षि चरित्र
- २२ मत्स्य ज्ञान पर ,, अर्हन्नक ज्ञाता सूत्र
दा रखने में श्रावक

२३ चतुर्विध संघकी वैयावच से,	॥	सनतकुमार चक्र० भगवती ॥ पूर्व भव में	
२४ उत्कृष्ट भावसे सुनि सेवा करने से	॥	बाहुबल जी पूर्व भव में	श्रुपम देव चरित्र
२५ शुद्ध अभिग्रह करने से ॥	॥	पांच पाण्डव	ज्ञाता सुप्र
२६ धर्म दलाली ॥	॥	श्रीकृष्ण वासुदेव	अंतगड ॥
२७ सुत्र ज्ञान की भक्ति ॥	॥	उदाई राजा	भगवती ॥
२८ जीव दया पालने से ॥	॥	घनरुचि अण्णगर	ज्ञाता ॥
२९ प्रवृत्ति से भिस्ते ही सावधान होने से	॥	अराणिक अनगर	अवश्यक
३० आपत्ति आने पर धैर्य रखने से	॥	खंदक अण्णगर	उत्तरा- व्ययन ॥
३१ जिन राज की भक्ति करने से	॥	प्रभावती रानी	॥ ॥
३२ प्राणों का मोह छोड़ ॥ कर भी दया पालने से	॥	मेघरथ राजा	शान्ति- नाथ चरित्र
३३ शक्ति होने पर भी ॥ धमा करने से	॥	प्रदेशी राजा	रायप्ररनी- य सुप्र
३४ सहोदर माइयों का भी मोह छोड़ने से	॥	राम बलदेव	६३ स्था पु. चरित्र
३५ देवादि के उपसर्ग सहने से	॥	काम देव	उपासक गुप्त

• तीर्थंकर के ३४ अतिशय •

१ तीर्थंकर के केश, नग न पड़े, सुशोभित रहे २ शरीर निर्मल रहे ३ सोही मांस गाय के दूध समान होवे ४ व्याघ्रोपाम वस्त्र कमल जैसा सुगन्धित होवे ५ आहार निहार अदृश्य ६ आकाश में धर्म चक्र चलने ७ आकाश में ३ छत रोमे तथा दो चामर उड़े ८ आकाश में पाद पीट सहित मिहामन चलने ९ आकाश में इन्द्रध्वज चलने १० अर्गोक पुत्र रहे ११ मामण्डल होवे १२ विषम भूमि गम होवे १३ कण्टक ऊँचे (चोंचे) हो जाये १४ छाड़ी प्रातु अनुहन होवे १५ अनुहन बागु चलने १६ पांच वर्ग के कुल प्रगट होवे १७ अशुभ पुद्गलों का नाश होवे १८ ह्मन्निवर्णा से मृत्ति मिलित होवे १९ शुभ पुद्गल प्रगट होवे २० योजन गाभी बानी की अभि होवे २१ सर्व मांगणी माया से देयना देवे २२ सर्व सभा अपनी र माया से समझे २३ क्रम बेर, जानि बेर ग्रान्त होवे २४ अन्यसनी भी दयना मुने व नियम कर २५ प्रतिमादी दिग्दर्शन करने २६ २७ वा लक्ष हिन्दी ज्ञान का योग २८ २९ ३० महाभाग योग ३१ द्वार ३२ उपद्रव ३३ ३४ ३५ ३६ ३७ ३८ ३९ ४० ४१ ४२ ४३ ४४ ४५ ४६ ४७ ४८ ४९ ५० ५१ ५२ ५३ ५४ ५५ ५६ ५७ ५८ ५९ ६० ६१ ६२ ६३ ६४ ६५ ६६ ६७ ६८ ६९ ७० ७१ ७२ ७३ ७४ ७५ ७६ ७७ ७८ ७९ ८० ८१ ८२ ८३ ८४ ८५ ८६ ८७ ८८ ८९ ९० ९१ ९२ ९३ ९४ ९५ ९६ ९७ ९८ ९९ १००

वान है । जैसे सामान्यतः द्रव्य एक है । विशेषतः ६-६
धर्मास्ति काय का सामान्य गुण चलन सहाय है । अथमा
का स्थिर सहाय, आकाश का अवगाहन, काल का वत-
ना, जीव का चेतन्य, पुद्गल का जीर्ण गलन विध्वंसन
गुण और विशेष गुण छः ही द्रव्यों का अनन्त अनन्त है ।

६ निश्चय व्यवहार द्वार-निश्चय से समस्त द्रव्य
अपने २ गुणों में प्रवृत्त होते हैं । व्यवहार में अन्य द्रव्यों
की अपने गुण से सहायता देते हैं । जैसे लोकाकाश में
रहने वाले समस्त द्रव्य आकाश अवगाहन में सहायक
होते हैं । परन्तु अलोक में अन्य द्रव्य नहीं अतः अवगा-
हन में सहायक नहीं होते प्रसृत अवगाहन में पदगुण
हानि वृद्धि सदा होती रहती है । इसी प्रकार सब द्रव्यों के
विषय में जानना ।

१० नय द्वार-अथ ज्ञान को नय कहते हैं । नय
७ हैं इनके नाम—१ नैगम २ संग्रह ३ व्यवहार ४ अनु-
सृष्ट ५ शब्द ६ सममिरुद्ध और ७ एवं भूत नय, इन
सातों नय बातों की मान्यता कैसी है । यह जानने के
लिये जीव द्रव्य ऊपर ७ नय संतारे आते हैं ।

१ नैगम नय वाला-जीव कहने से जीव के सब नामों को प्र० करे
२ संग्रह " — " " जीव के असंख्य प्रदेशों को "
३ व्यवहार " — " " से प्रसं स्थावर जीवों की "
४ अनुसृष्ट " — " " सुखदुःख भोगने वाले जी. के "

५ काल द्रव्य में ४ गुण-रूपी, अचेतन, अक्रिय वर्तमानगुण

६ पुद्गलास्ति० में ४ " -रूपी, अचेतन, सक्रिय, जीर्णगलन

१३ पर्याय द्वार-प्रत्येक द्रव्य की चार २ पर्याय हैं

१ धर्मास्ति० की ४ पर्याय-स्वच्छ, देश, प्रदेश, अगुरु लघु

२ अधर्मास्ति० " " - " " " "

३ आकाशास्ति० " " - " " " "

४ जीवास्ति० " " - अव्याघात, अनावगाह,
अमूर्त, "

५ पुद्गलास्ति० " " - पृथक्, गन्ध, रस, स्पर्श

६ काल द्रव्य० " " - भूत, भाविष्य, वर्तमान,
अगुरु लघु

१४ साधारण द्वार-साधारण धर्म जो अन्य द्रव्य में भी पावे, जैसे धर्मास्ति० में अगुरु लघु, असाधारण धर्म जो अन्य द्रव्य में न पावे, जैसे धर्मास्ति० में चलन सहाय इत्यादि ।

१५ साधर्म्य द्वार-१८ द्रव्यों में प्रति समय उत्पन्न व्यवहारे । क्योंकि अगुरु लघु पर्याय में १८ गुण हानि यदि होती है । तो यह छः ही द्रव्यों में समान है ।

१६ परिणामी द्वार-निश्चय नय से छः ही द्रव्य अपने २ गुणों में परिणमते हैं । व्यवहार से जीव और पुद्गल अन्यान्य स्वभाव में परिणमते हैं । जिस प्रकार जीव मनुष्यादि रूपसे और पुद्गल दो प्रदेशी यावत् अनन्त प्रदेशी स्वच्छ रूप से परिणमता है ।

परन्तु जीव किसी के कारण नहीं । जैसे—जीव कर्ता और धर्मा० कारण मिलने से जीव को चलन कार्य की प्राप्ति होये । इसी प्रकार दूसरे द्रव्य भी समझना ।

२५ वर्ता द्वार-निश्चय से समस्त द्रव्य अपने स्वभाव-कार्य के वर्ता हैं । व्यवहार से जीव और पृथ्वी वर्ता हैं । शेष अवर्ता हैं ।

२६ गति द्वार-आकाश की गति (व्यापकता) लोकालोक में है । शेष की लोक में है ।

२७ प्रदेश द्वार-एक २ आकाश प्रदेश पर पाँचों ही द्रव्यों का प्रवेश है । वे अपनी २ क्रिया करते जा रहे हैं । तो भी एक दूसरे से मिलते नहीं जैसे एक नगर में ५ मानस अपने २ कार्य करते रहने पर भी एक रूप नहीं होजाते हैं ।

२८ पृथ्वी द्वार-भी गौतम स्वामी भी वीर प्रभु को सविनय निम्न लिखित प्रश्न पूछते हैं ।

१ धर्मा० के १ प्रदेश को धर्मा० करते हैं क्या ? उत्तर नहीं (एवंभूत नयावेष्टा) धर्मा० कार्य के १-२-३, लेकर मंगलान्त अभ्यन्तर प्रदेश, जहाँ तक धर्मा० का १ भी प्रदेश बाँका । वही तक उसे धर्मा० की वह सकल संपूर्ण प्रदेश मिल चुकता है । धर्मा० करते हैं ।

२ १५ प्रश्न १ एवंभूत नयावेष्टा थोड़े सी टटे व १६ ५ का १६ ५ नहीं मान, अभ्यन्तर द्रव्य को

ॐ चार ध्यान ॐ

ध्यान के ४ भेद-आर्त्त, रौद्र, धर्म और शुक्ल ध्यान
 (१) आर्त्त ध्यान के ४ पाये-१ मनोह वस्तु की
 अभिलाषा करे । २ अमनोह वस्तु का वियोग चिंतवे । ३
 रोगादि अनिष्ट का वियोग चिंतवे ४ पर भव के सुख निमित्त
 निराणा करे ।

आर्त्त ध्यान के ४ लक्षण-१ चिंता शोक करना
 २ अधुनात करना ३ आक्रन्द (विलाप) शब्द करके
 रोना ४ छाती माथा (मस्तक) आदि कूटकर रोना ।

(२) रौद्र ध्यान के ४ पाये-दिसामें, झूठ में,
 चोरी में, कारागृह में कसाने में आनन्द मानना (य पाप
 करके व कराकर के प्रसन्न होना) ।

रौद्र ध्यान के ४ लक्षण-१ तुच्छ अपराध पर
 बहुत गुस्सा करना, द्वेष करना ४ बड़े अपराध या अत्यन्त
 मोघ-द्वेष करे । ३ अज्ञानता से द्वेष करे और ४ जाव-
 जीव तक द्वेष रखे ।

(३) धर्म ध्यान के ४ पाये-१ बीताग की आज्ञा
 का चिंतन करे २ कर्म आने के कारण (आश्रय) का
 विचार करे ३ शुभ-शुभ कर्म विपाक को विचार ४ लोक
 संस्थान (आकार) का विचार करे ।

धर्म ध्यान ४ लक्षण-१ बीताग आज्ञा की रुचि

शुक्ल ध्यान के ४ अवलम्बन-१ घमा २
निलोमता ३ निष्कपटता ४ मदरहितता ।

शुक्ल ध्यान की ४ अनुमेक्षा-१ इस जीव ने
अनन्त बार संसार भ्रमण किया है ऐसा विचारे २ संसार
की समस्त पौद्गलिक वस्तु अनित्य है । शुभ पुद्गल अशुभ
रूपसे और अशुभ शुभ रूप से परिणमते हैं, अतः शुभा-
शुभ पुद्गलों में आसक्त बन कर राग द्वेष न करना ३
संसार परिभ्रमण का मूल कारण शुभ कर्म है कर्म बन्ध
का मूल कारण ४ हेतु हैं । ऐसा विचारे । ४ कर्म हेतुओं
को छोड़ कर स्वतन्त्रता में रमण करने का विचार करना-
ऐसे विचारों में सम्मग्न (एक रूप) हो जाने को शुक्ल
ध्यान कहते हैं ।

॥ इति ४ ध्यान सम्पूर्ण ॥



हजार वर्ष का और अरिहंत, चक्रवर्ती, वासुदेव, बलदेवों
का० ज० ८४ हजार वर्ष का, उ० देश तथा १८ क्रोड़-
क्रोड़ सागरोपम का विरह पड़े ।

❀ इति विरह पद सम्पूर्ण ❀



५८



लोण संज्ञा-अन्य लोगों को देख कर स्वयं वैसा ही कार्य करना ।

ओष संज्ञा-शून्य चित्त से विहाय को, पास तोड़े पृथ्वी (जमीन) खोदे आदि ।

नरकादि २४ दण्डक में दश दश संज्ञा होंगे । किसी में सामग्री अधिक मिल जाने से प्रकृति रूप से है । किसी में रूपा रूप से है, संज्ञा का अस्तित्व छह गुणस्वान्तक है । इनका अरूप बहुतव-

आहार, मय, भैषुन, और परिग्रह संज्ञा का अरूप बहुतव नारकी में सर्व से कम भैषुन, उस से आहार में उस में परिग्रह सं० मय सं०, संख्या० गुणी ।

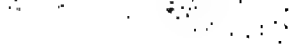
निर्यस में सर्व से कम परिग्रह उससे भैषुन सं० मय सं०, आहार संख्या० गुणी ।

मनुष्य में सर्व से कम मय उगसे आहार सं०, परिग्रह सं०, भैषुन संख्या० गुणी ।

देवता में सर्व से कम आहार उस से मय सं०, भैषुन सं०, परिग्रह संख्या० गुणी ।

क्रोध, घान, माया और लोभ संज्ञा का अरूप बहुतव नारकी में सर्व से कम लोभ, उगसे माया सं० मान सं० क्रोध संख्या० गुणी ।

निर्यस में सर्व से कम मान, उस में क्रोध निर्गुण, माया विगुण नाम विगुण अधिक ।



प्रकार की वेदना । कारण कि दो प्रकार के देवता हैं ।

१ अमायी सम्यक् दृष्टि-निंदा वेदना वेदते हैं ।

२ मायी मिथ्यादृष्टि अनिंदा वेदना वेदते हैं ।

० इति वेदना पत्र सम्पूर्ण ०





एकैक पृथ्वी काय के जीव नारकी रूप से कषाय समु० भूत काल में अनंती करी और भविष्य में करेगा तो स्यात् संख्याती, असंख्याती, अनंती करेगा एवं भवन पति, व्यन्तर, ज्योतिषी और वैमानिक रूप से भी भविष्य में असंख्याती, अनंती करेगा उदारिक के १० दण्डक में भविष्य में स्यात् १-२-३ जाव संख्याती, असंख्याती, अनंती करेगा । एवं उदारिक के १० दण्डक, व्यन्तर, ज्योतिषी, वैमानिक असुर-कुमार के समान समझना !

एकैक नेरिया नेरिये रूप से मरणांतिक समु० भूत में अनंती करी, भविष्य में जो करे तो १-२-३ संख्याती जाव अनंती करेगा एवं २४ दण्डक कहना परन्तु स्वस्थान परस्थान सर्वत्र १-२-३ कहना, कारण मरणांतिक समु० एक भव में एक ही बार होती है ।

एकैक नेरिया नेरिये रूप से वैक्रिय समु० भूत काल में अनंती करी, भविष्य में जो करे तो १-२-३ जाव अनंती करेगा । ऐसे ही २४ दण्डक, १७ दण्डक पने कषाय समु० समान करे सात दण्डक (४ स्थावर ३ विह्वलेन्द्रिय) में वैक्रिय समु० नहीं ।

एकैक नेरिया नेरिये रूप से तेजस समु० भूत में नहीं करी, भविष्य में नहीं करेगा ।

एकैक नेरिया असुर कुमार रूप से भूत काल में

अनेक नेरिये २३ दण्डक (मनुष्य सिवाय) रूप से आहा० समु० न की, न करेंगे, मनुष्य रूप से भूतकाल में असं० की, मविष्य में असं० करेंगे । एवं २३ दण्डक (वनस्पति सिवाय) रूप से भी समझना । वनस्पति में अनंती कहनी ।

एकैक मनुष्य २३ रूप से आहा० समु० की नहीं और करेंगे भी नहीं । मनुष्य रूप से भूत काल में स्यात् संख्याती, स्यात् असंख्याती की और मविष्य में भी करे तो स्यात् संख्या०, स्यात् असं० करेंगे ।

अनेक नरकादि २३ दण्डक के जीवों ने अनेक नरकादि २३ दण्डक रूप से केवली समु० की नहीं और करेंगे भी नहीं मनुष्य रूप से की नहीं, जो करे तो संख्या० असं० करेंगे ।

अनेक मनुष्यों ने २३ दण्डक रूप से केवली समु० की नहीं, व करेंगे भी नहीं । और मनुष्य रूप से की होने तो स्यात् संख्याती की । मविष्य में करे तो स्यात् संख्याती, स्यात् असंख्याती करेंगे ।

(७) अथ बहुत्व द्वार ।

समुच्चय अथ बहुत्व

नरक का अथ बहुत्व

१ सर्व से कम मर०स, वाले

१ सर्व में कम आहा. समु. वाले २ उनसे वैक्रिय समु.अ.गु

२ केवली समु. वाले संख्या. गुणा ३, कषाय, संख्या.,

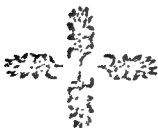
यायु काय का अल्प बहुत्व

- १ सर्व से कम वैक्रिय समू० वाले
- २ उनमे भाणांतिक समू० वाले असं. गुणा
- ३ " कपाय० " संख्या० "
- ४ " वेदनी " विशेष्य
- ५ " अममोदिया " अमं० गुणा

विकलेन्द्रिय का अल्प बहुत्व

- १ सर्व से कम भाणांतिक समूहवात वाले
- २ उनमे वेदनी सहस्रवात-वाले असंख्यात गुणा
- ३ " कपाय " " संख्यात "
- ४ " अममोदिया " " असंख्यात "

॥ इति समुद्धान पद सम्पूर्ण ॥



❧ नियंठा ❧

नियंत्रणों पर ३६ द्वार-भगवती सूत्र शतक
 २५ उद्देशा छठा-१ पञ्चवणा (प्ररुग्णा) २ वेद ३ राग
 (सगर्गा) ४ कन्ध ५ चारित्र ६ पण्डितेवन (दोष मेवन)
 ७ ज्ञान ८ तीर्थ ९ लिङ्ग १० शरीर ११ क्षेत्र १२ काल
 १३ गति १४ मंथन स्थान १५ (निकामे) चारित्र पर्याय
 १६ योग १७ उपयोग १८ कपाय १९ लेख्य २० परि-
 णाम (३) २१ बन्ध २२ वेद २३ उद्दीरणा २४ उपसं-
 ऋण (कक्षा जाये ?) २५ संस्कारद्वारा २६ आहार
 २७ मय २८ आगोस (कितनी बार आवे ?) २९ काल
 स्थिति ३० आन्तरा ३१ समुत्पात ३२ क्षेत्र (विस्तार)
 ३३ स्पर्शना ३४ भाव ३५ परिणाम (कितने पावे ?)
 औ० ३६ अलर बहुत्व द्वार ।

१ पञ्चवणा द्वार-निर्ग्रह (साधु) ६ प्रकार के
 रूपे गये हैं यथा—१ पुलाक २ वकुश ३ पण्डितेवणा
 (ना) ४ कपय कुशील ५ निर्ग्रह ६ स्नातक ।

१ पुलाक-चावल की शाल समान जिनमें सार वस्तु
 कम और भूमा विशेष होता है । इनके दो भेद—१ लब्धि
 पुलाक कोई चक्रवर्ती आदि किसी जैन मुनि की अथवा
 जिन शासन आदि की अशासना करे तो उनकी भेना
 आदि को चक्रवर्त करने के लिये लब्धि का प्रयोग करे

अधिक हुआ हो) ३ चरम समय (एक समय छद्मस्थान का बाकी रहा हो) अचरम समय (दो समय से अधिक समय जिसकी छद्मस्थ अवस्था बाकी बची होवे) और ४ अदामुग्ध निर्ग्रन्थ (सामान्य प्रकारे वर्ते)

६ स्नातक-शुद्ध, अक्षय्य, चारुत समान, इसके ४ भेद, १ अक्षय्य (योग निरोध) २ असक्ते (सक्ते दाय रहित) ३ अक्षय्य (धार्मिक वर्म रहित) ४ संतुष्ट (वैराग्य) और ५ अक्षय्य (अव्यक्त)

२ भेद द्वार-१ पुष्पाक पुरुष वेदी और नपुंसक वेदी २ वपुषः पुरु० शी० नपु० वेदी ३ पश्चिमोत्तरा-तीन वेदी ४ कर्पाय-पुष्पाक तीन वेदी और अवेदी (उपशान्त तथा क्षीण) ५ निर्ग्रन्थ अवेदी (उपशान्त तथा क्षीण) और ६ स्नातक क्षीण अवेदी होवे ।

३ राग द्वार-४ निर्ग्रन्थ सरागी, निर्ग्रन्थ (पानि) क्षीणगामी (उपशान्त तथा क्षीण) और स्नातक क्षीण क्षीणगामी होवे ।

४ कर्पाय द्वार-४ भेद पानि प्रकार का (स्थित, अस्थित, स्थित, स्थित, स्थित, स्थित और स्थित, स्थित) प्राप्त होता है । इसके ४ भेद प्रकार — १ अवेदी, २ उद्वेगी, ३ उद्वेगी, ४ उद्वेगी, ५ उद्वेगी, ६ उद्वेगी, ७ उद्वेगी, ८ उद्वेगी, ९ उद्वेगी, १० उद्वेगी, ११ उद्वेगी, १२ उद्वेगी, १३ उद्वेगी, १४ उद्वेगी, १५ उद्वेगी, १६ उद्वेगी, १७ उद्वेगी, १८ उद्वेगी, १९ उद्वेगी, २० उद्वेगी, २१ उद्वेगी, २२ उद्वेगी, २३ उद्वेगी, २४ उद्वेगी, २५ उद्वेगी, २६ उद्वेगी, २७ उद्वेगी, २८ उद्वेगी, २९ उद्वेगी, ३० उद्वेगी, ३१ उद्वेगी, ३२ उद्वेगी, ३३ उद्वेगी, ३४ उद्वेगी, ३५ उद्वेगी, ३६ उद्वेगी, ३७ उद्वेगी, ३८ उद्वेगी, ३९ उद्वेगी, ४० उद्वेगी, ४१ उद्वेगी, ४२ उद्वेगी, ४३ उद्वेगी, ४४ उद्वेगी, ४५ उद्वेगी, ४६ उद्वेगी, ४७ उद्वेगी, ४८ उद्वेगी, ४९ उद्वेगी, ५० उद्वेगी, ५१ उद्वेगी, ५२ उद्वेगी, ५३ उद्वेगी, ५४ उद्वेगी, ५५ उद्वेगी, ५६ उद्वेगी, ५७ उद्वेगी, ५८ उद्वेगी, ५९ उद्वेगी, ६० उद्वेगी, ६१ उद्वेगी, ६२ उद्वेगी, ६३ उद्वेगी, ६४ उद्वेगी, ६५ उद्वेगी, ६६ उद्वेगी, ६७ उद्वेगी, ६८ उद्वेगी, ६९ उद्वेगी, ७० उद्वेगी, ७१ उद्वेगी, ७२ उद्वेगी, ७३ उद्वेगी, ७४ उद्वेगी, ७५ उद्वेगी, ७६ उद्वेगी, ७७ उद्वेगी, ७८ उद्वेगी, ७९ उद्वेगी, ८० उद्वेगी, ८१ उद्वेगी, ८२ उद्वेगी, ८३ उद्वेगी, ८४ उद्वेगी, ८५ उद्वेगी, ८६ उद्वेगी, ८७ उद्वेगी, ८८ उद्वेगी, ८९ उद्वेगी, ९० उद्वेगी, ९१ उद्वेगी, ९२ उद्वेगी, ९३ उद्वेगी, ९४ उद्वेगी, ९५ उद्वेगी, ९६ उद्वेगी, ९७ उद्वेगी, ९८ उद्वेगी, ९९ उद्वेगी, १०० उद्वेगी

एवं १० कल्पों में से प्रथम का और अन्तका तीर्थ-
कर के शासन में स्थित कल्प होते हैं शेष २२ तीर्थकर
के शासन में अस्थित कल्प हैं उक्त १० कल्पों में से ४-७
६-१० एवं ४ स्थित कल्प हैं और १ २-३-५-६-८ अस्थित
कल्प हैं ।

स्थिर वस्त्र=शास्त्रोक्त वस्त्र-पात्रादि रखे ।

जिन वस्त्र=ज. २ उ. १२ उपकरण रखे ।

वस्त्रातीत=केवली, मनः पर्यव, अवधि ज्ञानी, १४
पूर्व घाटी, १० पूर्व घाटी, श्रुत केवली और जातिस्मरण
ज्ञानी ।

पुलाक=स्थित, अस्थित और स्थिर कल्पी होवे ।

वकुश और पट्टिमेवला नियंता में कल्प ४, स्थित,
अस्थित, स्थिर और जिन कल्पी ।

कपाय कुशील में ५ कल्प-ऊपर के ४ और कल्पा-
तीत निर्ग्रथ और स्नातक-स्थित, अस्थित और कल्पातीत
में होवे ।

५ चरित्र द्वार-चारित्र ५ हैं । सामायिक २ छेदीप-
स्थापनीय २ पट्टिमेवला विशुद्ध ४ वृत्त मंत्राय ५ यथा-
न्याय पुलाक, वकुश, पट्टिमेवला में प्रथम दो चारित्र ।
वपय-कुशील में ४ चरित्र और निर्ग्रथ, स्नातक में
यथावत चरित्र होवे ।

६ पट्टिमेवला द्वार-मूल गुण पट्टि । । महावन में

दोष) और उत्तर गुणपट्टि । (गोचरी आदि में दोष) ; पुलक, वक्श, पट्टिसेवण में मूल गुण, उत्तर गुण दोनों की पट्टि० शेष तीन नियंठा अपट्टिसेवी । (ब्रतों में दोष न लगावे) ।

७ ज्ञान द्वार-पुलाक, वक्श, पट्टिसेवण नियंठा में दो ज्ञान तथा तीन ज्ञान, कपाय कुशील और निर्ग्रय में २-३-४ ज्ञान और स्नातक में केवल ज्ञान । श्रुत ज्ञान आधीपुलाक के ज० ६ पूर्व न्यून, उ० ६ पूर्व पूर्ण, वक्श और पट्टिसेवण के ज० ८ प्रवचन । उ० दश पूर्व० कपाय कुशील तथा निर्ग्रय के ज० ८ प्रवचन, उ० १४ पूर्व स्नातक एव व्यतिरिक्त ।

८ तीर्थ द्वार-पुलाक, वक्श, पट्टिसेवण तीर्थ में होवे । शेष तीन तीर्थ में और अतीर्थ में होवे । अतीर्थ में प्रत्येक शुद्ध आदि होवे ।

९ लिंग द्वार-यं ६ नियंठा (माधु) द्रव्य लिंग अपेक्षा मल्लिग, अन्य लिंग अपेक्षा गृहस्थ लिंग में होवे । मावापेक्षा मल्लिग ही होवे ।

१० शरीर द्वार-पुलाक, निर्ग्रय, और स्नातक में ३ (औ० ने० का०), वक्श, पट्टिसे० में ४ (औ० ये० ने० का०), कपाय कुशील में ५ शरीर ।

११ स्त्रिय द्वार-६ नियंठा जन्म अपेक्षा १५ कर्म-लिंग में होवे । मंदग्न्य अपेक्षा । ५ नियंठा (पुलाक

प्रयत्निराक ४ सामानिक ५ अदमिन्द्र । पुलाक । वक्रश, पदि सेवण, प्रथम ४ पदवी में से १ पदवी पावे । कपाय कुशील ५ पदवी में से १ पावे, निर्ग्रय अदमिन्द्र होवे- स्नातक आराधक अदमिन्द्र होवे तथा मोक्ष जावे, विराधक ज० विरा० होवे तो ४ पदवी में से १ पदवी पावे० उ० वि० २४ दण्ड । में क्रमशः करे ।

१४ संयम द्वार-संख्याता स्थान असंख्याता है । चार नियंता में असंख्याता संयम स्थान नौ प्रिय, स्नातक में संयम स्थान एक ही होवे । सर्व से कम नि० स्ना० के सं० स्था० । उनसे पुलाक के सं० स्था० असंख्यात गुणा० उनसे वक्रश के सं० स्था० असंख्यात गुणा, उनसे पदि सेवण सं० स्था० असंख्यात गुणा० उनसे कपाय कुशील का सं० स्था० असंख्यात गुणा ।

१५ निकासे-(संयम का पर्याय) द्वार-सर्षों का चारित्र पर्याय अनन्ता अनन्ता, पुलाक से पुलाक का चारित्र पर्याय परस्पर छठावलिखा । यथा -

१ अनन्त भाग हानि, २ असंख्य भाग हानि, ३ संख्यात भाग हानि ।

४ संख्यात भाग हानि ५ असंख्य भाग हानि ६ अनन्त भाग हानि ।

१ अनन्त ,, वृद्धि २ ,, ,, वृद्धि ३ संख्यात ,, वृद्धि

४ संख्यात ,, ,, ५ ,, ,, ६ अनन्त ,, ,,

१८ कपाय द्वार-प्रथम ३ निघंठा में सकृपायी (संज्वलन का चोक) कपाय कुशील में सज्वलन ४ ३.२ १ निर्ग्रन्थ अकृपायी (उपशम तथा चीण) और स्नातक अकृपायी (चीण)

१९ लेख्या द्वार-पुलाक, वक्रश, पडिसेण में ३ शुभ लेख्या, कपाय कुशील में ६ लेख्या, निर्ग्रन्थ में शुक्ल लेख्या स्नातक में शुक्ल लेख्या अथवा अलेखी ।

२० परिणाम द्वार-प्रथम निघंठा में तीन परिणाम १ हायमान २ वर्धमान ३ अवस्थित-१ घटता २ घटता ३ समान) हाय वर्ध की स्थिति ज० १ समय की उ० अं० मु० अवस्थित की ज० १ समय उ० ७ समय की, निर्ग्रन्थ में वर्धमान परिणाम अवस्थित में २ परिणाम स्थिति ज० १ समय, उ० अं० मु० स्नातक में २ (वर्ध० अव०) वर्ध की स्थिति ज० १ समय, उ० अं० मु० अव० की स्थिति ज० अं० मु० उ० देश उगी पूर कोड़ की ।

२१ बन्ध द्वार-पुलाक ७ कर्म (आयुष्य सिवाय) बान्ध, वक्रश आः पडिसेण ७ = कर्म बान्धे, कपाय कुशील ६-७ तथा ८ कर्म (आयु-माद निराय) बान्धे निर्ग्रन्थ १ शान्त वेदनीय बान्ध आः स्नातक शान्त वेदनीय बान्ध अथवा अवन्ध । नदी वन्द ।

२२ बन्ध द्वार-प्रथम निघंठा ८ कर्म १६ निर्ग्रन्थ ७ कर्म १६ निराय १६ स्नातक ८ कर्म अथवा १ वेदे ।

२२ उद्गारण द्वार-पुलाक ६ कर्म (आधु-मोह सिवाय) को उद्ग० कर वक्षुश पडिसेवण ६-७ तथा = कर्म उदरे कपाय कुशील ५-६-७-८ कर्म उदरे (५ होवे तो आधु, मोह वेदनीय छोड़कर), निर्ग्रन्थ २ तथा ५ कर्म उदरे (नाभ-गोत्र) और स्नातक अनुदारिक ।

२४ उपसंयमण द्वार-पुलाक, पुलाक को छोड़कर कपाय कुशील में अथवा असंयम में जावे, वक्षुश वक्षुश को छोड़ कर पडिसेवण में, कपाय कुशील में असंयम में तथा संयमासंयम में जावे । इसी प्रकार चार स्थान पर पडिसेवण नियंठा जावे कपाय कुशील ६ स्थान पर (पु०, व०, पडि०, असंय०, संयमामं० तथा निर्ग्रन्थ में) जावे निर्ग्रन्थ निर्ग्रन्थ पने को छोड़ कर कपाय कुशील स्नातक तथा असंयम में जावे और स्नातक मोक्ष में जावे ।

२५ संज्ञा द्वार-पुलाक, निर्ग्रन्थ और स्नातक नो-संज्ञा बहुत । वक्षुश, पडिसेवण और कपाय कुशील संज्ञा बहुत और नो-संज्ञा बहुत ।

२६ आहारिक द्वार-पानदटा अहारिक और स्नातक आहारिक तथा अनाहारिक ।

२७ भव द्वार-पुलाक और निर्ग्रन्थ भव १० ज० ?
१० ३ वक्षुश, पडि०, कपाय कु० ज० १ उ० १५ अर
११ और स्नातक उर्मा भव में मोक्ष जावे

२८ आगरेस द्वार-पुलाक एक भव में ज० १ वार उ० ३ वार आवे अनेक भव आधी ज० २ वार उ० ७ वार आवे वकुश पडि० और कपाय कु० एक भव में ज० १ वार उ० प्रत्येक १०० वार आवे अनेक भव आधी ज० २ वार उ० प्रत्येक हजार वार, निर्ग्रन्थ एक भव आधी ज० १ वार उ० २ वार आवे अनेक भव आधी ज० २ उ० ४ वार आवे स्नातक पना ज० उ० १ ही वार आवे ।

२९ काल द्वार-(स्थिति) पुलाक एक जीव अपेक्षा ज० १ समय उ० अं० सु०, अनेक जीव अपेक्षा ज० उ० अन्तर्मुहूर्त की वकुश एक जीव अपेक्षा ज० १ समय उ० देश उण पूर्व क्रोड, अनेक जीवापेक्षा शाश्वता पडिसे०, कपाय कु० वकुश वत् निर्ग्रन्थ एक तथा अनेक जीवापेक्षा ज० १ समय उ० अन्तर्मुहूर्त स्नातक एक जीवाधी ज० अं० सु०, उ० देश उण पूर्व क्रोड, अनेक जीवापेक्षा शाश्वता है ।

३० आन्तरा (अन्तर) द्वारः-प्रथम ५ नियंठा में आन्तरा पड़े तो १ जीव अपेक्षा ज० अं० सु०, उ० देश उणार्ध पुद्गल परावर्तन काल तक स्नातक में एक जीवापेक्षा अन्तर न पड़े अनेक जीवापेक्षा अ तर पड़े तो पुलाक ज० १ समय, उ० संख्यात काल, निर्ग्रन्थ में ज० १ मय उ० ६ माह शेष ४ में अन्तर न पड़े ।

३१ ममुदघान द्वार पुलाक में ३ सप्त० (वेदनी,

निर्ग्रन्थ	,, १६२	१-२-३ प्रत्येक सौ ०
स्नातक	,, १०८	प्रत्येक श्रोत्र नियमा

३६ अल्प बहुत्व द्वार-सर्व से कम निर्ग्रन्थ नियंठा,
उनसे पुलाक बाले संख्यात गुणा । उनसे स्नातक संख्यात
गुणा । उनसे चतुश सं०, उनसे षड्विसेवण संख्यात गुणा,
और उनसे कषाय कुशील का जीव संख्यात गुणा ।

॥ इति नियंठा सम्पूर्ण ॥



साधु परिहार विशुद्ध चारित्र्य ले । जिनमें से ४ मुनि ६ माह तप करे, ४ मुनि वैद्यावच्य करे और १ मुनि व्याख्यान देवे । दूसरे ६ माह में ४ वैद्यावच्यी मुनि तप करे, ॥ तप करने वाले वैद्यावच्य करे और १ मुनि व्याख्यान देवे । तीसरे ६ माह में १ व्याख्यान देने वाला तप करे, १ व्याख्यान देवे और ७ मुनि वैद्यावच्य करे । तप धर्मा ठनाले में एकान्तर उपवास, शिवाले दठ छड पारणा, भोमामे अटम २ पारणा करे एवं १८ माह तप कर के जिन वस्त्री होवे अथवा पुनः गुरुकुल वास स्वीकारे ।

गुरुम संतराय चारित्र्य के २ भेद-गोपलेश पणिनाम-उपशम भेदी मे गिरने वाले (२) विशुद्ध परिणाम-पणक भेदी पर चढ़ने वाले ।

५ गद्याख्यान चारित्र्य के २ भेद-(१) उपशान्त पीतगर्भा ११ वे गुणस्थान वाले (२) र्दाम पीतगर्भा के २ भेद छटस्य और केवली (मयोगी तथा अयोगी) ।

२ भेद द्वार-मामा०, हृदोप० वाले मोदी (३ भेद) देवा अरदी नवने दुम अथवा । पणि० वि०, पूर्य वा पूर्य नृमक वी० दुपम न० और पथा० अरदी ।

३ राग द्वार-४ भक्त्या नर गी और गद्याख्यान भक्त्या ४ भक्त्या ।

४ चण्ड द्वार १ भक्त २ भक्त नाथ अनुगार-

६ पाण्डिसेवण द्वार-सामा०, छेदो०, संयति मूल गुण प्रति सेवी (५ महाव्रत में दोष लगावे) तथा उत्तर गुण प्रति सेवी (दोष लगावे) तथा अप्रति सेवी (दोष नहीं भी लगावे) शेष ३ संयति अप्रति सेवी (दोष नहीं लगावे)

७ ज्ञान द्वार—४ संयति में ४ ज्ञान (२-३-४) की मजना और यथाख्यात में ५ ज्ञान की मजना ज्ञानाभ्यास अपेक्षा—सामा०, छेदो०, में ज० अष्ट प्रवचन (५ समिति, ३ गुप्ति) उ० १४ पूर्व तक परि० में ज० ६ वे पूर्व की सीसरी आचार वस्तु तक उ० ६ पूर्व सम्पूर्ण सूक्ष्म सं० और यथा० ज० अष्ट प्रवचन तक उ० १४ पूर्व तथा छत्र व्यतिरिक्त ।

८ तीर्थ द्वार—सामादिक और यथाख्यात संयति तीर्थ में, अतीर्थ में, तीर्थकर में और इत्येक पुद्ग में होवे छेदो०, परि०, सूक्ष्म० तीर्थ में ही होवे ।

९ लिंग द्वार-परि० द्रव्ये भावे स्खलिंगी होवे शेष चार संयति द्रव्ये स्खलिंगी, अस्खलिंगी तथा गृहस्थ लिंगी होवे परन्तु भावे स्खलिंगी होवे ।

१० शरीर द्वार—सामा०, छेदो०, में ३-४-५ शरीर होवे शेष तीन में ३ शरीर ।

११ छेद द्वार—सामा०, सूक्ष्म०, तथा०, १५ कर्म भूमि में और छेदो०, परि० ५ भरत ५ ऐगवर्त में होवे

तो पांच में से १ पदवी पावे, परि० प्रथम ४ में से १ पदवी पावे । सूक्ष्म० यथा० वाले अहमेन्द्र पद पावे, ज० विराधक होवे तो ४ प्रकार के देवों में उपजे, उ० विराधक होवे तो संसार भ्रमण करे ।

१४ संयम स्थान--सामा० छेदो० परि० में असंख्यासे० स्थान होवे० सूक्ष्म० में अं० सू० के जितने असंख्य और यथा० का सं० स्थान एक ही है । इनका अन्य बहुतव ।

सर्व से कम यथा० संयति के संयम स्थान

उनमें सूक्ष्म संपराय के सं० स्थान असंख्यात गुणा

„ परि हार वि० „ „ „ „ „

„ सामा० छेदो० „ „ „ „ „ परस्पर तुल्य

१५ निकासे द्वार-एतेक संयम क पर्यव (पञ्चवा)

अनन्त। अनन्त हैं प्रथम तीन संयति के पर्यव परस्पर तुल्य तथा पद गुण हानि वृद्धि सूक्ष्म० यथा० से ३ संयम अनन्त गुणा न्यून हैं सूक्ष्म० तीनों ही से अनन्त गुणा अधिक है परस्पर पद गुण हानि वृद्धि और यथा० से अनन्त गुणा न्यून है यथा० चारों ही से अनन्त गुणा अधिक है परस्पर तुल्य है ।

अन्य बहुतव ।

सर्व से कम सामा० छेदो० के ज० संयम पर्यव (परस्पर तुल्य)

उत्प.

२ परिहार विगुह के	"	"	"	अनन्त गुणा	"
३ " " "	"	"	"	"	"
४ सामा० सिद्धो०	"	"	"	"	"
५ अन्तर्गमन	"	"	"	"	"
६ " " "	"	"	"	"	"
७ यथा यथा	"	"	"	"	"

१६ योग द्वार-४ संज्ञा, अज्ञा, और यथा० अज्ञा, और अज्ञा ।

१७ उपयोग द्वार-अन्तर्गमन के साकार उपयोगी होने के पक्ष में साकार-निर्गमन दोनों ही उपयोग वाले होते ।

१८ अज्ञा द्वार-३ संज्ञा अज्ञा के दोष (यथा ही अज्ञा) में होने अज्ञा० अज्ञा० अज्ञा में होने और यथा० अज्ञादी (उपलब्ध तथा ही) होने

१९ अज्ञा द्वार-साक्षात् सिद्धो० में ६ अज्ञा पक्षों में ३ अज्ञा अज्ञा० में अज्ञा अज्ञा यथा० में १ अज्ञा अज्ञा तथा अज्ञा ही होने ।

२१ घन्घ द्वार-तीन संयति ७-८ कर्म बांधे. सूक्ष्म०
६ कर्म बांधे, (मोह, आयु. छोड़ कर), यथा० बांधे तो
शाता वेदनी अथवा अघन्घ (नहीं बांधे.)

२२ चेदे द्वार-चार संयति ८ कर्म येदे यथा० ७ कर्म
(मोह सिवाय) तथा ४ कर्म (अघातिक) वेदे ।

२३ उदीरणा द्वार-आमा० छेदो० परि० ७-८ कर्म
उदेरे (उदीरणा करे) सूक्ष्म० ५-६ कर्म-उदेरे (६-होवे हो
आयु, मोह सिवाय) ५ होवे तो आयु, मांढ, वेदनी सिवाय
यथा० ५ कर्म तथा २ कर्म (नाम-गोत्र) उदेरे तथा
उदि० नहीं करे

२४ उपसंपज्झाणं द्वार-सामा० वाले सामा०
संयम छोड़े तो ५ स्थान पर (छेदो० सूक्ष्म० संयम० तथा
असंयम में) जावे, छेदो० वाले छोड़े तो ५ स्थान पर
(सामा० परि० सूक्ष्म० संयमा० तथा असंयम में) जावे, परि०
वाले छोड़े तो २ स्थान पर (छेदो० असंयम में) जावे, सूक्ष्म०
वाले छोड़े तो ४ स्थान पर (सामा० छेदो० यथा० असंयम
में) जावे, यथा० वाले छोड़े तो ३ स्थान पर (सूक्ष्म०
असंयम तथा मोक्ष में) जावे ।

२५ संज्ञा द्वार-३ चारित्र में ४ संज्ञावाला तथा संज्ञा
रहित शेष में संज्ञा नहीं ।

२६ आहार द्वार-४ संयम में आहारिक और यथा०
और अनाहारिक दोनों होवे ।

२७ भव द्वार-३ संयति ज० १ भव को उ० ८ भव (८ मनुष्य का, ७ देवता का एवं १५ भव) करके मोक्ष जावे मूढम ज० १ भव उ० ३ भव को यथा० ज० १ उ० ३ भव करके तथा उसी भव में मोक्ष जावे ।

२८ आगरेस द्वार-संयम कितनी बार आवे १

नाम	एक भव अपेक्षा	अनेक भव अपेक्षा
	ज. उत्कृष्ट	ज. उत्कृष्ट
सामायिक १	प्रत्येक सौ बार	२ प्रत्येक हजार बार
छेदोपस्था० १	"	२ नवसो बार से अधिक
परिहार वि० १	तीन बार	२ " "
मूढम सं० १	चार	२ नव बार
यथा ख्यात १	दो	२ पांच "

२९ स्थिति द्वार-संयम कितने समय रहे ?

एक जीवापेक्षा अनेक जीवापेक्षा

नाम	ज० उत्कृष्ट	अन्य उत्कृष्ट
सामायिक १	स. देश उ. क्रो. पू० शाश्वत शाश्वत	
छेदोपस्था० १	" " "	२० वर्ष ५० क्रोड़ सागर
परिहार वि० १	२६ वर्ष उद्या	" देश उद्या देश उ. क्रो. पू.
		२५० वर्ष

३० संयम मंगाय .. अन्नमृदुत अन्नमृदुत अन्नमृदुत
यथा ख्यात .. देश उद्या क. पू. शाश्वत शाश्वत

३० अन्तर द्वार-एक जीवापेक्षा ५ नवति का अन्तर

(४) माव से ममता सहित संपन्न साधन समक कर भोगवे ।

४ उद्यम पातवण स्थल जल संघाण पठिठावणिया समिति के ४ भेद—(१) द्रव्य मलमूत्रादे १० प्रकार के स्थान पर बैठे नहीं (१ जहां मनुष्यों का आसन जावन हो २ जीवों की जहां पात होवे ३ विषम ऊँची नीची भूमि पर ४ पोली भूमि पर ५ सचित्त भूमि पर ६ संरक्षी (विशाल नहीं) भूमि पर ७ तुरन्त की (अभी की) अचित्त भूमि पर ८ नगर गाँव के समीप में ९ लीलन फूलन हाथे वहाँ १० जीवों के बिल (दर) होवे वहाँ न बैठे) (२) क्षेत्र से वस्ती को दुर्गन्ध होवे वहाँ तथा आने रास्ते पर न बैठे (३) काल से बैठने की भूमि को काली काल पहिलेक्षण करे व पूजे (४) माव से बैठने को निकले तब आबस्तही ३ बार कहे बैठने के पहिले शंकेन्द्र महाराज की आज्ञा मागे बैठते समय बोलिरे ३ बार कहे और बैठ कर आने समय निम्सही ३ बार कहे जन्दी सुख जावे इस तरह बैठे ।

३ गुप्ति के चार चार भेद ।

१ मन गुप्ति के ४ भेद—(१) द्रव्य से आरंभ समारंभ में मन न प्रवर्तवे (२) क्षेत्र से ममस्त लोक में (३) काल में जाव जीव नक (४) माव से विषय



(३१) सचित्त पदार्थ (लीलोश्री, कच्चा पानी आदि)

भोगवे तो ॥ ११

(३२) शरीर में रोगादि होने पर गृहस्थों की सहायता

लेवे तो ॥ ११

(३३) मूला आदि सचित्त लिलोश्री, (३४) भेलड़ी के टुकड़े (३५) सचित्त कंद (३६) सचित्त मूत्र, (३७) सचित्त फल फूल (३८) सचित्त बीजआदि (३९) सचित्त तमक (४०) मेघा नमक (४१) सांभर नमक (४२) धूलखारा का नमक (४३) सघुद्रका नमक (४४) काला नमक ये सर्व सचित्त नमक भोगवे (लाने व वापरे) तो अनाचार लगने ।

(४५) कपड़े को घूर आदि से सुगन्ध मय बनावे तो

॥ ११

(४६) मोतन करके बमन करे तो

॥ ११

(४७) धिगा कंगण रेखें [मुलाय] आदि लेवे तो ॥ ११

[४८] गुप्त स्थानों को घेरे, नाक करे तो ॥ ११

[४९] भांग में अजन, सुग्मा आदि लगावे तो ॥ ११

[५०] दांतों को रंगावे तो ॥ ११

[५१] शरीर को तेन आदि लगा कर सुन्दर बनावे

तो ॥ ११

[५२] शरीर की गोमा के निचे बाल, नग आदि

उगाहे या अनाचार नु मे ।

■

■

भी सरस आहार निमित्त निमंत्रण आने पर रस लोभुषता से सरस आहार ले लेंगे तो ।

भी उत्तराध्ययन सूत्र में बताया है २ दोष ।

[१] अन्य कुल में से गोचरी नहीं करते हुए अपने सजन सम्बन्धियों के यहाँ से गोचरी करे तो ।

[२] बिना कारण आहार ले और बिना कारण आहार त्यागे ।

६ कारण से आहार लेवे	६ कारण से आहार छोड़े
छुपा पैदनी सहन नहीं होनेसे	रोगादि होजाने से
आचार्यादि की वैषाद्य हेतुमे	उपसर्ग आने से
ईर्ष्या शोषने के लिए	अन्नार्थ के नहीं पलने पर
संयम निर्वाह निमित्त	जीवों की रक्षा के लिए
जीवों की रक्षा करने के लिए	तपश्चर्या के लिए
धर्म कथादि कहने के लिए	अनशन[मंथार] करने के लिए

भी दशदैकालिक सूत्र में बताया है २२ दोष ।

[१] जहाँ नीचे दरगाजे में से होकर जाना पड़े वहाँ गोचरी करने में

[२] जहाँ अधिक मिठा होवे उस स्थान पर " "

[३] गृहस्थों के द्वार पर बैठ हुये चले बकरी ।

[४] पगे बन्नी ।

[५] बने ।

[६] गाय के बच्चे आदि को उन्नाप कर आवे तो ।

[५] मधुरवचन बोल कर [सुशामद करके] आहार का याचना करके लेवे तो ।

श्री निशीथ सूत्र में बताया हुये ६ दोष ।

[१] गृहस्थ के यहां जाकर ' इम वर्तन में क्या है ' इस प्रकार पूछ २ कर याचना करे तो ।

(२) अनाथ, मजूर के पास से दीनतापूर्वक याचना करके आहार ले तो ।

(३) अन्य तीर्थी (चाचा-साधु) की मिष्टा में से याचकर आहार लेवे तो ।

(४) पातक्या (शिथिलाचारी) के पास से याचकर लेवे तो ।

(५) जैन मुनियों की दुर्भिक्षा करने वाले कुल में से आहार लेवे तो ।

(६) मकान की आज्ञा देने वाले को (शठपाठर) साथ लेकर उसी दलाली से आहार लेवे तो ।

श्री दश भुत स्कन्ध सूत्र में बताया हुये २ दोष

(१) बालक निमित्त बनाया हुआ आहार लेवे तो

(२) गर्भवन्ती " " " " " "

श्री गृह्यसूत्र सूत्र में बताया हुआ १ दोष

(१) चार प्रकार का आहार रात्रि को बारी रत्नकर दूसरे रोज भोगवे तो दोष ।



ॐ साधु-समाचारी ॐ

तथा

साधुओं के दिन कृत्य और रात्रि कृत्य

भी उत्तराख्ययन सूत्र अध्ययन २६

समाचारी १० प्रकार की:-(१) आश्रमिय (२) निमिदिय (३) आपुच्छणा (४) पडि पुच्छणा (५) छेदना (६) इच्छा कार (७) मिच्छा कार (८) सहकार (९) आह-टणा और (१०) उप-भोग्या समाचारी ।

(१) आश्रमिय-गाधु आवरयह-ब्रह्मी (आहार निहार, विहार) कारण मे उपाधय मे बार जाये तब 'आश्रमिय' शब्द बोल कर निकले ।

(२) निमिदिय-कार्य समाप्त होने पर लोट कर प्रर पुनः उपाधय मे आये तब 'निमिदिय' शब्द बोल कर आये ।

(३) आपुच्छणा-बोवगी, पडिभेदण आदि आने मने कार्य गुरु को आज्ञा लेहर करे ।

(४) पडिपुच्छणा-अन्य गाधुओं का प्रत्येक कार्य गुरु की आज्ञा ल कर करना ।

(५) छेदना-अहंता तानी गुरु की आज्ञा नुसार दे दह अहंता बरन बरन न अहंता गुरु आहार को

(५) चौथे पहर के ३ भाग तक स्वाध्याय करे (६) चौथे भाग में उपकरणों का पडिलेहण करे तथा पठाने की भूमि भी पडिलेहरे; तत्पश्चात् (७) देवसी प्रतिक्रमण करे (६ आवश्यक करे) ।

रात्रि कृत्य

देवसी प्रति क्रमण करने के बाद प्रथम पहर में अम्-
ज्झाय टाल कर स्वाध्याय करे दूसरे पहर में ध्यान करे.
स्वाध्याय का अर्थ चित्तवे सत्पश्चात् निद्राभावे तो हीसरे
पहर में सविष यत्ना पूर्वक संयारा संस्तुती का स्वन्न निद्रा
लेकर चौथे पहर की शुरुआत में उठे, निद्रा के दोष टालने
के निमित्त काउसग्न करे, पौन पहर तक स्वाध्याय सज्झाय
करे, चौथे पहर में चौथे (अंतिम) भाग में रायसि प्रति-
क्रमण करे पश्चात् गुरु वंदन करके पणखाण करे ।

॥ इति साधु समाचारी सम्पूर्ण ॥



☞ दिन पहर माप का यन्त्र ☞

(श्री उत्तराख्ययन सत्र अध्ययन २६)

दिन में प्रथम दो पहर में माप उत्तर तरफ हो
रखकर लेवे और पीछे दो पहर में माप दक्षिण तरफ
होइ रखकर लेवे दाहिने पैर के छुटने तक की छाया को
अपने पगले (दाहिने) और अङ्गुल से मापे इस प्रकार
पोंगसी तथा पोन पोरसी का माप पैर और अङ्गुल पठाने
वाला यन्त्र—

१ लीं मौर ५ थी १ पौरमी पोन पोरसी
माह विदि७ म शुदि ७ प. विदि ७ म. शुदि ७ पूर्णिमा
अषाढ १, मां. ५, मां. १, मां. १, मां. ५, मां. ५, मां. १, मां. १, मां.

२-३ २-२ २-१ २-० २-६ २-८ २-७ २-६
 ध वण २-१ २-२ २-३ २-४ २-७ २-८ २-६ २-१०
 माद्रु २-५ २-६ २-७ २-८ २-१ २-२ २-३ २-४
 आश्विन २-६ २-१० २-११ २-० २-५ २-६ २-७ २-८
 कार्तिक २-१ २-२ २-३ २-४ २-६ २-१० २-११ २-०
 मा.ग.वि २-५ २-६ २-७ २-८ २-९ २-१० २-११ २-०
 पौष २-६ २-१० २-११ २-० २-७ २-८ २-९ २-१०
 माघ २-११ २-० २-६ २-८ २-९ २-१० २-११ २-०
 फाल्गुन २-७ २-६ २-५ २-४ २-३ २-२ २-१ २-०
 चैत्र २-३ २-२ २-१ २-० २-६ २-८ २-७ २-६

रात्रि पहर देखने [जानने]की विधि

(भी उत्तराध्ययन सूत्र अध्ययन २६)

जिस काल के अन्दर जो जो नक्षत्र समस्त रात्रि पूर्ण करता होवे वो नक्षत्र के चौथे भाग में आता है । उस समय ही पौरसी आती है रात्रि की चौथी पौरमी चरम (अन्तिम) चौथे भाग को (दो घटी रात्रिको) पाउस (प्रमात) काल कहते हैं । इस समय सङ्क्राय से निवृत्त हो कर प्रति क्रमण करे । नक्षत्र निम्न लिखित अनुसार है ।

भाषण में--१४ दिन उत्तराषाढा, ७ दिन अभिष, ८ दिन श्रवण १ धनिष्ठा

भाद्रपद में--१४दिन धनिष्ठा, ७दिन शतभिषा, ८ दिन पूर्वा भाद्रपद, १ दिन उत्तरा भाद्रपद

आश्विन में--१४ दिन उत्तरा भाद्रपद, १५ दिन रेवती १ दिन अश्वनी

कार्तिक में--१४ दिन अश्वनी, १५ दिन मारुती,
• १ दिन कृत्तिका

मगशर में--१४ दिन कृत्तिका, १५ दिन रोहिणी,
१ दिन मृगशर

षोड में- १४ दिन मृगशर, ८ दिन आर्द्रा, ७ दिन पुनर्वसु १ दिन पुष्य ।

१४ पूर्व का यन्त्र

१४ पूर्व के नाम	पद संख्या	शब्दों (स्याही) द्वांस्त	विषय-वर्णन
उत्पाद	कोट	१० ४ १	सर्वे द्रव्य, गुण पदार्थ की उत्पत्ति और नाश
अगण्य	७० लाख	१४ १२ २	संज्ञागुण का ज्ञान
धीर्य	६० "	८ ८ ४	जीवी के धीर्य का वर्णन
आस्ति	१ कोट	१८ १० ८	आस्ति नास्ति का संकट और व्याख्या
नास्ति			
ज्ञान प्रमाद	२ "	१२ ० १६	पांच ज्ञान का व्याख्यान
सत्य	" २६ "	२ ० ३२	सत्य मंत्र का "
आत्मा	" १ " ८० लाख	१६ ० २४	नव प्रमाण, दर्शन सहित आत्म स्वरूप
कर्म	" ८४ लाख	३० ० १२०	कर्म प्रकृति, स्थिति प्रभु भाग, भूम उतर प्रकृति
प्रत्याख्यान	१ कोट १६०	२० ० २४६	प्रत्याख्यान का प्रतिपादन
विद्या प्रमाद	२६ कोट	१४ ० ४१२	विद्या के अतिशय का व्याख्यान
कल्याणक	" १ "	१२ ० १०२४	प्रदयान के कल्याणक
प्रालायाय	" ६ "	१६ ० २०४८	वेदस, इत प्राल के वि. का
प्रियायश	०१ कोट १० लाख	३० ० ४०६६	प्रिया का व्याख्यान
लोक विदु-	६६ लाख	२४ ० ८१६२	विन्दु में लोक स्वरूप, सत्य अक्षर सप्रियात
सार			

अस्याही महेत हाथी के समान स्याही के ढगले से १४ लिखाया जाता है एवं १४ लिपन के लिये कुन १६३८३ हाथी प्रमाण स्याही की जरूरत होती है इतनी स्याही से जा लिखा जाता है उस ज्ञान को १४ पूर्व का ज्ञान कहते हैं।

॥ इति १४ पूर्व का यन्त्र सम्पूर्ण ॥

मन की स्थापना करे (२६) सतरह भेद से संयम पाले (२७)
 बारह प्रकार का तप करे (२८) कर्म टाले (२९) विषय मुख टाले
 (३०) अप्रतिबन्धपना करे (३१) स्त्री पुरुष नपुंसक रहित
 स्थान भोगवे (३२) विशेषतः विषय आदि से निवर्ते (३३)
 अपना तथा अन्य का लाया हुआ आहार वस्त्रादि इकट्ठे
 करके खांटे लेवे इस प्रकार के संभोग का पञ्चखाण करे
 (३४) उपकरण का पञ्चखाण करे (३५) सदोष आहार
 लेने का पञ्चखाण करे (३६) कषाय का पञ्चखाण करे
 करे (३७) अशुभ योग का पञ्च० (३८) शरीर शुश्रूषा का
 पञ्च० (३९) शिष्य का पञ्च० (४०) आहार पानी का
 पञ्च० (४१) दिशा रूप अनादि हरभाव का पञ्च० (४२)
 कपट रहित पति के वेप आंग आचार से प्रवर्ते (४३) गुण-
 यन्त साधु की सेवा करे (४४) ज्ञानादि सर्व गुण संपन्न
 होवे (४५) राग द्वेष रहित प्रवर्ते (४६) क्षमा सहित प्रवर्ते
 (४७) लोभ रहित प्रवर्ते (४८) अहङ्कार रहित प्रवर्ते (४९)
 कपट रहित (सरल-निष्कपट) प्रवर्ते (५०) शुद्ध अन्तः-
 करण (सत्यता) से प्रवर्ते (५१) करण सत्य (सविधि
 क्रिया काण्ड करना हुआ) प्रवर्ते (५२) योग (मन, वचन,
 काया) मृत्यु प्रवर्ते (५३) पाप से मन निवृत्त कर मनगुप्ति
 से प्रवर्ते (५४) काय-गुप्ति से प्रवर्ते (५५) मन्त्र भाव
 करके प्रवर्ते (५६) वचन (५७) पर-वचन-
 पितृ करके प्रवर्ते (५८) क. मावः

मन की स्थापना करे (२६) सतरह भेद से संपन्न पाले (२७) चारह प्रकार का टप करे (२८) कर्म टाले (२९) विषय मूल टाले (३०) अप्रतिरन्ध्रपना करे (३१) स्त्री पुरुष नपुंसक रहित स्थान मोगवे (३२) विशेषतः विषय आदि से निवर्ते (३३) अपना तथा अन्य का स्थाया हुआ आहार वस्त्रादि इकट्ठे करके बाँट लेवे इस प्रकार के संयोग का पञ्चखाण्य करे (३४) उपकारण का पञ्चखाण्य करे (३५) सदोष आहार लेने का पञ्चखाण्य करे (३६) कषाय का पञ्चखाण्य करे (३७) अशुभ योग का पञ्च० (३८) शरीर शुभ्रता का पञ्च० (३९) शिष्य का पञ्च० (४०) आहार पानी का पञ्च० (४१) दिशा रूप अनादि स्वभाव का पञ्च० (४२) कपट रहित यति के वेष और आचार में प्रवर्ते (४३) गुण-यन्त साधु की सेवा करे (४४) ज्ञानादि सर्व गुण संपन्न होवे (४५) राग द्वेष रहित प्रवर्ते (४६) क्षमा सहित प्रवर्ते (४७) लोभ रहित प्रवर्ते (४८) अहङ्कार रहित प्रवर्ते (४९) कपट रहित (सरल-निष्कपट) प्रवर्ते (५०) शुद्ध अन्तःकरण (सरयता) से प्रवर्ते (५१) करण सत्य (सविधि क्रिया काण्ड करता हुआ) प्रवर्ते (५२) योग (मन, वचन, काया) सत्य प्रवर्ते (५३) पाप से मन निवृत्त कर मनशुद्धि से प्रवर्ते (५४) काय-शुद्धि से प्रवर्ते (५५) मन में सत्य भाव स्थापित करके प्रवर्ते (५६) वचन (स्वाध्यादि) पर सत्य स्थापित करके प्रवर्ते (५७) काया को सत्य भाव से



१-२ देयलोकसे०॥	२॥	$१०\frac{१}{१९}$	६॥	२५	१००
यहां से	०॥ ३	४॥	१८	७२	२८८
३-४ देयलोकसे०॥	४	८	३२	१२८	२१२
५ यां ,	०॥ ५	१८॥	७५	३००	१२००
६ हा ,	०॥ ५	६॥	२५	१००	४००
७ यां ,	०॥ ४	४	१६	६४	२५६
८ यां ,	०॥ ४	४	१६	६४	२५६
९-१० ,	०॥ ३	४५	१८	७२	२८८
११-१२ ,	०॥ २॥	$३\frac{१}{८}$	१२॥	४०	९००
यहां से	०॥ २॥	$१०\frac{१}{१९}$	६॥	२५	१००
नव ग्रीष्मके ०॥ २	३	१२	४८	१८८	११२
यहां से	०॥ १॥	$१\frac{१}{८}$	४४	१८	७२
५ अनु. वि. ०॥ १	०॥ २	८	३२	८	३२

कुल ऊर्ध्व लोक के ६३॥ पन राज हुवे और सम
लोक के २३६ पन राज हुवे ।

॥ इति १४ राजलोक सम्पूर्ण ॥



योजन की है परंतु पृथ्वी पिंड १ ली नरक का १८०००० यो०, दूसरी का १३२००० यो०, तीसरी का १२८००० यो०, चौथी का १२०००० यो०, पांचवीं का ११८००० यो०, छठी का ११६००० यो०, और सातवीं का १०८००० योजन का पृथ्वी पिण्ड है ।

(६) करण्ड द्वार-पहेली नरक में ३ काण्ड हैं (१) खरकाण्ड १६ जात का रत्न मय १६ हजार योजन का (२) आयुल बहुल पानी (जल) मय ८० हजार योजन का (३) पंक बहुल कर्दम मय ८४ हजार योजन का कुल १८०००० योजन है शेष ६ नरकों में करण्ड नहीं ।

■ पाथड़ा ८ आन्तरा द्वार-पृथ्वी पिण्ड में से १००० योजन ऊपर और १००० योजन नीचे छोड़ कर शेष पोलार में आन्तरा और पाथड़ा है । केवल ७ वीं नरक में ५२५०० यो० नीचे छोड़ कर ३००० योजन का एक पाथड़ा है ।

पहेली नरक में	१३	पाथड़ा,	१२	आन्तरा है
दूसरी	"	"	११	" , १० " "
तीसरी	"	"	६	" , ८ " "
चौथी	"	"	७	" , ६ " "
पांचवीं	"	"	५	" , ४ " "
छठी	"	"	३	" , २ " "

पहेली नरक के १२ आन्तरा में से २ ऊपर के छोड़





ॐ भवनपति विस्तार ॐ

भवनपति देवों के २१ द्वार—१ नाम २ राम
३ राजधानी ४ ममा ५ मान संख्या ६ वर्ष ७ र
८ चिन्ह ९ रन्द्र १० सामानिक ११ लोकपाल १२ प्र
क्षिप १३ आत्म रक्षक १४ मनीका १५ देवी १६ परिप
१७ परिचारणा १८ वैक्रिय १९ अवधि २० मि
२१ उत्पन्न द्वार ।

१ नाम द्वार—१० भेद—१ अमुर कुमार २ ना
कुमार ३ सुवर्ण कुमार ४ विष्णु कुमार ५ अग्नि कु
६ द्वीप कुमार ७ दिशा कुमार ८ उदधि कुमार ९ वा
कुमार १० स्वनिम्न कुमार ।

२ वासा द्वार—१५ली नरक के १२ आन्तराग्नो
में नीचे के १० आन्तराग्नो में दश जाति के भवनप
रहे हैं ।

३ राजधानी द्वार—भवनपति की राजधानी नि
लोक के अग्रज वर द्वीप—ममुद्रों में उत्तर दिशा के अग्र
' अमर संघा ' बलेन्द्र की राजधानी है और हमारे नर
निक्रय के देवों की भी राजधानियाँ हैं । दक्षिण दिशा में
' अमर संघा ' समेन्द्र की और नर निद्राय के देवों की
भी राजधानियाँ हैं ।

४ ममा द्वार एकक १-२ के तीन ममा हैं-



सामानिक देव—(इन्द्र के उमराव समान देव)
चमरेन्द्र ६४०००, बलेन्द्र के ६०००० और शेष १८
इन्द्रों के छः २ हजार सामानिक देव हैं ।

११ लोक पाल देव—(कोट बाल समान) प्रत्येक
इन्द्र के चार २ लोक पाल हैं ।

१२ अयस्त्रिंश देव—(राज गुरु समान) प्रत्येक
इन्द्र के त्रिंश २ अयस्त्रिंश देव हैं ।

१३ आत्म रक्षक देव—चमरेन्द्र के २५६००० देव,
बलेन्द्र के २४०००० देव और शेष इन्द्रों के २४-२४
हजार देव हैं ।

१४ अनीका द्वार-हार्थी, घोड़े, रथ, मोष, पैदल,
गंधर्व, नृत्यकार एवं ७ प्रकार की अनीका है प्रत्येक
अनीका की देव संख्या—चमरेन्द्र के ८१२८०००, बलेन्द्र
के ७६२०००० और १८ इन्द्रों के ३५५६००० देव
होते हैं ।

१५ देवी द्वार—चमरेन्द्र तथा बलेन्द्र की ५-५
अग्रमहिषी (पटरानी) हैं प्रत्येक पटरानी के आठ हजार
देवियों का परिवार है एकेक देवी आठ हजार वैक्रिय करे
अर्थात् २२ कोट वैक्रिय रूप होते हैं शेष १८ इन्द्रों की
६-६ अग्रमहिषी हैं एकेक के ६ ६ हजार देवियों का
परिवार है और सर्व ६-६ हजार वैक्रिय करे एवं २१
हैं ६० लाख वैक्रिय रूप होते हैं ।



१७ परिचरण द्वार—(मैथुन) पांच प्रकार का—
मन, रूप शब्द, स्पर्श और काय परिचरण (मनुष्य
वन् देवी के साथ भोग)

१८ ऐक्य कर तो—चमोन्द्र देव—देवियों से समस्त जम्बूद्वीप मरे, असंख्य द्वीप मरने की शक्ति है परन्तु मरे नहीं ।

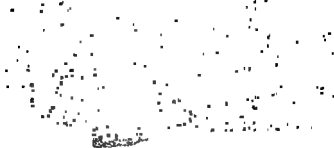
पक्षेऽत्र देव-देवियों से साधारण जंपूड़ीय भरे, अमंल्य मरने की शक्ति है परन्तु मर नहीं ।

१८ इन्द्र देव-देवियों ने समस्त अश्वर्दीप में मंथपात्र
डीप भरने की शक्ति दे परन्तु सर नहीं ।

लोकपाल देवियों की शक्ति मंथनात द्वीप भरने की
शेष मधों की गामानिक, प्रयस्त्रिश देव-देवी और लोकपाल
देव की वैश्व शक्ति अपने इन्द्रवन्, वैश्व का कान
१५ दिन का जानना ।

१६ अथपि द्वार-असुर कुमार देव ज० २५ पा०
उ० दुर्ज्य भौवम देवमोह, नीच नीमनी नाह, तीर्थो
अर्धवर्ग द्वार समुद्र गह जान व दम गुण ह जाति के
मदनगति देव ज० २५ पा० उ० दुर्जा अर्धवर्ग के मने
गह, नीच बदली नाह, तीर्थो अर्धवर्ग द्वार समुद्र गह
जान दम ।

• • • • •



❀ वाण व्यन्तर विस्तार ❀

वाण व्यन्तर के २१ द्वार-१ नाम २ वास ३ नगर
४ राजधानी ५ समा ६ वर्ण ७ वस्त्र ८ चिन्ह ९ इन्द्र १०
सामानिक ११ आत्म रक्षक १२ परिषद १३ देवी १४
अनीका १५ वैक्रिय १६ अवधि १७ परिचारण १८ सुग
१९ सिद्ध २० भव २१ उत्पन्न द्वार ।

१ नाम द्वार-१६ व्यन्तर-१ विशाख २ भूत ३ यव
४ राघव ५ किशर ६ किंपुरुष ७ महोरग ८ गंधर्वा ९
आणवन्ती १० पान वन्ती ११ ईश्वरी १२ भूय वाय
१३ कन्दिय १४ महा कन्दिय १५ कोदण्ड १६ पर्वग
देव ।

२ वाणा द्वार-रत्न प्रसा नरक के ऊपर का १ हजार
योजन का जो पिण्ड है उसमें १०० योजन ऊपर १००
योजन नीचे छोड़ कर ८०० योजन में ८ जाति के वाण-
व्यन्ता देव रहते हैं और ऊपर के १०० यो० पिण्ड में
१० यो० ऊपर, १० यो० नीचे छोड़कर ८० यो० में ८
में १६ जाति के व्यन्ता देव रहते हैं । (ए०० की १६
मान्यता है कि ८०० यो० में व्यन्ता देव और ८० यो०
में १० कुम्भका देव रहते हैं ।)

३ जगत् द्वार-ऊपर के वयस में १ लाख १०



किं प्र	किं प्र	किं पुरुष	अशोक वृष
किं पुरुष	सा पुरुष	महा पुरुष	चंपक "
महोरग	अतिकाय	महाकाय	नाग "
गंधर्व	गति रति	गति यश	तुंबरु "
काण्वश्रो	सनिहि	सामानो	कदम्बा "
पाण्य पश्रो	घाई	विघाई	मुलस "
ईसी वाय	आपि	आपि पाल	बड़ "
भूय वाय	ईश्वर	महेश्वर	छटंक उपका
कन्दिय	सुविच्छ	विशाल	अशोक वृष
महाकान्देय	हास्य	हास्यगति	चंपक "
कोदगद	श्वेत	महाश्वेत	नाग "
पयंग देव	पतंग	पतंग पति	तुंबरु "

१० सामानिक द्वार—गर्भे इन्द्रों के चार चार हजार सामानिक हैं ।

११ आरम रक्षक द्वार—मर्भे इन्द्रों के सोलह सोलह हजार आरम रक्षक देव हैं ।

१२ परिव्रजा द्वार—मरुत पनि समान इनके भी तीन प्रकार की समा हैं । (१) आभ्यन्तर (२) मध्यम (३) बाह्य ।

समा	देव संख्या	स्थिति	द्वार संख्या	स्थिति
आभ्यन्तर	२०००	॥ पश्य	२००	॥ पश्य जातेति
मध्यम	१०००	॥ मध्यम	१००	॥
बाह्य	२००	॥ पश्य	२००	॥ मध्यम

❧ ज्योतिषी देव विस्तार ❧

ज्योतिषी देव २॥ द्वीप में (ना चलने वाले) और २॥ द्वीप बारह द्दि हैं ये पक्षी ईंट के आकारवत हैं सूर्य-सूर्य के और चन्द्र-चन्द्र के एक-एक लाख योजन का अन्तर ॥ चर ज्योतिषी से स्थिर ज्यो० आधी कान्ति बलि हैं चन्द्र के साथ कमिष्ठ नक्षत्र और सूर्य के साथ पुष्य नक्षत्र ॥ सदा योग है मानुषोत्तर पर्वत से भागे और अलोक से ११११ योजन इस तरह उसके बीच में स्थिर ज्यो० देव-विमान हैं परिवार चर ज्यो० समान जानना ।

ज्यो० के ३१ द्वार-१ नाम २ वासा ३ राजधानी ४ समा ५ वर्ण ६ वस्त्र ७ विन्ध्य ८ विमान चौड़ाई ९ विमान जाड़ाई १० विमान घाटक ११ मांडला १२ गति १३ साप क्षेत्र १४ अन्तर १५ संख्या १६ परिवार १७ इन्द्र १८ सामानिक १९ आत्म रक्षक २० परिपदा २१ अभीक्षा २२ देवी २३ गति २४ श्रद्धा २५ वैक्रिय २६ अवधि २७ परिवारण २८ सिद्ध २९ भव ३० मन्त्र महत्त्व ३१ उत्पन्न द्वार ।

१ नाम द्वार-१ चन्द्र २ सूर्य ३ प्रद ४ नक्षत्र और ५ तारा

२ वासा द्वार-गीर्वाण लोक में समभूमि में ७६०

ग्रह वि० की, १ गाउ नक्षत्र वि० की और ०॥ गाउ तारा वि० की चौड़ाई है । जाड़ाई इस से आधी २ जानना सर्व विमान स्फटिक स्तन मय हैं ।

१० विमान वाहक-ज्योतिषी विमान आकाश के आधार पर स्थित रह संकते हैं परन्तु स्वामी के वक्षुमान के लिये जो देव विमान उठाकर फाते हैं उनकी संख्या-चन्द्र सूर्य के विमान के १६-१६ हजार देव, ग्रह के विमान के ८-८ हजार देव, नक्षत्र विमान के ४-४ हजार और तारा विमान के २-२ हजार देव वाहक हैं । ये समान २ संख्या में चारों ही दिशाओं में सुदं करके-पूर्व में सिंह रूप से, पश्चिम में वृषभ रूप से, उत्तर में श्वस रूप से, और दक्षिण में हस्ति रूप से, देव रहते हैं ।

११ मांडला द्वार-चन्द्र सूर्य आदि की प्रदक्षिणा (चारों ओर चक्का लगाना)-दक्षिणायन में उत्तरायण जाने के मार्ग को ' मांडला ' कहते हैं । मांडले का क्षेत्र ५१० यो० का है । जिसमें ३३० यो० लवण समुद्र में और १८० यो० जंबूद्वीप में है । चन्द्र के १५ मांडले हैं । जिनमें से १० लवण में, ५ जंबू द्वीप में हैं । सूर्य के ८४ मांडलों में से ११६ लवण में और ६५ जंबू द्वीप में हैं । ग्रह के ८ मांडलों में से ६ लवण में और २ जंबू द्वीप में हैं । जंबू द्वीप में ज्योतिषी के मांडले हैं वे निषिध आर नील रत्न परत के ऊपर हैं । चन्द्र के मांडलों का

से ११२१ यो० दूर ज्यो० विमान फिरते हैं । अर्थात् $१०००० + ११२१ + ११२१ = १२२४२$ यो० का अन्तर है । अलोक और ज्यो० देवों का अन्तर ११११ यो० का, मांडलापेक्षा अन्तर मेरु पर्वत से $४४ = ८०$ यो० अन्दर के मांडल का और ४५३३० यो० बाहर के मांडल का अन्तर है । चन्द्र चन्द्र के मांडल का $३५ \frac{३०४}{६१७}$ यो० का और सूर्य सूर्य का मांडल का दो यो० का अन्तर है निर्व्याप्त अपेक्षा ज० १०० धनुष्य का और उ० २ गाउ का अन्तर है ।

१५ संख्या द्वार-जम्बू द्वीप में ८ चंद्र, २ सूर्य हैं सरण समुद्र में ४ चंद्र, ४ सूर्य हैं पातली सरण में १२ चंद्र, १२ सूर्य हैं कालोदधि समुद्र में ४२ चंद्र, ४२ सूर्य हैं पुष्करगर्भ द्वीप में ७२ चंद्र, ७२ सूर्य हैं एवं मनुष्य क्षेत्र में १३२ चंद्र १३२ सूर्य हैं आगे अभी दिगाय ने समझना अर्थात् पहले द्वीप व समुद्र में जितने चंद्र तथा सूर्य हों उनको तीन में गुणा करके पश्चिमी की संख्या गिनना (जाबना) ।

टिप्पणी—कालोदधि में चंद्र सूर्य जानने के लिये उसमें बसल घाते की भाण्ट में १० चंद्र १२ सूर्य हैं उन्हें $१० \times ३ = ३०$ में ६४ की संख्या (सरण समुद्र के ४ चंद्र ४ सूर्य $४ \times ३ = १२$ में ६४ की संख्या (पातली सरण के १२ चंद्र १२ सूर्य $१२ \times ३ = ३६$ में ६४ की संख्या (पुष्करगर्भ द्वीप के ७२ चंद्र ७२ सूर्य $७२ \times ३ = २१६$ में ६४ की संख्या) जोड़कर ३०० में ३६० का बाकस में ४० होंगे ।

२४ ऋद्ध द्वार-मर्वे न कम ऋद्धि तारा की उपसे उत्तरांचर महा ऋद्धि ।

२५ वैक्रिय द्वार-वैक्रिय रूप मे सम्पूर्ण जम्बू द्वीप मंगते हैं मर्यादा जम्बू द्वीप मंगे की शक्ति चंद्र सूर्य, सामानिक और देवियों में भी है ।

२६ अघाधि द्वार-सर्द्धा ज० उ० संख्यात द्वीप समुद्र ऊंचा अपनी धाजा पतका तक और नीचे पहली नरक तक जाने-देखे ।

२७ परिचारणा-पांचों ही मनुष्य वत्) प्रकार से भोग करे ।

२८ सिद्ध द्वार-ज्योतिषी देव से निकल कर १ समय में १० जीव और ज्योतिषी देवियों से निकल का १ समय में २० जीव मोक्ष जा सकते हैं ।

२९ भय द्वार-भव करे तो ज० १ २-३ उ० अनन्त भव करे ।

३० अरुप बहुत्य द्वार-सर्व से कम चंद्र सूर्य, उन से नक्षत्र, उन से ग्रह और उन से तारे (देव) संख्यात संख्यात गुणा हैं ।

३१ उत्पन्न द्वार-ज्योतिषी देव रूप से यह जीव अनन्त अनन्त बार उत्पन्न हुआ परन्तु वीतराग आशा का आश्रयन किये बिना आत्मिक सुख नहीं प्राप्त कर सका ।

॥ इति ज्योतिषी देव विस्तार सम्पूर्ण ॥

३ संठाण द्वार-१, २, ३, ४, और ६, १०, ११, १२, एवं = देव लोक अर्ध चन्द्राकार हैं । ५, ६, ७, ८ देव लोक और ९ ग्रीयवक पूर्ण चन्द्राकार हैं । चार अनु-त्तर विमान त्रिघोन चारों ही तरफ हैं और बीच में सर्वार्थ सिद्ध विमान गोला चन्द्राकार है ।

४ आधार द्वार-विमान और पृथ्वी पिण्ड रत्न मय है । १-२ देव लोक घनोदधि के आधार पर है । ३-४-५ देव घन वायु के आधार से है । ६-७-८ देव घनोदधि घनवायु के आधार से है । शेष विमान आकाश के आधार पर स्थित हैं ।

५ पृथ्वी पिण्ड ६ विमान ऊंचाई, ७ विमान और परमर, ८ वर्ण द्वार—

विमान	पृथ्वी पिण्ड	वि० ऊंचाई	वि० संख्या	परमर	वर्ण
१	०३०० यो०	२०० यो०	३२ लाख	१३	२ वर्ण
२	१३०० "	३०० "	६८ "	१३	५ "
३	२६०० "	६०० "	१२ "	१२	४ "
४	२६०० "	१०० "	८ "	१२	४ "
५	२३०० "	३०० "	४ "	६	३ "
६	२२०० "	७०० "	४० हजार	२	३ "
७	२४०० "	२०० "	५० "	४	२ "
८	२३०० "	८०० "	६ "	४	२ "
९	२३०० "	१०० "	४००	४	१ "
१०	२३०० "	१०० "	४००	४	१ "

संतकेन्द्र मंडूकामंडूक	५०	"	४	३३	२०००००
महाशुकेन्द्र अभ्य	४०	"	४	३३	१६००००
सदलेन्द्र हस्ति	३०	"	४	३३	१२००००
प्राणतेन्द्र सर्प	२०	"	४	३३	८००००
अच्युतेन्द्र गरुड	१०	"	४	३३	४००००

१७ अनीका-प्रत्येक इंद्र की अनीका ७-७ प्रकार की है प्रत्येक अनोका में देवता उन इंद्रों के सामानिक से १२७ गुणा होते हैं ।

१८ परिपदा द्वार-प्रत्येक इंद्र के तीन २ प्रकार की परिपदा होती हैं ।

इन्द्र अभ्यन्तर देव	मध्यम देव	बाह्य प० देव	देवियें
१ १२ हजार	१४ हजार	१६ हजार	शुकेन्द्र
२ १० "	१२ "	१४ "	७००
३ ८ "	१० "	१२ "	६००
४ ६ "	८ "	१० "	५००
५ ४ "	६ "	८ "	ईशानेन्द्र
६ २ "	४ "	६ "	१००
७ १ "	२ "	४ "	८००
८ ५००	१ "	२ "	७००
९ २५०	२००	१ "	ये ८ इंद्रों के
१० १२५	२५०	५००	देवियें नहीं

१९ देवी द्वार-शुकेन्द्र के आठ अप्रमद्विपी देवियें हैं एकैक देवी के १६-१६ हजार देवियों का परिवार है ।

प्रत्येक देवी १६-१६ हजार वैक्रिय करे इसी प्रकार ईशा-

की भी $८ \times १६००० - १२८००० \times १६००० = २०$

परि०, ५-६ देव-में रूप परि०, ७-८ देव-में शब्द परि०
है तो १२ देव० में मन परि०, आगे नहीं ।

२३ पुण्य द्वार-जितने पुण्य व्यंतर देव १०० वर्ष
में क्षय करते हैं उतने पुण्य नागादि है देव २०० वर्ष में,
अमुर० ३०० वर्ष में, ब्रह्म-नक्षत्र-तारा ४०० वर्ष में, चंद्र
सूर्य ५०० वर्ष में, सौधर्मे-ईशान १००० वर्ष में, ३-४
देव० २००० वर्ष में, ५-६ देव. ३००० वर्ष में, ७-८
देव. ४००० वर्ष में, है तो १२ दे. ५००० वर्ष में, १ लो.
त्रिक १ लाख वर्ष में दूसरी त्रिक २ लाख वर्ष में, तीसरी
त्रिक ३ लाख वर्ष में, ४ अनु. वि. ४ लाख वर्ष में और
सर्गाधि सिद्ध के देवता ५ लाख वर्ष में इतने पुण्य क्षय करते
हैं ।

२४ सिद्ध द्वार-वैमानिक देव में से निकले हुए
मनुष्य में आकर एक समय में १०८ सिद्ध हो सके हैं देशी
में से निकल कर २० सिद्ध हो सके हैं ।

२५ भव द्वार-वैमानिक देव होने के बाद भव करे
तो अ० १-२-३ संख्यात, असंख्यात यावत् अनन्त भव
भी करे ।

२६ उन्मथ द्वार-नव ग्रीष्मकेक वैमानिक देव रूप
में अनन्ता बार यह तीन उन्मथ श. गृहा है ४ अनु० वि०
में ज्ञान के बाद मन्विता (२४) भव में और सर्गाधि
सिद्ध में भव में पाव जाय ।

संख्यादि २१ बोल अथोत् डालापाला

संख्या के २१ बोल हैं:- १ जषन्य संख्याता २ मध्यन संख्याता ३ उत्कृष्ट संख्याता असंख्याता के नव भेद
 १ ज० प्र० असंख्यात ४ ज० युक्ता अ० ७ ज० अ० अ०
 २ म० " " ५ म० " " ८ म० " "
 ३ उ० " " ६ उ० " " ९ उ० " "

अनंता के ६ भेद

१ ज० प्रत्येक अनंता ४ ज० युक्ता अनंता ७ ज० अनंता अ०
 २ म० " " ५ म० " " ८ म० " "
 ३ उ० " " ६ उ० " " ९ उ० " "

ज० संख्याता में एक दो तक गिनना म० संख्याता में तीन से आगे यावत् उ० संख्याता में एक न्यून उ० संख्याता के लिये माप बताते हैं-

चार पाला-(१) शीलाक (२) प्रति शीलाक (३) महा शीलाक (४) अनवस्थित इनमें से प्रत्येक पाला धान्य मापने की पाली के आकार वत् है किन्तु प्रमाण में १ सप्त योजन लम्बे चौड़े ३१६२२७ यो० अधिक की परिधि वाला, १० हजार यो० गद्गा ८ यो० की जगती कोट त्रिमके ऊपर ०॥ यो० की वेदिका इस प्रकार पाला की कल्पना करना तथा इनमें से अनवस्थित पाला को न के दानों से सम्पूर्ण भर कर कोई देव उठावे,

और अनवस्थित को क्रम से भर देवे ।

इस तरह चार ही पाले भर देवे अन्तिम दाना जिम द्वीप व समुद्र में पड़ा होवे वहाँ से प्रथम द्वीप तक डाले हुये सब दानों को एकत्रित करे और चार ही पालों के एकत्रित किये हुये दानों का एक ढेर करे इस में से एक दाना निकाले तो उत्कृष्ट संख्याता, निकाला हुआ एक दाना डाले तो जघन्य मल्लिक असंख्याता जानना इस दाने की संख्या को परस्पर गुणाकार (अन्वय) करे और जो मल्लिक आवे वो जघन्य युक्ता असंख्याता कहलाती है इस में से एक दाना ग्यून वो उ० प्र० असंख्याता दो दाना ग्यून वां मध्यम प्र० असंख्याता (१ मावलिका का समप ज० युक्ता असंख्याता जानना) ।

जघन्य युक्ता असंख्याता की राशि (ढेर) को परस्पर गुणा करने से ज० असंख्याता असंख्यात मल्लिक निकलती है इस में से १ ग्यून वां उ० युक्ता असंख्यात दो ग्यून वाली म० युक्ता असंख्याता जानना ।

ज० अम० असंख्याता की राशि को परस्पर गुणित करने से ज० जघन्य अनन्ता मल्लिक आवे है इस में से १ ग्यून वाली मल्लिक म० अम० असंख्याता और १ ग्यून उ० अम० असंख्याता जानना ।

१० परम-भाव-द्रव्यास्तिक नय-पर्यायास्तिक नय
६ भेद-१ द्रव्य २ द्रव्य व्यञ्ज ३ गुण ४ गुण व्यञ्जन
स्वभाव ६ विभाव-पर्यायास्तिक नय । इन दोनों बयों के
७०० भेद हो सकते हैं ।

नय सात-१ नैगम २ संग्रह ३ व्यवहार ४ शृङ्ख-
ल ५ शब्द ६ समभिरुद्ध ७ एवं भूत नय इनमें से प्रथम
४ नयों को द्रव्यास्तिक, अर्थ तथा क्रिया नय कहते हैं
और अन्तिम तीन को पर्यायास्तिक शब्द तथा ज्ञान नय
कहते हैं ।

१ नैगम नय-विशेष स्वभाव एक नहीं, अनेक
मान, उन्मान, प्रमाण से वस्तु माने तीन काल, ४ निवेप
सामान्य-विशेष आदि माने इसके तीन भेद—

(१) अंश-वस्तु के अंश को ग्रहण करके माने जैसे
निगोद को सिद्ध समान माने ।

(२) आरोप—भूत, भविष्य और वर्तमान, तीनों
कालों को वर्तमान में आरोप करे ।

(३) विकल्प—अध्वसाय का उन्मज होना एवं ७००
वैकल्प हो सकते हैं ।

शुद्ध नैगम नय और अशुद्ध नैगम एवं दो भेद भी हैं ।

२ संग्रह नय-वस्तु की भूल मत्ता को ग्रहण करे
जैसे सर्व जीवों को सिद्ध समान माने, जैसे एग आद्या

७ निश्चय व्यवहार-निश्चय को प्रगट करानेवाला व्यवहार है । व्यवहार चलवान है व्यवहार से ही निश्चय तक पहुँच सकते हैं जैसे निश्चय में 'कर्म' का - कर्ता कर्म है व्यवहार से जीव कर्मों का कर्ता माना जाता है जैसे निश्चय से हम चलते हैं) किन्तु व्यवहार से कहा जाता है कि गाँव आया; जल चूता है परन्तु कहा जाता है कि छत चूती इत्यादि है

८ उपादान-निमित्त-उपादान यह मूल कारण हैं जो स्वयं कार्य रूप में परिणमता है । जैसे घट का उपादान कारण मिट्टी और निमित्त यह सहकारी कारण जैसे घट बनाने में कुम्हार, पावड़ा, चाक आदि । शुद्ध निमित्त कारण होने तो उपादान को साधक होता है और अशुद्ध निमित्त होने तो उपादान को बाधक भी होता है ।

९ चारप्रमाण-प्रत्यक्ष, आगम, अनुमान उद्देश, प्रमाण । प्रत्यक्ष के दो भेद- १ इन्द्रिय प्रत्यक्ष (पाँच इन्द्रियों से होने वाला प्रत्यक्ष ज्ञान) और २ नो इन्द्रिय प्रत्यक्ष (इन्द्रियों की सहायता के बिना केवल आत्म-शुद्धता से होने वाला प्रत्यक्ष ज्ञान) इसके २ भेद- १ देह से (अवधि और मनः पर्यन्त) और २ मर्ब से (केवल ज्ञान)

आगम प्रमाण-शास्त्र वचन, आगमों के कथन को मानना ।

भेद से जानना सो विशेष । जैसे द्रव्य सामान्य जीव अ-
जीव, ये विशेष । जीव द्रव्य सामान्य, संसारी सिद्ध विशेष-
प इत्यादि ।

११ गुण गुणी-पदार्थ में जो खास वस्तु (स्वभाव) है वो गुण और जो गुण जिसमें होता वो वस्तु (गुण धारक) गुणी है । जैसे ज्ञान यह गुण और जीव गुणी, सुगन्ध गुण और पुष्प गुणी । गुण और गुणी भेद (अभिन्न) रूप से रहते हैं ।

१२ ज्ञेय ज्ञान ज्ञानी- जानने योग्य (ज्ञान के वि-
षय भूत) सर्व द्रव्य ज्ञेय । द्रव्य का जानना सो ज्ञान है और पदार्थों का जानने वाला वो ज्ञानी । ऐसे ही ज्ञेय ज्ञान ज्ञानी आदि समझना ।

१३ उपश्लेषा, विद्वेषा, धृष्टा- उत्पन्न होना, नष्ट होना और निश्चल रूप से रहना जैसे जन्म लेना मरना व जीव याने कायम (अमर) रहना ।

१४ आधेय-आधार-धारण करने वाला आधार और जिसके आधार से (स्थित) रहे वो आधेय । जैसे- पृथ्वी आधार, पटादि पदार्थ आधेय, जीव आधार, ज्ञाना-
दि आधेय ।

१५ आविर्भाव-निरोभाव-जो पदार्थ गुण दूर है वो निरो भाव और जो पदार्थ गुण समीप में है वो आविर्भाव । जैसे दूध में घा का निरोभाव है और मक्खन में घी का विर्भाव है ।

२ पिण्डस्थ-शरीर में रहे हुवे अनन्त गुण युक्त चैतन्य का अध्यात्म-ध्यान करना ।

३ रूपस्थ-रूपी होते हुवे मो कर्म योग से आत्मा संसार में अनेक रूप धारण करती है । एवं विविध संसार अवस्था का ध्यान करना व उससे छूटने का उपाय सोचना ।

४ रूपातीत-सच्चिदानन्द, अमर्त्य, निराकार, निरंजन सिद्ध प्रभु का ध्यान करना ।

२० चार अनुयोग-१ द्रव्यानुयोग-जोय, अजीव, चैतन्य जड़ (कर्म) आदि द्रव्यों का स्वरूप का जिसमें वर्णन होवे २ गणितानुयोग-जिसमें घंघ्र, पहाड़, नदी, देवलोक, नारकी, ज्योतिषी आदि के गणित-माप का वर्णन होवे ३ चरण करणानुयोग-जिसमें साधु-भावक का आचार, क्रिया का वर्णन होवे ४ धर्म कथानुयोग-जिसमें साधु भावक, राजा रंक, आदि के वैराग्य मय बोध दायक जीवन प्रसंगों का वर्णन होवे

२१ जागरण तीन-(१) युष जाग्रिका-तीर्थकर और केवलियों की दशा (२) अयुष जाग्रिका-लज्जस्थ मुनियोंकी और (३) सुदालु जाग्रिका-भावकों की (अवस्था) ।

२२ द्वापरुपा नव-एकैक वस्तु की उपचार नय से ६-६ प्रकार से व्याख्या हो सकती है ।

(१) द्रव्य में द्रव्य का उपचार-जैसे काष्ठ में बंशलोचन

(२) द्रव्य में गुण का " - " जीव ज्ञानवन्त है

- (३) " " पर्याय का " - " " स्वरूपवान है
 (४) गुण में द्रव्य का " - " अज्ञानी जीव है
 (५) " " गुण " " - " ज्ञानी होने पर भी
 क्षमावन्त है ।
 (६) गुण में पर्याय का " - " यह तपस्वी बहुत
 स्वरूपवान है ।
 (७) पर्याय में द्रव्य का " - " यह प्राणी देवता
 का जीव है ।
 (८) " " गुण का " - " यह मनुष्य बहुत
 ज्ञानी है ।
 (९) " " पर्याय का " - " यह मनुष्य दयाम
 बर्ण का है इत्यादि ।

२३ पक्ष आठ-एक वस्तु की अपेक्षा से अनेक
 व्याख्या हो सकती है । इस में मुख्यतया आठ पक्ष लिये
 जा सकते हैं । नित्य, अनित्य, एक, अनेक, सत्, असत्,
 वस्तु, अवस्तु ये आठ पक्ष निश्चय व्यवहार से
 उभारे जाते हैं ।

पक्ष	१. २. ३. ४. ५. ६. ७. ८.	निश्चय नय से
नित्य	१. २. ३. ४. ५. ६. ७. ८.	१. २. ३. ४. ५. ६. ७. ८.
अनित्य	१. २. ३. ४. ५. ६. ७. ८.	१. २. ३. ४. ५. ६. ७. ८.
एक	१. २. ३. ४. ५. ६. ७. ८.	१. २. ३. ४. ५. ६. ७. ८.
अनेक	१. २. ३. ४. ५. ६. ७. ८.	१. २. ३. ४. ५. ६. ७. ८.
सत्	१. २. ३. ४. ५. ६. ७. ८.	१. २. ३. ४. ५. ६. ७. ८.
असत्	१. २. ३. ४. ५. ६. ७. ८.	१. २. ३. ४. ५. ६. ७. ८.

असत् पर गति पर अपेक्षा असत् है - पर गुण अपेक्षा असत् है
 वस्तुव्य गुणस्थान आदि की व्याख्या हो सिद्ध के गुणों की अपेक्षा
 करने से (३) हो सके
 अव्यक्तत्व ओ व्याख्या केवली भी नहीं - सिद्ध के गुणों की अपेक्षा
 कर सके तथा नहीं हो सके

२४ सप्त भेदी-१ स्यात्-अस्ति, २ स्यात् नास्ति
 ३ स्यात् अस्ति-नास्ति ४ स्यात् वक्तव्य ५ स्यात् अस्ति
 अवक्तव्य ६ स्यात् नास्ति अवक्तव्य ७ स्यात् अस्ति नास्ति
 अवक्तव्य । (४)

यह सप्त भेदी प्रत्येक पदार्थ (द्रव्य) पर उतारी जा
 सकती है । इसमें ही स्याद्वाद का 'रहस्य' मरा हुआ है ।
 प्रत्येक पदार्थ के अनेक अपेक्षा से देखने वाला सदा सम-
 भावी होता है ।

इष्टान्त के लिये सिद्ध परमात्मा के ऊपर सप्त भेदी
 उतारी जाती है ।

१ स्यात् अस्ति-सिद्ध स्वगुण अपेक्षा है ।

२ स्यात् नास्ति-सिद्ध पर गुण अपेक्षा नहीं (पर-
 गुणों का अभाव है)

(३) स्यादास्ति नास्ति-विद्यो में स्वगुणों की अस्ति
 और वागुणों की नास्ति है ।

(४) स्यादवक्तव्य-आस्ति-नास्ति प्रगपन्न है ना-
 बी वह समय में नहीं रही जा सकती है ।

(५) स्यादास्ति अवक्तव्य-स्वगुणों की अस्ति
 है ना बी प्रगपन्न में नहीं रही जा सकती है ।

(६) स्यान्नास्त्यवक्तव्य—य गुणों की नास्ति है
और १ समय में नहीं कहे जा सकते हैं ।

(७) स्यादस्ति नास्त्य वक्तव्य—अस्ति नास्ति
दोनों हैं परन्तु एक समय में कहे नहीं जा सकते

इस स्याद्वाद् स्वरूप को समझ कर मुदा समभावी
यन कर रहना जिससे आत्म-कल्याण होवे ।

॥ इति नय प्रमाण विस्तार सम्पूर्ण ॥



भाषा—पद

(श्रीपद्मयणा सूत्र के ११ वें पद का अधिकार)

(१) भाषा जीव को ही होती है । अजीव को नहीं होती किसी प्रयोग से (कारण से) अजीव में मे भी भाषा निरुलती हुई सुनी जाती है । परन्तु यह जीव की ही सत्ता है ।

(२) भाषा की उत्पत्ति—आदामिक, वैक्रिय, और आहारिक इन तीन शरीर द्वारा ही हो सकती है ।

(३) भाषा का संस्थान—वज्र समान है भाषा के पुद्गल वज्र संस्थान वाले हैं ।

(४) भाषा के पुद्गल उत्कृष्ट लोक के अन्त (लोकान्त) तक जाते हैं ।

(५) भाषा दो प्रकार की है—गर्याप्त भाषा (सत्य असत्य) और अवर्याप्त भाषा (मिथ और व्यवहार भाषा)

(६) भाषक—समुद्योग जीव और व्रत के १६ दण्डक में भाषा बोली जाती है । ५ स्थावर और सिद्ध भगवान् अभाषक हैं । भाषक अन्य हैं । अभाषक इनसे अनन्त हैं ।

(७) भाषा चार प्रकार की है—सत्य, असत्य, मिथ और व्यवहार भाषा १६ दण्डकों में चार भाषा तीन दण्डकों (विकलेन्द्रिय) में व्यवहार भाषा है ५ स्थावर भाषा नहीं ।

लोक के अन्त मग तक चले जाते हैं, जो अमेदाते पृष्ठत निकले तो संख्यात योजन बाकर [विध्वंसी] लय पा जाते हैं ॥

(११) मापा के मेदाते पृष्ठत निकले । वो ५ प्रकार से (१) लण्डा मेद-परवर, लोहा, काट आदि के दुकड़े वद (२) परवर मेद-अवरत के दुकड़े (३) चूर्ण मेद-धान्य कठोल वद (४) अगुनदिया मेद-जलाव की सूती मिट्टी वद (५) उक्किया मेद-कठोल आदि की फर्तीया फटने के समान इन पांचों का अन्त बहुत-सब से कम उक्किया, उनसे अरुदिया अन्त गुला, उनसे चूर्ण अन्त गुला, उनसे परवर अन्त गुला, उनसे लण्डा-मेद मेदाते पृष्ठत अन्त गुला ।

(१२) मापा पृष्ठत की स्थिति ३० अं० ६० की

(१३) मापा का आन्तरा ३० अं० ६०; अन्त का (वनस्पति में जाने ४) ।

(१४) मापा पृष्ठत का पा सो ५ से ग्रहण किये जाते हैं ।

(१५) मापा पृष्ठत वचन योग में छोड़े जाते हैं ।

(१६) काग्य-मेद और अन्तराव कर्म के द्योत-

कर्म और वचन दान में मन्त्र और व्यस्य ४ मापा होती जाती है । आन्तराव और मेदकर्म के उदय में और वचन योग में अन्त और मन्त्र मापा होती जाती है ।

और संपूर्ण या निश्चय सत्य न होवे तो उसे व्यवहार
भाषा जानना ।

२१ अन्तःपटुत्व-सर्व से कम मन्त्र मापक, उनसे
मिथ मापक असंख्यात गुणा, उनसे असत्य मापक असं-
ख्यात गुणा, उनसे व्यवहार मापक असंख्यात गुणा और
उनसे अमापक (सिद्ध तथः एकाद्रिप) अनन्त गुणा ।

॥ इति भाषा पद सम्पूर्ण ॥



के ६ बालों का बन्ध करे ($२५ \times ६ = १५०$), ऐसे ही अनेक जीव बन्ध करे । $१५० + १५० = ३००$, ३०० निद्रस और ३०० निकांचित बन्ध दाने । एवं ६०० भागा (प्रकार) नाम कर्म के साथ, ६०० गोत्र कर्म के साथ और ६०० नाम गोत्र के साथ (एकट्ठा साथ लगाने से आयुष्य कर्म के १८०० भांगे हुवे) ।

जीव जाति निद्रस आयुष्य बान्धते हैं, गाय जैसे पानी को खेचकर पीने जैसे ही वे आकर्षित करते हैं, कितने आकर्षण से पुद्गत ग्रहण करते हैं । उस समय १-२-३ उत्कृष्ट ८ कर्म खेचते हैं उसका अन्त बहुत्व सर्व से कर्म ८ कर्म का आकर्षण करने वाले जीव, उनसे ७ कर्म का आकर्षण करने वाले जीव संख्यात गुणा, उनसे ६ कर्म का आकर्षण करने वाले जीव संख्यात गुणा, उनसे ५-४-३ २ और १ कर्म का आकर्षण करने वाले जीव क्रमशः संख्यात संख्यात गुणा ।

जैसे जति नाम निद्रस का समुच्चय जीव अपेक्षा अल्प बहुत्व बताया है वैसे ही गति आदि ६ बालों का अल्प बहुत्व २४ दण्डक पर होता है । एवं १५० का अल्प बहुत्व यावन् ऊपर के १८०० भागों का अल्प बहुत्व कर लेवे ।

॥ इति आयुष्य के १८०० भागा सम्पूर्ण ॥

❀ सोपक्रम-निरुपक्रम ❀

(श्री भगवती जी सूत्र शतक २० उद्देशा)

सोपक्रम आयुष्य ७ कारण से दृष्ट सक्ता है-१ जल से २ अग्नि से ३ विप से ४ शस्त्र से ५ अति-हर्ष ६ शोक-से ७ भय से (बहुत चलना बहुत खाना, मैथुन का सेवन करना आदि वाय से) ।

निरुपक्रम आयुष्य बन्वा हुआ पूरा आयुष्य भोगने की च में दृष्ट नहीं जीव दोनों प्रकार के आयुष्य वाले होते हैं ।

१ नारकी, देवता, युगल मनुष्य, तीर्थर, चक्रवर्ती, वासुदेव, प्रति वासुदेव, बलदेव इन के आयुष्य निरुपक्रमी होते हैं शेष सर्व जीवों के दोनों प्रकार का प्रायुष्य होता है ।

२ नारकी सोपक्रम (स्वइप्ते शस्त्रादि से) से उपजे, पर उपक्रम से तथा बिना उपक्रम से ? तीनों प्रकार से । तात्पर्य कि मनुष्य निर्यच पने जीव नरक का आयुष्य बाध होने का मग्न समय आने हथों में दूसरों के हाथों में अथवा आयुष्य पूर्ण होने के बाद मरे, एवं २४ दण्डक जानना ।

३ नेत्रिये नरक में निकले तो स्वोपक्रम से परोपक्रम से तथा उपक्रम से ? बिना उपक्रम से, एवं ? देवता

* हियमाण-वृद्धमाण *

श्री भगवती सूत्र, शतक ५ उ० =

(१) जीव हियमान (घटना) है या वर्द्धमान (वृद्धता) ? न तो हियमान है और न वर्द्धमान परन्तु अवस्थित (वध-घट विना जैसे का तैसा रहे) है ।

(२) नेरिया हियमान, वर्द्धमान और, अवस्थित भी हैं एवं २४ दण्डक, सिद्ध भगवान वर्द्धमान और अवस्थित हैं ।

(३) समुच्चय जीव अवस्थित रहे तो शाश्वता नेरिया हियमान, वर्द्धमान रहे तो ज० १ समय उ० आदितिका के असंख्यातवें भाग और अवस्थित रहे तो विरह काल से दुगुणा (देखो विरह पद का थोकड़ा) एवं २४ दण्डक में अवस्थित काल विरह काल से दूना, परन्तु ५ स्थावर में अवस्थित काल हियमान वृद्ध जानना । सिद्धों में वर्द्धमान ज० १ समय, उ० = समय और अवस्थित काल ज० १ समय उच्छृष्ट ६ माह ।

॥ इति हियमाय वृद्धमाण सम्पूर्ण ॥

❀ सावचया सोवचया ❀

(श्री भगवती सूत्र, शतक ५, उ० ८)

१ सावचया [वृद्धि] २ सोवचया [हानि] ३ सावचया सोवचया [वृद्धि-हानि] और ४ निरुवचया [न तो वृद्धि और न हानि] इन चार मार्गों पर प्रत्येक समुच्चय जीवों में चौथा मांगा पावे, शेष तीन नहीं. २४ दण्डक में चार ही मांगा पावे । सिद्ध में मांगा २ (सावचया-और निरुवचया-निरवचया) .

समुच्चय जीवों में जो निरुवचया-निरवचया है वो सर्वार्थ है । और नारकी में निरुवचया-निरवचया सिवाय तीन मार्गों की स्थिति ज० १ समय की उ० आवास्तिका के असंख्यात भाग की तथा निरुवचया-निरवचया की स्थिति विरह द्वार वत्, परन्तु पांच स्थावर में निरुवचया-निरवचया भी ज० १ समय, उ० आवास्तिका के असंख्यातवें भाग सिद्ध में सावचया ज० १ समय उ० ८ समय की और निरुवचया-निरवचया की ज० १ समय की उ० ६ माह की स्थिति जानना ।

नोट — पांच स्थावर में अवस्थित काल तथा निरुवचया निरवचया काल आवास्तिका ये असंख्यातवें भाग कहीं दूर है यह परकायापेक्षा है । स्वकाय का विरह नहीं पड़ता ।

॥ इति सावचया सोवचया सम्पूर्ण ॥

❧ क्रतु संचय ❧

(श्री भगवती सूत्र, शतक २०, उद्देशा १०)

(१) क्रतु संचय-जो एक समय में दो जीवों से संख्याता जीव उत्पन्न होते हैं ।

(२) अक्रतु संचय-जो एक समय में असंख्याता अनन्ता जीव उत्पन्न होते हैं

(३) अवकतव्य संचय-एक समय में एक जीव उत्पन्न होता है ।

१ नारकी (७), १० मवन पति, ३ विकलेन्द्रिय, १ विषैव पंचेन्द्रिय, १ मनुष्य, १ व्यंतर, १ ज्योतिषी और १ वैमानिक एवं १६ दण्डक में तीनों ही प्रकार के संचय ।

पृथ्वी वायु आदि ५ स्थावा में अक्रतु संचय होता है । शेष दो संचय नहीं होते कारण समय समय असंख्य जीव उपजते हैं । यदि किसी स्थान पर १-२-३ आदि संख्याता रहे हों तो वो परकायापेक्षा समझना ।

सिद्ध क्रतु संचय तथा अवकतव्य संचय है, अक्रतु संचय नहीं ।

अल्प बहुत्व

नारकी में सर्व से कम अवकतव्य संचय इनमें क्रतु संचय संख्यात गुणा इनमें अक्रतु संचय असंख्य न गुणा एवं १६ दण्डक का अन्तर बहुत ज्ञानना

५ स्थावर में कन्व बहुत नहीं ।

सिद्ध में सर्व से कम कृत संचय, उनसे अवश्य
संचय संख्यात गुणा ।

॥ इति कृत संचय संपूर्ण ॥



ॐ द्रव्य-(जीवा जीव) ॐ

(श्री भगवद्गीता सूत्र, शनक २१ उ० २)

द्रव्य दो प्रकार का है-जीव द्रव्य और अजीव द्रव्य ।

क्या जीव द्रव्य भेदवादा, अनन्दवादा तथा अनन्ता है ? अनन्ता है कारण कि जीव अनन्त है ।

अजीव द्रव्य भेदवादा, अनन्दवादा तथा क्या अनन्ता है ? अनन्त है । कारण कि अजीव द्रव्य पाँच है-धर्मणि काय अघर्मेणि काय, अभेदवादा प्रदेश है आकाश और पृथ्वी के अनन्त प्रदेश हैं । और काल वर्तमान एक समय है भूतविश्राया अनन्त समय है इत्य कारण अजीव द्रव्य अनन्ता है ।

प्र०-जीव द्रव्य, अजीव द्रव्य के काम में आते हैं कि अजीव द्रव्य जीव द्रव्य के काम में आते हैं !

उ०-जीव द्रव्य अजीव द्रव्य के काम में नहीं आते, परन्तु अजीव द्रव्य जीव द्रव्य के काम में आते हैं । कारण कि-जीव अजीव द्रव्य को ग्रहण करके १४ बातें उत्पन्न करते हैं यथा-१ आहारिक २ वैश्विक ३ आहारिक ४ नेत्र ५ कर्मात्मा अर्थात्, ६ इन्द्रिय, ११ मन, १२ वचन, १३ काया और १४ आत्मा आदि ।

हैं कि नेरिये के अजीव द्रव्य काम आते हैं ?

उ०—अजीव द्रव्य के नेरिये काम नहीं आते, परन्तु नेरिये के अजीव द्रव्य काम आते हैं । अजीव का प्रहस करके नेरिये १२ बोल उत्पन्न करते हैं ।

(३ शरीर, इन्द्रिय, मन, वचन और आसोआस)

देवता के १३ दण्डक के प्रश्नोत्तर भी नारकीव (१२ बोल उपजावे)

चार स्थावर के जीव ६ बोल (३ शरीर स्पर्शेन्द्रिय काय और आसोआस) उपजावे वायु काय के जीव ७ बोल ऊार के ६ और वैक्रिय) उपजावे ।

पेन्द्रिय जीव ८ बोल उपजावे (३ शरीर, २ इन्द्रिय, २ योग, आसो आस ।)

त्रि-इन्द्रिय जीव ९ बोल उपजावे (३ शरीर, ३ इन्द्रिय २ योग, आसो आस) ।

चौरिन्द्रिय जीव १० बोल उपजावे (३ शरीर, ४ इन्द्रिय २ योग, आसो आस) ।

तिर्यक् पंचेन्द्रिय १३ बोल उपजावे (४ शरीर, ५ इन्द्रिय, ३ योग, आसो आस ।)

मनुष्य सम्पूर्ण १४ बोल उपजावे ।

॥ इति द्रव्य-जीवाजीव सम्पूर्ण ॥

❧ संस्थान-द्वार ❧

(श्री भगवद्गोपी भूष, शतक २५ उद्देशा ३)

संस्थान=प्राकृति इसके दो भेद १ जीव संस्थान और २ अजीव संस्थान जीव संस्थान के ६ भेद—
१ समचौरस २ सादि ३ निग्रोध परिमण्डल ४ वामन ५ कुञ्जक ६ हुंड संस्थान । अजीव संस्थान के ६ भेद—
१ परिमंडल (चूड़ी के समान गोल) २ वट्ट (लड्डू समान गोल) ३ त्रंस (त्रिकोन) ४ चौरस (चौरस) ५ आयतन (लकड़ी समान लम्बा) ६ अनवस्थित (इन पाँचों से विपरीत) ।

परिमण्डल आदि छः ही संस्थानों के द्रव्य अनन्त हैं संख्याता या असंख्याता या असंख्याता नहीं ।

इन संस्थानों के प्रदेश भी अनन्त हैं, संख्याता असंख्याता नहीं ।

६ संस्थानों का द्रव्यापेक्षा अल्प बहुत्व

मर्थ में कम परिमंडल संस्थान के द्रव्य । उनमें वट्ट के द्रव्य संस्थान गुणा उनमें चौरस के द्रव्य संस्थान गुणा उनमें त्रंस के द्रव्य संस्थान गुणा उनमें आयतन के द्रव्य संस्थान गुणा, उनमें अनवस्थित के द्रव्य असंख्यात गुणा ।

प्रदेशापेक्षा अल्प बहुत्व भी द्रव्यापेक्षावत्
जानना ।

द्रव्य-प्रदेशापेक्षा का एक साथ अल्प बहुत्व

सर्व में कम परिमंडल द्रव्य, उनसे बड़े द्रव्य संख्यात
गुणी उनमें चौरस द्रव्य संख्यात गुणा उनमें प्रेम द्रव्य "

" " आयतन " " " " अनवस्थित "

अमं, गुणा, " परिमंडल प्रदेश अमंख्यात " बड़े प्रदेश

मं० " " चौरस " संख्यात " प्रेम "

" " " आयतन " " " अनवस्थित

अमंख्यात गुणा ।

॥ इति संस्थान द्वार गम्यते ॥



१ अपर्याप्ता एवं ३ देवी के) सर्व से कम ऊर्ध्व लोक में उनसे ऊर्ध्व तीर्थ लोक में असंख्यात गुणा, उनसे लोक में संख्यात गुणा उनसे अधो-तीर्थ लोक में अपर्याप्ता गुणा उनसे तीर्थ लोक में असंख्यात गुणा उनसे तीर्थ लोक में असंख्यात गुणा ।

४ बाल (त्रिपेक्षणी, समुच्चय देव, समुच्चय पंचेन्द्रिय, के पर्याप्ता) का अन्तर बहुत्वं सर्व से कम लोक में उनसे ऊर्ध्व-तीर्थ लोक में असंख्यात गुणा तीनों लोक में संख्यात गुणा उनसे अधो-तीर्थ लोक में संख्यात गुणा उनसे अधो लोक में संख्यात गुणा तीर्थ लोक में ३ बाल संख्यात गुणा और पंचेन्द्रिय पर्याप्ता असंख्यात गुणा ।

एवं तीन मनुष्यनी के) बाल-उर्ध्व से कम तीनों लोक में उनसे ऊर्ध्व-तीर्थ लोक में मनुष्य असंख्यात गुणा मनुष्यनी संख्यात गुणा उनसे अधो-तीर्थ लोक में संख्यात गुणा उनसे ऊर्ध्व लोक में संख्यात गुणा उनसे अधो लोक में संख्यात गुणा उनसे तीर्थ लोक में संख्यात गुणा ।

६ बाल-व्यन्तर के (समु० व्यन्तर देव पर्याप्ता एवं ३ देवी के) बाल-मर्ब से कम ऊर्ध्व लोक में, उनसे ऊर्ध्व तीर्थ लोक में अपर्याप्त गुणा उनसे तीर्थ लोक में संख्यात गुणा उनसे अधो-तीर्थ लोक में अपर्याप्त गुणा उनसे अधो लोक में संख्यात गुणा तीर्थ लोक में संख्यात गुणा ।

पुद्गल क्षेत्रापेक्षा

सर्व से कम तीन लोक में उनसे ऊर्ध्व-तीर्क्ष लोक में अनंत गुणा उनसे अधो-तीर्क्ष लोक में विशेष लोक में उनसे तीर्क्ष " " असं० उन से ऊर्ध्व लोक में असं० गुणा उन से अधो लोक में विशेष ।

द्रव्य क्षेत्रापेक्षा

सर्व से कम तीन लोक में उनसे ऊर्ध्व-तीर्क्ष लोक में अनंत गुणा उनसे अधो तीर्क्ष लोक में विशेष उनसे ऊर्ध्व लोक में अनंत गुणा उन से अधो तीर्क्ष लोक में अनंत गुणा उनसे ऊर्ध्व तीर्क्ष लोक में अनंत गुणा ।

पुद्गल दिशापेक्षा

सर्व से कम ऊर्ध्व दिशा में उनसे अधो दिशा में विशेष उनसे ईशान नैऋत्य कोन में असं० गुणा उनमें अग्नि कायव्य कोन में विशेष उनसे पूर्व दिशा में असं० गुणा उनसे पश्चिम दिशा में विशेष । उनसे दक्षिण दिशा में विशेष और उनसे उत्तर दिशा में विशेष पुद्गल जानना ।

द्रव्य क्षेत्रापेक्षा

सर्व से कम द्रव्य अधो दिशा में उनसे ऊर्ध्व दिशा में अनन्तगुणा उन से ईशान नैऋत्य कोन में अनन्तगुणा उन में अग्नि वायु कोन में विशेष उन से पूर्व दिशा में अमरुधान गुणा उन में पश्चिम दिशा में विशेष उन में दक्षिण दिशा में विशेष उन में उत्तर दिशा में विशेष ।

॥ इति मन्त्राणु चार मन्त्राणु ॥

२१	॥ ७ ॥ ७ ॥ ७ ॥	पर्याप्ता	॥ ७ ॥ ७ ॥ ७ ॥
२७	दादर वा.	॥ ७ ॥ ७ ॥ ७ ॥	ज. ॥ ७ ॥ ७ ॥ ७ ॥
२८	॥ ७ ॥ ७ ॥ ७ ॥	अवप्राप्ता.	उ. ॥ ७ ॥ ७ ॥ ७ ॥
२९	॥ ७ ॥ ७ ॥ ७ ॥	पर्याप्ता	उ. ॥ ७ ॥ ७ ॥ ७ ॥
३०	॥ ७ ॥ ७ ॥ ७ ॥	॥ ७ ॥ ७ ॥ ७ ॥	ज. ॥ ७ ॥ ७ ॥ ७ ॥
३१	॥ ७ ॥ ७ ॥ ७ ॥	अवप्रा.	उ. ॥ ७ ॥ ७ ॥ ७ ॥
३२	॥ ७ ॥ ७ ॥ ७ ॥	पर्या.	॥ ७ ॥ ७ ॥ ७ ॥
३३	॥ ७ ॥ ७ ॥ ७ ॥	अव	ज. ॥ ७ ॥ ७ ॥ ७ ॥
३४	॥ ७ ॥ ७ ॥ ७ ॥	अवप्रा.	उ. ॥ ७ ॥ ७ ॥ ७ ॥
३५	॥ ७ ॥ ७ ॥ ७ ॥	पर्या.	उ. ॥ ७ ॥ ७ ॥ ७ ॥
३६	दादर वा.	॥ ७ ॥ ७ ॥ ७ ॥	ज. ॥ ७ ॥ ७ ॥ ७ ॥
३७	॥ ७ ॥ ७ ॥ ७ ॥	अवप्रा.	उ. ॥ ७ ॥ ७ ॥ ७ ॥
३८	॥ ७ ॥ ७ ॥ ७ ॥	पर्या.	॥ ७ ॥ ७ ॥ ७ ॥
३९	॥ ७ ॥ ७ ॥ ७ ॥	मिमांसा	ज. ॥ ७ ॥ ७ ॥ ७ ॥
४०	॥ ७ ॥ ७ ॥ ७ ॥	अवप्रा.	उ. ॥ ७ ॥ ७ ॥ ७ ॥
४१	॥ ७ ॥ ७ ॥ ७ ॥	पर्या.	॥ ७ ॥ ७ ॥ ७ ॥
४२	प्रत्येक शरीरी कादर वन, पर्या का ज.	॥ ७ ॥ ७ ॥ ७ ॥	ज. ॥ ७ ॥ ७ ॥ ७ ॥
४३	॥ ७ ॥ ७ ॥ ७ ॥	अवप्रा.	उ. ॥ ७ ॥ ७ ॥ ७ ॥
४४	॥ ७ ॥ ७ ॥ ७ ॥	पर्या.	॥ ७ ॥ ७ ॥ ७ ॥

॥ इति अथ ग. दमा अथ वदुष्य ॥



रम प्रदेश है । कारण कि अन्त प्रदेशपेक्षा मध्य का प्रदेश अचरम है ।

रत्नप्रभा के समान ही नीचे के ३६ बोलों की चार चार बोल लगाये जा सकते हैं । ७ नारकी, १२ देव लोक, ६ प्रीयेरक, ४ अनुत्तर विमान, १ निद्ध शिना, १ लोक और १ अलोक एवं $३६ \times ४ = १४४$ बोल होने हैं ।

इन ३६ बोलों की चरम प्रदेश में सारतम्पता है । इसका अर्थ यह है—

रत्न प्रभा के चरमाचरम द्रव्य और प्रदेशों का अर्थ यह है—अर्थ से कम अचरम द्रव्य, उनमें चरम द्रव्य अर्थात् गुणा, उनमें चरमाचरम द्रव्य विशेष, अर्थ से कम चरम प्रदेश, उनमें अचरम प्रदेश अर्थात् गुणा, उनमें चरमाचरम प्रदेश विशेष ।

द्रव्य और प्रदेश का एक साथ अर्थ यह है, गर्व में कम अचरम द्रव्य, उनमें चरम द्रव्य अर्थात् गुणा, उनमें चरमाचरम द्रव्य विशेष, उनमें चरम प्रदेश अर्थात् गुणा, उनमें अचरम प्रदेश अर्थात् गुणा, उनमें चरमाचरम प्रदेश विशेष, इसी प्रकार लोक निराय ३६ बोलों का अर्थ यह है—

अर्थात् यह

३६ ६ अर्थ यह है—अर्थ से कम अचरम द्रव्य, उन

के चरम द्रव्य विशेष, उनसे लोकालोक के चरमाचरम द्रव्य विशेष, उनसे लोक के चरम प्रदेश असंख्य गुणा, उनसे अलोक के चरम प्रदेश विशेष, उनसे अलोक के अचरम प्रदेश असंख्य गुणा, उनसे अलोक के अचरम प्रदेश अनन्त गुणा, नसे लोकालोक के चरमाचरम प्रदेश विशेष ।

एवं ह चोल, सर्व द्रव्य प्रदेश और पर्याय १२ वें लोक का अन्त बहुत्र—

सर्व में कम लोकालोक के चरम द्रव्य, उनसे लोक के चरम द्रव्य असंख्य गुणा, उनसे अलोक के चरम द्रव्य विशेष, उनसे लोकालोक के चरमाचरम द्रव्य विशेष, उनसे लोक के चरम प्रदेश असंख्य गुणा, उनसे अलोक के चरम प्रदेश विशेष, उनसे लोक के अचरम प्रदेश असंख्य गुणा, उनसे अलोक के अचरम प्रदेश अनन्त गुणा, उनसे लोकालोक के चरम चरम प्रदेश विशेष, उनसे सर्व द्रव्य विशेष, उनसे सर्व प्रदेश अनन्त गुणा, उनसे सर्व पर्याय अनन्त गुणा ।

॥ इति चरम पद सम्पूर्ण ॥

५ श्वासोश्वास द्वार-श्वासोश्वास अपेक्षा तत्र
परम भी है, अपरम भी है ।

६ आहार-अपेक्षा यावत् २४ दण्डक के जीव परम
भी है, अपरम भी है ।

७ भाव-(औद्यिक आदि) अपेक्षा यावत् २४
दण्डक के जीव परम भी है, अपरम भी है ।

= से-११ वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श के २० बोध अपेक्षा
यावत् २४ दण्डक के एकैक और अनेक जीव परम
भी है, अपरम भी है ।

॥ इति परमापरम सम्पूर्ण ॥



२ उपयोग, ६ ज्ञान (३ ज्ञान, ३ अज्ञान) ३ दर्शन,
१ असंयम-चारित्र्य, १ वेद ननुमंक एवं २६ बोल ।

(११) १० मवन पति १ व्यन्त एवं ११ दण्डक में
११ बोल पावे-नारकी के २६ बोलों में १ स्त्री वेद और
१ तेजो सेश्या घटाना ।

(३) ज्योतिषी और १-२ देवलोक में २८ बोल;
ऊपर में से ३ अमुम सेश्या घटाना ।

(१०) तिसरे से बारहवें देश लोक तक २७ बोल-
ऊपर में से १ स्त्री वेद घटाना ।

(१) नव श्रियवेक में २६ बोल-ऊपर में से १ मिथ
दृष्टि घटानी ।

(१) पाँच अनुत्तर विमान में २२ बोल । १ दृष्टि
और ३ अज्ञान घटाना ।

(३) पृथ्वी, अप, वनस्पति में १८ बोल । १ गति,
१ इन्द्रिय, ४ कृपाय, ४ सेश्या, १ योग, २ उपयोग,
२ अज्ञान, १ दर्शन, १ चारित्र्य, १ वेद एवं १८ ।

(२) तेज-वायु में १७ बोल-ऊपर में से १ तेजो
सेश्या घटाना ।

(१) चेहन्ड्रिय में २२ बोल-ऊपर के १७ बोलों में
से १ चेहन्ड्रिय १ वचन योग २ ज्ञान, १ दृष्टि एवं
४ बदान में २२ हों ।

❧ वारह प्रकार का तप ❧

(श्री उचचार्इजी सूत्र)

तप १२ प्रकार का है । ६ वास तप (१ अनशन २ उनोदरी ३ वृचिसंचेष ४ रस परित्याग ५ काय बलेश ६ प्रति संसिनता) और ६ आभ्यन्तर तप (१ प्रायश्चित्त २ विनय ३ वैराग्य ४ स्वाध्याय ५ ध्याना ६ काउसग्य ।)

१ अनशन के २ भेद—१ इत्थरीक अल्प का तप २ अवकालिक-जावजीव का तप । इत्थरीक तप के अनेक भेद हैं—एक उपवास, दो उपवास या वर्षी तप (१ वर्ष तक के उपवास) । वर्षी तप प्रथम तीर्थंकर के शासन में हो सकता है । २२ तीर्थंकर के शासन में ८ माह और चरम (अन्तिम) तीर्थंकर के समय में १ माह उपवास करने का सामर्थ्य रहता है ।

अधकालिक—(जावजीव का) अनशन व्रत के २ भेद १ एक भक्त प्रत्याख्यान और २ पादोपगमन प्रत्याख्यान । एक भक्त प्रत्या० के २ भेद—(१) व्याघात उपद्रव आने पर अमुक अवधि तक ४ आहार का पचत्वारंश कर लेने अर्जुनमाली के भय में सुदर्शन शंठ ने किया था । (२) निव्यघात—(उपद्रव रहित) के दो भेद (१) जावजीव तक ४ आहार का त्याग करे (२

मान, अल्प माया, अल्प लोभ, अल्प राग, अल्प
अल्प सोने, अल्प बोले आदि ।

३ वृत्ति संक्षेप (मित्रादरा) के अनेक मे
अनेक प्रकार के अभिग्रह धारण करे । जैसे द्रव्य से
वस्तु ही लेना, अमुक नहीं लेना । क्षेत्र से अमुक घर,
के स्थान में ही लेने का अभिग्रह । काल से अमुक
दिन को य महीने में ही लेने का अभिग्रह । माय में
प्रकार के अभिग्रह करे जैसे वर्तन में से निकालता है
वस्त्र, वर्तन में डालता देवे तो वस्त्र, अन्य को
पीछे फिरोता देवे तो वस्त्र, अमुक वस्त्र आदि पाले
अमुक प्रकार से तथा अमुक माय में देवे तो वस्त्र
अनेक प्रकार के अभिग्रह धारण करे ।

४ रस परित्याग तप के अनेक प्रकार है-
(दूध, दही, घी, गुड़, शकर, तेल, शहद, म
आदि) का त्याग करे । प्रणीत रस (रस भगता
आहार) का त्याग करे, निवि करे, एकामन करे,
विल करे, दुगन्धी वस्तु, विगड़ा हुवा अन्न, लूधा
आदि का आहार करे । इत्यादि रस वाले आह
छोड़े ।

५ काया कलेश तप के अनेक भेद हैं ए
अन वर स्थिति का भेद, उन्नत-गदगद मयुरामन
न अदभुत प्रकाश का भेद आदि कर के

साधु की १२ पडिमा पालना, आतापना लेना वस्त्र रंजित रहना, शीत-उष्णता (तड़का) सहन करना परिपह सहना । धुंक्ना नहीं, कुछा करना नहीं, दान्त धोने नहीं, शरीर की सार संभाल करना नहीं । सुन्दर वस्त्र पहिरना नहीं, बठोर वचन गाली, मार प्रहार सहना, लोचं करना नंगे पैर चलना आदि ।

६ प्रति संलिनता नप के चार भेद—१ इन्द्रिय संलिनता २ कषाय संलिनता, ३ योग संलि० ४ विविध शयनासन संलि० (१) इन्द्रिय संलिनता के ५ भेद— (पांचों इन्द्रियों को अपने २ विषय में राग द्वेष करते रोकना) (२) कषाय संलि० के चार भेद—१ क्रोध घटा कर क्षमा करना । २ मान घटा कर विनीत बनना ३ माया को घटा कर सरलता धारण करना ४ लोभ को घटा कर संतोष धारण करना । (३) योग प्रति संलिनता के तीन भेद—मन, वचन, काया को घुरे कामों से रोक कर सन्मार्ग में प्रवर्तित करना । (४) विविध शयनासन सेवन प्रति संलि० के अनेक भेद हैं—उद्यान चैत्य, देवालय, दुकान, वस्त्रार, शमशान, उपाश्रय आदि स्थानों पर रह कर पाट, पाटले, बाजोट, पाटिये, विद्याने, वस्त्र-पात्रादि फासुक स्थान अंगीकार करके विचरे ।

आभ्यन्तर तप का अधिकार

१ प्रायश्चित्त के १० भेद—१ गुवादि ५

पाप प्रकाशे २ गुरु के बताये हुये दोष और पुनः ये दोष नहीं लगाने की प्रतिज्ञा करे ३ प्रायश्चित्त प्रतिक्रमण करे ४ दोषित वस्तु का त्याग करे ५ दण्ड, वीर, तीर, चालीश लोगस का काउमग्ग करे ६ एकाशन, माधंवे ल यावत् छमाभी तप करावे, (७) ६ छमास तक की दीक्षा घट वे ८ दीक्षा घटा कर सब से छोटा बनावे ९ समुदाय से पाहर रख कर अस्तक पर बैठ कर १० साधु वेप उतरवा कर गृहस्थ वेप में छमाह तक साध फेर कर पुनः दीक्षा देवे ।

२ विनय के भेद—मति ज्ञानी, भुत ज्ञानी अवधि ज्ञानी, मनः पर्येव ज्ञानी, नेवल ज्ञानी आदि की अशावना करे नहीं, इनका बहुधाम करे, इनका गुण कीर्तन कर के लाभ लेना । यह ज्ञान विनय जानना ।

चारित्र्य विनय के ५ भेद—पांच प्रकार के चारित्र्य वालों का विनय करना ।

योग विनय के ६ भेद—मन, वचन, काया ये तीनों प्रशस्त और अप्रशस्त एवं ६ भेद है । अप्रशस्त काय विनय के ७ प्रकार—अव्यत्ना में चले, बोले, खड़ा रहे, बैठे, सोवे, इन्द्रिय म्वनन्त्र रखे, तथा अंगोपांग का दुष्टप्रयोग करे ये सातों अव्यत्ना में करे तो अप्रशस्त विनय । पर्यत्ना पूर्वक प्रवर्तने से प्रशस्त विनय ।

सौंदर्य ध्यान के चार भेद-द्विषा में, अमल
गोरी में, और मोहोदय में आनन्द माने। चार लक्षण
१ जीव द्विषा का २ अमल का ३ गोरी का चोड़ा व
दोह ललाटे ४ मृगु-शरणा पर भी पाव का पधात
नदी को ।

धर्म ध्यान के भेद-चार पाते-१ जिनाना
विचार २ रामदेव उरगति के कारणों का विचार ३ क
विचार का विचार ४ सोह मंस्थान का विचार ।

चार रुचि-१ तीर्थार की आशा आराधन क
की रुचि २ शास्त्र धारण की रुचि ३ तपार्थ भद्रा
रुचि ४ एव सिद्धान्त पढ़ने की रुचि ।

चार अवलम्बन-१ एव सिद्धान्त की वाचना ले
व देना २ प्रस्तादि पूछना ३ पढ़े हुये ज्ञान की को
४ धर्म कथा करना चार अनुपेक्षा-१ पुद्गल को अनिर
नाशयन्त लाने २ संसार में कोई किसी को शरण दे
वाला नहीं ऐसा चिंतवे ४ मैं अकेला हूं ऐसा सो
४ संसार स्वरूप विचारे एवं धर्म ध्यान के १६ भेद हुये

सुफल ध्यान के १६ भेद-१ पदार्थों में द्रव्य गु
पर्याय का विविध प्रकार से विचार को २ एक पुद्गल क
उन्मादादि विचार बदले नहीं ३ सूक्ष्म ईर्ष्याविहि क्रिय
परन्तु अकषायी होने में रुध न पड़े ४ सर्व क्रिय



अवश्य पढ़िये

ज्ञान शुद्धि के लिए पुस्तकें मंगवा कर वितरस कीजिये.

भगवान् महावीर सजिहद २॥)
 (बही सादर के १२० पृष्ठ)
 आदर्श मुनि हिंदी ॥ शुभराती ॥)
 जैन सुबोध गुरुका ॥)
 उमकितसार ॥) जैनू चरित्र - ॥)
 निर्मल प्रवचन सजिहद ॥ गूल ॥
 इक्षोषणा ॥) मोहनमाला ॥-)
 महावीर स्तोत्र सार्थ ॥-)
 दुष्प्रसाधन ॥) घमोपदेश ॥ ॥
 इक्षुपुर में अपूर्व उपकार ॥)
 ज्ञानाभयवन सजिहद ॥)
 भगवत्संका निर्याय सजिहद ॥)
 महाभक्त मलिया चरित्र ॥-)
 त्या. की प्राचीनता सिद्धि ॥)
 भ्याक्यान मेष्ठिरम मा ॥)
 भग. महावीर का दिव्यसंदेश ॥)
 भनोहर माला ॥) द्वि० भग ॥,
 आदर्श सार्थ ॥) पार्थनापत्र ॥)
 पुनर्विद्या की प्रा. सिद्धि ॥
 भीतकनकाच सार्थ ॥) मूल ॥)
 वेदका संमह मा. १-२) २-१)
 १-११ ४-१) कटारों १) म.
 वे. देश मकरमाका २॥
 वे. देश मकरमाका २॥

जैनस्तवन बाटिका २३)
 मद्रोप प्रणीत ॥, तनय विवेचना
 जैन सुबोध बहार भा. १ २)
 जैन मकर मद्रोप २॥
 मद्रोपजन गुरुका २) मद्रोप २)
 सुभाषक आराधनी २)
 अष्टदश पापनिषेध ॥, मूल ॥)
 अम निरुद्धन ॥) सुभाषनाप २)
 मद्रोप मद्रोप चरित्र २, ॥)
 धर्मबुद्धि चरित्र २)
 भुवनायक कामदेवजी २, ॥)
 काम्य विलास २)
 सामाजिक सुख २)
 भक्तमरदि स्तोत्र २-१)
 जैन मनमें इन भाषा २)
 लघु जैनम गुरुका २)
 स. वि. प्रतिकमा २)
 मोक्षियों की रागपूति २)
 अदेशी चरित्र ॥) मेरी भाषना ॥
 नवरात्रपुस्तिका - विवेक बुद्धि २)
 गुरुदेव की भाषा २)
 सर्वगोपनम् २) पूनराग ॥
 मद्रोप २) सुवनमाका २)
 मद्रोप २) इन मद्रोप २)

ता:-भोजनोदय पुस्तक प्रकाशक समिति, रायलास

